द नागा स्टोरी

(उपन्यास)

सुमन बाजपेयी

द नागा स्टोरी

सुमन बाजपेयी

प्रभात
प्रकाशन

समर्पित है
उन धर्मरक्षक नागा साधुओं को,
जो सदियों से लोक-कल्याण में जुटे हैं
और किसी गुफा या पहाड़ पर
ध्यानमग्न हो साधना करते हैं।

भूमिका

कठिन तपस्या है नागा साधुओं का जीवन

एक रहस्य, एक कौतूहल, एक अचंभा—न जाने कितने प्रश्न उठ खड़े होते हैं, जब बात नागा साधुओं की आती है। देश में जब-जब कुंभ और अर्धकुंभ मेला लगता है, तब-तब नागा साधुओं के दर्शन होते हैं। सदियों से नागा साधुओं को आस्था के साथ-साथ हैरत और रहस्य की दृष्टि से देखा जाता रहा है। इसमें कोई शक नहीं कि आम जनता के लिए ये अचरज का विषय हैं क्योंकि इनकी वेशभूषा, क्रियाकलाप, साधना-विधि आदि सब हैरत में डालने वाली होती है। ये किस पल खुश हो जाएँ और कब नाराज, कोई नहीं बता सकता।

लंबी जटाओं और कपड़ों के नाम पर पूरे शरीर पर भस्म लगाए नग्न रहने वाले इन नागा साधुओं का बाहरी दुनिया से कोई लेना-देना नहीं होता। इनकी जिंदगी कठिनाइयों से भरी होती है, जिसके बारे में आम इनसान कल्पना भी नहीं कर सकता। किसी गुफा में ध्यान लगाए बहुत कठोर व अनुशासित जीवन जीने वाले नागा साधु सुख-दुःख से परे होते हैं।

नागा साधुओं की परंपरा कोई आज की नहीं है, बल्कि हजारों सालों से चली आ रही है। इस परंपरा के चिह्न हमें मोहनजोदड़ो के सिक्कों और तसवीरों में मिलते हैं, जहाँ नागा साधु पशुपति नाथ के रूप में भगवान् शिव की पूजा करते हुए मिलते हैं। कहा जाता है, सिकंदर और उसके सिपाही जब भारत आए थे, तब उनकी मुलाकात नागा साधुओं से हुई थी। यही नहीं, नागा साधुओं की तपस्या और मातृभूमि के प्रति समर्पण से भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर भी काफी प्रभावित थे।

भारतीय सनातन धर्म के वर्तमान स्वरूप की नींव आदिगुरु शंकराचार्य ने रखी थी। शंकर का जन्म आठवीं शताब्दी के मध्य में हुआ था, जब भारतीय जनमानस की दशा और दिशा बहुत बेहतर नहीं थी। भारत की धन-संपदा से खिंचे तमाम आक्रमणकारी यहाँ आ रहे थे। कुछ उसके खजाने को अपने साथ वापस ले गए तो कुछ भारत की दिव्य आभा से ऐसे मोहित हुए कि यहीं बस गए।

सामान्य शांति-व्यवस्था बाधित थी। ईश्वर, धर्म, धर्मशास्त्रों को तर्क, शस्त्र और शास्त्र सभी तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा था। ऐसे में शंकराचार्य ने सनातन धर्म की स्थापना के लिए कई कदम उठाए, जिनमें से एक था—देश के चार कोनों पर चार पीठों का निर्माण करना। आदिगुरु ने मठों-मंदिरों की संपत्ति को लूटने वालों और श्रद्धालुओं को सताने वालों का मुकाबला करने के लिए सनातन धर्म के विभिन्न संप्रदायों की सशस्त्र

शाखाओं के रूप में अखाड़ों की स्थापना की शुरुआत की।

सामाजिक उथल-पुथल के उस युग में आदिगुरु शंकराचार्य को लगने लगा था, केवल आध्यात्मिक शक्ति से ही इन चुनौतियों का मुकाबला करना काफी नहीं है। उन्होंने जोर दिया कि युवा साधु व्यायाम करके अपने शरीर को सुदृढ़ बनाएँ और हथियार चलाने में भी कुशलता हासिल करें। ऐसे मठ बने, जहाँ इस तरह के व्यायाम या शस्त्र संचालन का अभ्यास कराया जाता था, जिन्हें कालांतर में 'अखाड़ा' कहा जाने लगा। शंकराचार्य ने अखाड़ों को सुझाव दिया कि मठ, मंदिरों और श्रद्धालुओं की रक्षा के लिए जरूरत पड़ने पर शक्ति का प्रयोग करें। इस तरह बाह्य आक्रमणों के उस दौर में इन अखाड़ों ने एक सुरक्षा-कवच का काम किया।

कई बार स्थानीय राजा-महाराज विदेशी आक्रमण की स्थिति में नागा योद्धा साधुओं का सहयोग लिया करते थे। इतिहास में ऐसे कई गौरवपूर्ण युद्धों का वर्णन मिलता है, जिनमें चालीस हजार से ज्यादा नागा योद्धाओं ने हिस्सा लिया। वे 'धर्मरक्षक योद्धा' कहलाए।

भारत की आजादी के बाद इन अखाड़ों ने अपना सैन्य चरित्र त्याग दिया। आसान नहीं है इनका जीवन, लेकिन फिर भी इनके प्रति भ्रामक धारणाएँ हैं। समाज में। लोग नहीं जानते कि जब-जब धर्म पर संकट आया, तब-तब इन्होंने योद्धा बन इसकी रक्षा की। शास्त्र रख शस्त्र उठाए। कठिन तपस्या करके जब ये नागा साधु बनते हैं तो अपना पूरा जीवन धर्म की रक्षा व लोगों के कल्याण में लगा देते हैं।

इस पुस्तक में नागा साधुओं के जीवन और योद्धा रूप को रोचक ढंग से ढालने की मैंने पुरजोर कोशिश की है। इनके योगदान को रेखांकित किया है, ताकि समझ सकें कि ये सम्मान करने योग्य हैं। आशा है, इस पुस्तक को पढ़ने के बाद उनके प्रति लोगों की धारणा अवश्य बदलेगी और इतिहास की किताबों में इनका नाम भी दर्ज किया जाएगा।

—सुमन बाजपेयी

मो. 9810795705

प्रस्तावना

वे बेतहाशा भाग रहे थे, उनके कदमों में एक गति थी, जो उनके आक्रोश की द्योतक थी। वे दौड़ रहे थे...उनके मुँह से भयानक आवाजें निकल रही थीं मानो मन में कोई दृढ़ संकल्प लेकर दौड़ रहे हों कि आज तो विनाश होने नहीं देंगे। हर-हर महादेव का जयघोष चारों ओर सुनाई दे रहा था। उनके चेहरे पर बड़ी-बड़ी उलझी हुई दाढ़ी थी, बाल जटाजूट थे...आँखें लाल थीं। बाजुओं और गले में रुद्राक्ष की माला। कमर और गले में गेंदे के फूलों की माला, आँखों में काजल, माथे पर रोली और चंदन का लेप, हाथों में चिमटा, त्रिशूल, डमरू या किसी-किसी के हाथ में कमंडल भी था।

तन पर कपड़ों का कोई नामोनिशान नहीं था। वस्त्र के नाम पर केवल एक लँगोट थी। शरीर पर भस्म लपेटे, एक नहीं, दो नहीं, अनगिनत नागा साधु एक दिशा की ओर दौड़ रहे थे। देखकर लग रहा था मानो समुद्र में उठती तेज लहरों के बीच उठा-पठक हो रही हो—प्रवाह था ही इतना तीव्र कि प्रचंडता का अनुभव हो रहा था। भस्म को अपना आवरण बना अर्धनग्न साधु आखिर 'हर-हर महादेव' का जयघोष करते हुए कहाँ दौड़ रहे थे?

ऐसा नजारा था जो दिल दहला जाए। मन में असंख्य विचार शोर मचा रहे थे, यह सब क्या हो रहा है! डराने वाला दृश्य था।

नागा साधुओं का हमारे देश में, हमारी संस्कृति में, हमारी परंपराओं में क्या योगदान है, इससे लोग अनभिज्ञ हैं और उनके विचित्र रूप को देख वे उनके बारे में धारणाएँ बनाते हैं। लेकिन नागा साधु परम सत्य हैं, उनसे बड़ा सत्य इस ब्रह्मांड में कोई नहीं है।

वे सत्य हैं, आत्मा रूप हैं और आत्मा के ऊपर वस्त्र नहीं होता है। उनका शरीर ही वस्त्र है, क्योंकि वे आत्मा हैं। इसलिए वे वस्त्र नहीं पहनते हैं। उनका आत्मारूपी शरीर ही वस्त्र का काम करता है। लोग नागाओं को समझ नहीं पाते, वे अपने शरीर पर धूल-मिट्टी लपेटते हैं, रुद्राक्ष धारण करते हैं। वे जो भस्म लगाते हैं, वह मुर्दे की होती है और अगर वह न मिले तो हवन की भभूत लगाते हैं, क्योंकि उसमें भी आहुति दी जाती है।

जो नागा बनता है वह इस संसार से मुक्त हो जाता है। संसार में रहते हुए भी वह संसार का हिस्सा नहीं होता। नागा को शिव का अवतार माना गया है।

नागा साधु कभी भी दिन में नहीं चलते, क्योंकि समाज उन्हें स्वीकार और समझ नहीं पाता है। फिर भी नागा साधुओं को देखकर सभी के मन में उनके बारे में जिज्ञासा का जन्म अवश्य होता है। अपने श्रृंगार से महिलाओं को भी मात देते ये नागा साधु जब महाकुंभ के समय लाखों की संख्या में नजर आते हैं तो इनके बारे में अधिक-से-अधिक जानने का खयाल हम सभी के मन में एक न एक बार जरूर आता है। कुंभ के दौरान ये साधु अचानक रहस्यवाद का प्रतीक बन जाते हैं। परंपरागत रूप से नागा साधु का जीवन ध्यान, तपस्या

और त्याग में से एक है और केवल कुंभ के दौरान ही वे सार्वजनिक रूप से सामने आते हैं।

नाचते-गाते, उछलते-कूदते, डमरू-डफली बजाते, त्रिशूल-चिमटा उठाए नागा साधुओं का जीवन आज भी जब इतनी प्रगति हो चुकी है, इनसान के लिए एक अनसुलझा रहस्य है, क्योंकि वे शायद स्वयं ही नहीं चाहते कि उनके जीवन के बारे में लोग अधिक जानें।

अनुक्रम

भूमिका : कठिन तपस्या है नागा साधुओं का जीवन
प्रस्तावना

1. एकांत दुनिया में कदम
2. मुलाकात
3. नागा साधु बनने की प्रक्रिया
4. भिक्षा प्राप्ति
5. भस्म और तप
6. कीरत की डायरी
7. टूटा सिकंदर का दर्प
8. सवाल-जवाब
9. इतिहास ज्ञाता प्रोफेसर वाचस्पति
10. अखाड़ों की भूमिका
11. अब्दाली के आक्रमण
12. पन्नों पर नहीं दर्ज बलिदान
13. मुगलों के खिलाफ जंग
14. विश्वनाथ मंदिर की रक्षा
15. कम नहीं किए संघर्ष
16. नागा साध्वी
17. महंत से भेंट
18. श्मशान की राख
19. मोक्ष प्राप्ति लक्ष्य
20. कुंभ की महिमा
21. सम्मान योग्य हैं जटाधारी

1

एकांत दुनिया में कदम

"क्या सोचकर यहाँ आए हो? युवा हो इसीलिए शायद किसी रोमांच की तलाश में भटकते-भटकते यहाँ पहुँच गए हो! लौट जाओ तुरंत। यह दुनिया तुम्हारे लिए नहीं है और अपनी दुनिया में किसी का प्रवेश हमें स्वीकार नहीं है," एक जोरदार स्वर गूँजा।

वे इस समय एक गुफा के अंदर खड़े थे, जहाँ अँधेरा होने के कारण पहले तो उनके लिए यह समझ पाना मुश्किल था कि यह आवाज कहाँ से आई है और किसकी है। फिर आँखें थोड़ी-थोड़ी अभ्यस्त हुईं। क्षीण प्रकाश की एक धारा-सी फूटती लगी। शायद किसी छिद्र में से वह रोशनी भीतर प्रवेश कर रही थी। पाँव के नीचे खुरदरापन महसूस हुआ। कहीं-कहीं फिसलन भी थी, जिससे चलते-चलते पाँव लड़खड़ा जाते थे। दीवारों पर पत्थरों के ढाँचे अद्भुत और विचित्र आकृतियाँ बनाते प्रतीत हो रहे थे। कभी वे कलात्मक लगतीं तो कभी डरावनी। कहीं शेषनाग के फनों की तरह उभरी संरचना पत्थरों पर नजर आ रही थी। मन में सवाल ने दस्तक दी तो क्या धरती इसी पर टिकी है?

वे धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे थे, ताकि आवाज की दिशा तक पहुँच सकें। कभी-कभी पाँव के नीचे इतनी सख्त और कड़-कड़ की आवाज आती कि प्रतीत होता कि जैसे वे किसी की हिड्डयों पर चल रहे हैं। सामने की दीवार पर काल भैरव की जीभ की आकृति दिखाई दी। कुछ आगे मुड़ी गरदनवाला गरुड़ एक कुंड के ऊपर बैठा दिखा। तो क्या यहाँ शिव तपस्या किया करते थे? उन्हें आश्चर्य तो इस बात का हो रहा था कि जमीन के इतने अंदर होने के बावजूद गुफा में घुटन नहीं महसूस हो रही थी, बल्कि एक अभूतपूर्व शांति का अहसास हो रहा था।

उन्होंने बहुत कुछ सुना था इस स्थान के बारे में, तभी तो यह जानते हुए भी यहाँ पहुँचना आसान नहीं होगा, वे हिम्मत जुटाकर चले आए थे। रास्ते की कठिनाइयों की परवाह किए बगैर वे चले आए थे। सही कहते हैं जिज्ञासा व कौतूहल इनसान को ऐसे वश में कर लेता है कि वह फिर परिणामों से भयभीत नहीं होता है। उन्होंने सुना था कि इसी गुफा में गणेशजी का कटा हुआ सिर रखा हुआ है और शेषनाग जैसी प्रतिमाएँ भी यहाँ देखने को मिलती हैं। भगवान् शिव यहाँ बसते हैं, उन्होंने लोगों से कहते सुना था।

"वापस चलें क्या? वैसे भी तुम यहाँ फोटो नहीं खींच पाओगे। बहुत अँधेरा है," लड़की ने युवक से कहा, जिसके कंधे पर कैमरा लटक रहा था।

"तुम भी कुछ लिख नहीं पाओगी बिना रोशनी के। लगता है तुम्हारी डायरी के पन्ने कोरे ही रह जाएँगे," वह धीमे से हँसता हुआ फुसफुसाया, "वैसे तुम्हारा अब तक का अध्ययन इस जगह के बारे में क्या कहता है?"

लड़की के होंठों पर एक मुसकान थिरकी। उसने हाथ में डायरी पकड़ी हुई थी, जिस पर नीले कपड़े का कवर था और पन्नों के बीच रखा पेन थोड़ा बाहर झाँक रहा था।

आवाज किस दिशा से आई थी, यह जानने में असफल वे दोनों वहीं दीवार की टेक लगाकर खड़े हो गए। दरअसल वे दुविधा में थे कि आगे बढ़ें या लौट जाएँ! भयविहीन होकर जिस दृढ़ता से वे यहाँ आए थे, पल भर को वह डिगी थी।

"इतनी दूर, वह भी तमाम कठिनाइयों का सामना करने के बाद लौटना सही नहीं होगा। अपने श्रम को निष्फल होने देना क्या उचित होगा? जब तक आँखें अँधेरे की ओर अभ्यस्त न हो जाएँ, यहीं ठहरना ठीक है। कुछ नहीं होगा, मैं तुम्हारे साथ हूँ," युवक ने उस लड़की को आश्वस्त किया।

"लेकिन जिस आवाज ने यहाँ से चले जाने का आदेश दिया है, उन्हें कैसे पता लगा कि हम युवा हैं? क्या वे हमें देख सकते हैं? हमें क्यों नहीं कोई दिख रहा है? सचमुच किसी रहस्यमयी दुनिया में तो हम नहीं आ गए हैं?" लड़की बोली और युवक के हाथ को मजबूती से थाम लिया।

"रहस्यों की खोज करना ही तो तुम्हारा विषय है। फिर कैसा घबराना? तुमको तो बहुत जानकारी है। बताओ कुछ यहाँ के बारे में," युवक ने लड़की का ध्यान बँटाने के खयाल से कहा।

"मैं पूरे विश्वास से तो नहीं कह सकती कि यह वही गुफा है, जिसके बारे में मैंने पढ़ा है, लेकिन काफी हद तक लगती वही है। पुराणों के अनुसार, त्रेता युग में इस रहस्यमयी गुफा की खोज राजा ऋतुपर्ण ने की थी, जिसके बाद उन्हें यहाँ नागों के राजा अधिशेष मिले थे। राजा अधिशेष राजा ऋतुपर्ण को गुफा के अंदर ले गए, जहाँ उन्होंने सभी देवी-देवता और भगवान् शिव के दर्शन किए। कहा तो यह भी जाता है कि इनसान द्वारा इसकी खोज करने वाले राजा ऋतुपर्ण पहले व्यक्ति थे। त्रेता युग के बाद इस गुफा का उल्लेख द्वापर युग में मिला जब पांडवों द्वारा इस गुफा को फिर से वापस ढूँढ़ लिया गया था और वे यहाँ रहकर भगवान् शिव की पूजा करते थे। पौराणिक कथाओं के मुताबिक कलियुग में इसकी खोज आदि शंकराचार्य ने आठवीं सदी में की थी। तब भी यहाँ तप करते थे साधु...रहने लायक स्थान बना लिया था जैसे उसे..."

"अभी तक गए नहीं?" फिर से वही स्वर गूँजा। इस बार स्वर में ज्वाला सी निकली थी जैसे। "क्यों आए हो यहाँ?"

स्वर की गर्जना से पल भर को युवक सहम गया। वह अब करीब से आ रही थी। गुफा की जमीन और दीवारों पर पीला प्रकाश काँप रहा था। जैसे कोई जलती हुई लौ हो जिसकी परछाईं पड़ रही हो। शायद लालटेन का प्रकाश हो! उनके सामने एक अधेड़ साधु खड़ा था। उसकी अंगारे सी लाल-लाल आँखों को देख उसके पाँव काँपे। लंबी दाढ़ी, पूरे शरीर पर वस्त्र के नाम पर केवल भस्म और लँगोट। वह पालथी मारकर जमीन पर बैठ गया। वहाँ बैठी उस आकृति को देख पहली नजर में कोई भी भयभीत हो सकता था।

युवक ने चारों ओर नजरें घुमाईं। अब दिख रहा था बेशक स्पष्टता से नहीं, लेकिन इतना अवश्य कि दृश्य समझ आ जाए। और भी बहुत से साधु वहाँ बैठे थे। सब नग्न अवस्था में

थे...भस्म में लिपटे...माथे पर लाल टीका लगा था, गले में रुद्राक्ष की मालाएँ थीं। जटाओं में बँधा छोटा त्रिशूल और पास में रखे चिमटे।

कोई साधु ध्यानमग्न था, कोई तप में। कोई मौन साधना करता प्रतीत हो रहा था। बर्फीले एकांत में हाड़ कँपा देने वाली ठंड में वे साधक तप कर रहे थे। लंबी-लंबी जटाओं को सिर पर लपेटा हुआ था। ठंड के बावजूद उनकी देह पर कोई कंपन नहीं था, मानो मन की दृढ़ता ने देह को भी जड़ बना दिया हो। अन्य साधुओं की आँखें बंद थीं, लेकिन उन्हें देख प्रतीत हो रहा था कि अगर वे खुलीं तो देखते ही भस्म कर डालेंगी। चेहरे पर रुक्षता, क्रोध की लपटों से आच्छादित पूरा अस्तित्व—निर्विकार, तटस्थ, सांसारिक झंझटों से मुक्त...।

इस एकांत दुनिया में कदम रखने से पहले कोई दो बार सोचेगा, पर जिनमें जुनून होता है, कुछ करने का हौसला होता है, उन्हें कैसा डर...कुछ अलग करने की दृढ़ता व्याप्त थी उस युवक के चेहरे पर...कुछ पल पहले जो डर उत्पन्न हुआ था, वह तिरोहित हो चुका था। उस लड़की का भी...आश्वस्त थी वह उस युवक के साथ। क्या वह कोई प्रेमी युगल था, जो गलती से घूमता हुआ इन कंदराओं में भटक गया था? क्या ये जानते नहीं कि यहाँ सामान्य इनसान का आना निषेध है? इन तपस्वियों का ध्यान भंग करने का दंड क्या हो सकता है, सोचा है इन्होंने या कोई तलाश इन्हें यहाँ खींच लाई है?

स्वयं को सँभाला उस युवक ने। आने का प्रयोजन क्या बताए? कुछ समझ नहीं आया तो दृढ़ता से बोला, "मैं आपकी दुनिया का हिस्सा बनना चाहता हूँ।" फिर कुछ पल चुप रहा। असमंजस की स्थिति ने उसे घेर लिया था। लड़की ने उसे कोहनी मारी, मानो सजग करना चाहती हो कि वह जो भी बोले सोच-समझकर कहे।

"क्या मतलब है तुम्हारा?" स्वर गूँजा भयानक शोर के साथ पूरी गुफा में।

हड़बड़ी में युवक के मुँह से निकला, "मैं नागा साधु बनना चाहता हूँ।" उसके हाथ उस साधु के सामने जुड़ गए।

"हाहा...हाहा...एक अट्टहास चारों ओर फैल गया। ये गूँज किसी एक की नहीं थी, बहुत सारी आवाजें उसमें शामिल थीं। तपस्या की मुद्रा में बैठे हुए साधुओं ने अपनी आँखें खोल ली थीं। वे उठकर युवक के नजदीक आ गए। कुछ के हाथ में लालटेन थीं तो कुछ के हाथ में मोमबत्ती। सबके शरीर पर सिवाय भस्म के कुछ नहीं था। पूर्णतया नग्न थे वे। भयभीत करने वाला दृश्य था। लड़की ने अपनी नजरें झुका लीं।

लड़के ने जींस व टीशर्ट पहनी हुई थी और उसके ऊपर जैकेट। लड़की ने जिसका कद बिल्कुल लड़के के बराबर था, यानी होगा कोई पाँच फीट आठ इंच, बहुत सुंदर थी। गौरवर्ण था और छरहरी काया थी। लंबे कद के कारण वह युवक से लंबी लग रही थी। युवक का शरीर भरा हुआ था और चेहरा एकदम गोल था। दोनों एक-दूसरे के पूरक लग रहे थे और आत्मविश्वास से लबालब भी। उस लड़की ने भी जींस पहनी हुई थी, एकदम टाइट जींस और साथ में कसा हुआ टॉप। उसने भी काले रंग की जैकेट पहनी हुई थी।

"हम जैसा बनना चाहते हो तो यह भी बता दो कि अपनी दुनिया पीछे छोड़कर आए हो और या साथ लेकर आए हो? सहचरी है तुम्हारी क्या?" उस अधेड़ साधु का गुस्सा चरम पर था, पर वह स्वयं पर नियंत्रण करना जानते हैं।

“यह भी अपनी दुनिया छोड़कर आई है। इसे भी नागा साध्वी बनना है।” इस बार बोलते हुए युवक की आँखों में एक विचित्र सी चमक आ गई थी। लड़की के लिए फैसला उसने स्वयं कर लिया था, बिना यह सोचे कि वह इससे सहमत है भी कि नहीं।

“जानते भी हो कि क्या बोल रहे हो? तुम जैसे युवा गंभीरता से सोचना जानते तक नहीं हो। इस बच्ची के लिए भी खुद से ही सब तय कर रहे हो? पूछा उससे कि वह क्या चाहती है? नागा साधु या साध्वी बनने का अर्थ क्या होता है, जानते भी हो? हमारा समय बरबाद मत करो। मैं फिर कह रहा हूँ चले जाओ यहाँ से। हम किसी से मिलना पसंद नहीं करते। यह हमारी दुनिया है, जिसमें अन्य लोगों का प्रवेश निषेध है।”

“आप लोग यहाँ जिस तरह से रहते हैं, मैं, मेरा मतलब है हम दोनों उस जीवन का अनुभव करना चाहते हैं,” उत्तेजित स्वर में युवक अपनी ही धुन में बोला। मानो साधु ने क्या कहा उसने सुना ही न हो। धैर्य की कमी है उसमें!

लड़की हैरानी से उसे देख रही थी। चुप ही रही, नाहक विवाद की स्थिति उत्पन्न नहीं करना चाहती।

“हमारा जीवन कोई अनुभव या प्रयोग करने की चीज नहीं है। यह एक कठोर तप है,” साधु की आँखों में अग्नि जैसी दहक उतर आई थी। “मजाक नहीं है नागा साधु बनना और न ही कोई खेल कि कुछ दिन खेला, मौज-मस्ती की और फिर अपने संसार में लौट गए। यह तुम लोगों के प्रेम की तरह क्षणभंगुर नहीं है। हमारा जीवन एक कठिन परीक्षा है। हमको कठोर धरती पर पैर जमाकर सारा जीवन बिताना होता है। वह भी मन में किसी तरह का अफसोस या पछतावा न रखते हुए, क्योंकि हम यह जीवन स्वेच्छा से चुनते हैं।”

“लेकिन हम सच में आपके जीवन को अपनाना चाहते हैं। आप जैसा कहेंगे हम वैसा ही करेंगे।” युवक हठ पर उतर आया था जैसे।

“बस बहुत हुआ। तुरंत यहाँ से चले जाओ वरना अपने प्राण गँवा बैठोगे। तुम्हें अपनी दुनिया छोड़नी है छोड़ो, लेकिन हमारी दुनिया में तुम्हारा प्रवेश निषेध है। जीवन को मजाक बना रखा है तुम जैसे युवकों ने। क्यों अपने साथ इस लड़की का जीवन भी बरबाद करना चाहते हो? हमारी दुनिया तुम्हारी दुनिया जैसी नहीं है। यह बहुत कठिन राह है, जिस पर चलना तुम जैसे नौजवानों के लिए संभव नहीं है। यह कोई तुम्हारी शहरी संस्कृति की जीवन-शैली नहीं है, जिसे स्वेच्छा से जब चाहे बदल सको या अनुशासनहीनता का पालन करो। जब मन आए जो करो, अपने मन मुताबिक चलो, ऐसी छूट नहीं मिलती यहाँ। हमारी जीवन-शैली नियमों और अनुशासन से बँधी हुई है। उसमें अंशमात्र भी ढिलाई की गुंजाइश नहीं है। कठोर तप से भी अधिक मुश्किल है हमारा जीवनयापन का तरीका। तुम सोचकर आए होगे कि कोई हिप्पी समुदाय होगा या आम साधु जो यहाँ गुफा में तप कर रहे हैं, लेकिन हम नागा साधु हैं। रहते नग्न हैं, पर कड़ा आचरण और स्वयं पर नियंत्रण हमारे आवरण हैं। मूर्ख हो तुम। चले जाओ यहाँ से। अपना पिंडदान करने का साहस है क्या तुझमें? तुझसे अधिक मूर्ख तेरी सहचरी है, जो तेरे साथ यहाँ तक चली आई।”

वह साधु कुछ पल के लिए चुप हुआ, फिर उस लड़की की ओर देखते हुए बोला, “समझ सकता हूँ तुम इसके प्यार में अंधी होकर इसके साथ चली आई हो। लेकिन तुम जैसी

सुकुमारी जो केवल प्यार को ही जीवन का सच मानती हो, क्या हमारे बीच, हमारे जैसी बनकर रह पाएगी? तुरंत चले जाओ। हमें भिक्षा माँगने जाना है।”

सारे नागा साधु चलने को उद्यत हो उठे।

o

2

मुलाकात

“आपकी तपस्या या अनुशासन में किसी तरह का विघ्न डालने का हमारा कोई इरादा नहीं है। हम चले जाएँगे, लेकिन हम बहुत दूर से आए हैं तो क्या आपके बारे में जाने बिना लौटना सही होगा? अगर मैं नागा साधु नहीं बन सकता तो इसकी कोई वजह तो आपको बतानी होगी,” युवक का साहस हतप्रभ कर रहा था उन साधुओं को। समझ गए थे वह आसानी से लौटने वाला नहीं। यह भी कि वह यहाँ कोई नागा साधु बनने नहीं आया है। वे दोनों ही उनके बारे में जानने और कैमरे में तसवीरें उतारने के खयाल से निकले हैं किसी सैलानी की तरह। हो सकता है घूमने निकले हों और चलते-चलते यहाँ पहुँच गए हों।

“कुंभ मेले में देखने के बाद जिज्ञासा ने हमारे अंदर पंख लगा दिए थे। वहीं मुलाकात करना चाहता था, लेकिन बहुत भीड़ थी। इसलिए मेले के खत्म होने का इंतजार कर रहा था कि तब आराम से बैठकर आपसे बात करूँगा, लेकिन कुंभ मेला खत्म होने के बाद आप लोग तो न जाने कब वहाँ से गायब हो गए!” युवक धीरे-धीरे अपनी मन की बातों को खोल रहा था।

“हम चले जाएँगे, लेकिन अगर कुछ बता सकें अपने बारे में, नागा साधु की संस्कृति के बारे में, जीवन जीने के ढंग और पद्धतियों के बारे में...” इस बार लड़की ने कहा। झिझक के साथ एक अनुरोध भी था उसके स्वर में।

“बैठ जाओ,” अचानक एक वयोवृद्ध साधु सामने आकर बोला। “हम किसी से बात नहीं करते हैं। सांसारिक जगत् से कोई नाता नहीं है हमारा, लेकिन यहाँ तक आ ही गए हो तो सोचता हूँ, तुम्हें नागा साधुओं की सच्चाई से परिचित करा ही दूँ। मैं बताता हूँ तुम्हें अपने इतिहास के बारे में। इससे तुम लोगों की गलतफहमी भी दूर होगी और संशय भी और दुबारा यहाँ लौटकर आने की हिम्मत भी नहीं करोगे।”

वह उन दोनों के ठीक सामने बैठ गया। लग रहा था कि वह वहाँ उपस्थित सारे साधुओं में सबसे वृद्ध है और हो सकता है उनका अगुआ भी हो। क्योंकि किसी ने भी उनकी बात का विरोध नहीं किया। अपनी लंबी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए और जटाओं के जूड़े पर लगे त्रिशूल को ठीक करते हुए उन्होंने बताना शुरू किया, “‘नागा’ शब्द बहुत पुराना है। यह शब्द संस्कृत के ‘नग’ शब्द से निकला है, जिसका अर्थ ‘पहाड़’ होता है। इस पर रहने वाले लोग ‘पहाड़ी’ या ‘नागा’ कहलाते हैं। ‘नागा’ का अर्थ ‘नग्न’ रहने वाले व्यक्तियों से भी है। भारत में नागवंश और नागा जाति का बहुत पुराना इतिहास है। शैव पंथ से कई संन्यासी पंथों और परंपराओं की शुरुआत मानी गई है। हम त्रिशूल, शंख, तलवार धारण करते हैं और धूनी रमाते हैं। हम शैव पंथ के कट्टर अनुयायी हैं और अपने नियम के पक्के होते हैं।

हममें से कई सिद्ध होते हैं तो कई औघड़।"

"औघड़? लेकिन वे तो भिन्न होते हैं न? श्मशान में रहते हैं शायद..."

"अकसर नागा साधुओं और अघोरियों को एक ही समझ लिया जाता है, लेकिन तुमको जानकर हैरानी होगी कि इन दोनों में उतना ही अंतर है, जितना दिन और रात में, धरती और आकाश में...।"

"अघोरियों के बारे में भी कुछ बताएँ?" लड़की ने पूछा। वह डायरी में उनकी बातें लिखती भी जा रही थी।

"तुम यह सब लिख क्यों रही हो?" वह वृद्ध साधु गरजा।

"ताकि याद रहे," काँपते स्वर में उसने कहा। असली बात वह छुपा गई थी। शायद बताने का कोई औचित्य था भी नहीं या बताया भी जा सकता है, लेकिन वह चुप ही रही।

"हूँ। तो पहले नागा साधुओं के बारे में जान लो," वयोवृद्ध ने थोड़ी रुखाई से कहा। फिर नरम पड़ते हुए दूसरे साधु से बोले, "इनके सामने लालटेन रख दो। कुछ खासे ही जिद्दी किस्म के युवा मालूम होते हैं। तुम लोग बैठ जाओ।"

युवक और वह लड़की तुरंत बैठ गए। जब बैठने के लिए कहा है तो अवश्य ही कुछ बताएँगे।

"जब कुंभ के मेले में जा चुके हो तो इतना तो जानते ही होगे कि महाकुंभ, अर्धकुंभ या फिर सिंहस्थ कुंभ में ही नागा साधुओं का हुजूम जुड़ता है और कुंभ खत्म होते ही रातोरात वे गायब हो जाते हैं, जैसा कि तुमने भी अभी कहा। सब सोचते हैं कि न जाने ये कहाँ चले जाते हैं। ये कहाँ से आते हैं, किसी को नहीं पता...बस एक भीड़ का सैलाब उमड़ता है और लहरों के शांत होते ही वे न जाने कहाँ अदृश्य हो जाते हैं! कुंभ के समाप्त होने के बाद अधिकतर साधु अपने शरीर पर भभूत लपेटकर हिमालय की चोटियों के बीच चले जाते हैं। वहाँ यह अपने गुरु स्थान पर अगले कुंभ तक कठोर तप करते हैं। इस तप के दौरान ये फल-फूल खाकर ही जीवित रहते हैं। सालों तक कठोर तप करते रहने के कारण उनके बाल कई मीटर लंबे हो जाते हैं और यह तप तभी संपन्न होता है, जब ये कुंभ मेले के दौरान गंगा में डुबकी लगाते हैं।"

"तब भी ऐसा ही हुआ था," युवक बोल उठा। "उज्जैन गया था जब मैं तब भी वे अचानक गायब हो गए थे। सिंहस्थ की पहचान बनकर, लोगों के लिए आश्चर्यलोक खोलने के बाद, आखिरी शाही स्नान कर रात में ही उज्जैन से कब रवाना हो गए, यह पहेली ही है। एक महीने तक सिंहस्थ की शान हजारों की संख्या में नागा साधुओं के एकाएक गायब होना एक आश्चर्यजनक बात थी।"

उसकी बात सुन वयोवृद्ध ने हँसते हुए कहा, "आम लोगों के लिए पहेली ही तो हैं हम? वरना तुम इतने इच्छुक नहीं होते हमारे बारे में जानने के लिए? नागा साधु जंगल के रास्तों से यात्रा करते हैं। आमतौर पर हम लोग देर रात में चलना शुरू करते हैं। यात्रा के दौरान हम किसी गाँव या शहर में नहीं जाते, बल्कि जंगल और वीरान रास्तों में डेरा डालते हैं। रात में यात्रा और दिन में जंगल में विश्राम करने के कारण सिंहस्थ में आते या जाते हुए ये किसी को नजर नहीं आते। कुछ नागा साधु झुंड में निकलते हैं तो कुछ अकेले ही यात्रा करते हैं।

हम यात्रा में कंद-मूल फल, फूल और पत्तियों का सेवन करते हैं और जमीन पर ही सोते हैं।

"अखाड़ों के ज्यादातर नागा साधु हिमालय, काशी, गुजरात और उत्तराखंड में रहते हैं। ये सभी गाँव या शहर से दूर पहाड़ों, गुफाओं और कंदराओं में साधना करते हैं। नागा साधु एक गुफा में कुछ साल रहने के बाद अपनी जगह बदल देते हैं। लोगों के संपर्क से दूर ही रहना पसंद करते हैं हम।"

"ऐसा करने की कोई खास वजह?"

"वजह? क्या आम मनुष्य समझ सकता है हमें? समाज तो हमें स्वीकारने तक को तैयार नहीं, क्योंकि उसमें इतना ज्ञान नहीं कि हमें समझ सके," क्रोधित स्वर में लंबे कद के साधु ने कहा।

"शांत गजानन। इनके प्रश्नों से परेशान न हो। इनकी गलती नहीं है इसमें। नागा साधुओं का संसार ही सवालों से ज्यादा कौतूहल से भरा है। कौतूहल यह कि नागा साधुओं की विचित्र दुनिया का सच क्या है? एक साथ कहाँ से आते हैं इतने साधु? सवाल यह कि पवित्र स्नान के बाद आखिर कहाँ चले जाते हैं ये साधु? पूछो और क्या जानना चाहते हो?" वयोवृद्ध साधु ने पूछा।

"कपड़ों को त्यागकर आकाश को अपना वस्त्र क्यों बना लेते हैं नागा साधु? क्यों ये कपड़ों के नाम पर पूरे शरीर पर धूनी की राख लपेट लेते हैं?" सवाल लड़की ने पूछा था।

"क्यों रहते हैं निर्वस्त्र? बहुत लोगों के अंदर यही प्रश्न कौंधता है हमें देखकर। सच तो यह है कि नागा साधु, यह सुनते ही लोगों के मन में सबसे पहले भस्म लगाए नग्न साधुओं का खयाल ही आता है और वह भी नकारात्मक ढंग से। कुछ को वे असभ्य और बर्बर धर्मावलंबी लग सकते हैं। असल में नागा साधु प्रकृति और प्राकृतिक अवस्था को महत्त्व देते हैं, इसलिए वस्त्र धारण नहीं करते हैं। इसके अलावा हमारा मानना है कि इनसान निर्वस्त्र जन्म लेता है और इसी वजह से नागा साधु हमेशा निर्वस्त्र रहते हैं। नागा साधु अपने शरीर पर भस्म और जटाजूट धारण करते हैं।

"अधिकतम लोग नहीं जानते कि नागा साधु हिंदू धर्म की रक्षा करने वाली ऐसी पवित्र पैदल सेना है, जो इसके लिए कोई धन नहीं लेती। चाहे इस्लामिक आक्रांताओं की बात हो या फिर अंग्रेज साम्राज्यवादियों की, नागा साधु अपने 'हिंदू धर्म' की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहे हैं। हिंदू धर्म की रक्षा करना हम अपना सौभाग्य समझते हैं, पर विडंबना तो यह है कि समाज हमारे बलिदान को न कभी याद रखता है, न ही कृतज्ञ है। न ही हमारा सम्मान किया जाता है और न ही इतिहास में हमें स्थान दिया जाता है।"

"कहा जाता है कि आप शिव के भक्तों की धुंधुबी हैं। क्या वास्तव में ऐसा है?" युवक ने हैरानी से पूछा।

"आदिगुरु शंकराचार्य ने जिनके कंधों पर सनातन धर्म की रक्षा का भार सौंपा था, हम वही हैं। उनकी हम हुंकार हैं, वह रणभेरी हैं जो सदियों से बजती आ रही है। लेकिन शिव के जिन भक्तों को दुनिया नागा साधु कहती है, वे सिर्फ युद्ध नाद ही नहीं करते। वे हथियार चलाने में माहिर होते हैं और महाकुंभ जैसे अवसर पर हथियार चलाकर अपना कौशल भी दिखाते हैं। नागा साधुओं को हर हथियार चलाने में महारत हासिल होती है। शास्त्र के साथ

शस्त्र विद्या के हर हुनर में वे माहिर होते हैं। गुस्सा आ जाए तो खैर नहीं, नहीं तो शांत रहते हुए भी अद्भुत योद्धा का अहसास देते रहते हैं नागा साधु। संतों को हथियार से क्या काम, लेकिन हम नागा साधुओं का सौंदर्य भी बगैर हथियार के पूरा नहीं होता। हथियारों में ही हमारे इष्ट देव बसते हैं। हमारे अखाड़े हमारी पहचान हैं। सीधे शब्दों में कहा जाए तो अगर अखाड़े फोर्स हैं तो नागा उसके कमांडो। इतिहास बदला, व्यवस्था बदली, अखाड़ों के तेवर भी बदले, लेकिन नागा साधुओं का हथियार प्रेम नहीं बदला। वह आज भी सदियों के इतिहास की गवाही दे रहा है।

"लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि साधारण लोगों को नागा साधुओं की दुनिया बहुत आकर्षित करती है। यही वजह है कि उनके पास नागा साधुओं को लेकर सवालों की फेहरिस्त लंबी है, जैसी कि तुम्हारी पास है। खैर, बहुत हुआ अब हमें जाना होगा और तुम भी तुरंत यहाँ से चले जाओ। हमारे ध्यान में हस्तक्षेप मत करो। न ही बहुत कुछ जानने की इच्छा रखो। हमें भिक्षा माँगने जाना है।" अचानक वयोवृद्ध नागा साधु के तेवर बदल गए।

युवक व वह लड़की हैरानी से उन्हें देखने लगे। उनसे तो कोई गलती नहीं हुई है अभी, फिर वह क्यों भड़क गए?

3

नागा साधु बनने की प्रक्रिया

वह युवक नहीं हिला। ढीठ की तरह बैठा रहा। सीधे नजरें मिलाकर देखा उसने नागा साधु को। इस बार डर नहीं था उसकी आँखों में।

"चलते हैं। क्यों जिद कर रहे हो?" लड़की ने उसे हाथ पकड़कर उठाना चाहा। "इन्हें जाना है भिक्षा माँगने तो व्यर्थ क्यों जिद कर रहे हो?"

"रुको, रूमी। जब तक मेरी जिज्ञासा शांत नहीं हो जाती, मैं नहीं जाऊँगा।"

"बता तो दिया इतना सब...और क्या जानना है? और तुम्हें क्यों है इतनी दिलचस्पी? दिलचस्पी तो मुझे होनी चाहिए। तुम नाहक अड़ रहे हो। चलो शेखर," अनुरोध किया लड़की ने। बहुत धीरे से उसके कान में बोली, "और तुम कौन सा नागा साधु बनना चाहते हो, जो इतना नाटक कर रहे हो? यह तुम्हारा थिएटर नहीं है।"

"तुम्हें क्यों इतनी जल्दी है जाने की? अभी तो कितना कुछ है जानने को। और तुम भी तो उत्सुक थीं इनके बारे में जानने के लिए। यहाँ तक कि तुम तो इन पर शोध भी कर रही हो, फिर बिना जाने लौट जाना चाहती हो? यहाँ तक आए हैं तो ऐसे नहीं जाऊँगा। अगर इन्हें लगता है कि हम इनकी दुनिया का हिस्सा नहीं बन सकते तो इन्हें इसकी वजह बतानी होगी और अपने जीवन के बारे में भी विस्तार से बताना होगा।"

"नाहक जिद मत करो," इस बार एक और अधेड़ वय के साधु ने कहा। आवाज में कठोरता थी, लेकिन कहा समझाने के अंदाज में था। "और यह थिएटर की क्या बात कर रही है लड़की? तुम क्या रंगमंच की दुनिया से जुड़े हो?"

युवक झेंपता हुआ बोला, "जी, मैं एक कलाकार हूँ। नाटक निर्देशित भी करता हूँ और अभिनय भी। रंगमंच से जुड़ा हूँ। पेशे से इंजीनियर हूँ। थिएटर मेरा शौक है।"

"बहुत खूब! तभी इतना अच्छा अभिनय कर पाए कि नागा साधु बनना चाहते हो। बैठ जाओ," एक मध्यम वय का साधु, जो सबसे पीछे खड़ा था, ने आगे आते हुए कहा। "थोड़ा विलंब से चलेंगे भिक्षा माँगने, पहले इस युवक की जिज्ञासा शांत कर देते हैं, वरना इसका मन विचलित रहेगा और यह अपनी दुनिया में लौट नहीं पाएगा। मैं नहीं चाहता कि इसकी मूर्खता का दंड इस लड़की को भोगना पड़े, जो बिना सोचे-समझे इसके साथ चली आई है। प्रेम में है लड़की, उसका मान हम रखेंगे। हम धर्म के रक्षक हैं, इसलिए कोई अनिष्ट होता नहीं देख सकते।"

युवक बैठ गया और उसके साथ सटकर वह लड़की भी। सारे साधु भी बैठ गए थे। "विलंब हमारे नियमों के विरुद्ध है। लेकिन सबकी सहमति है तो ठीक है," उस साधु ने कहा जिसने आरंभ में युवक को लौट जाने का आदेश दिया था। कुछ पल शांति छाई रही।

“आप इनके कौतूहल का निराकरण करें,” मध्यम वय के साधु ने वयोवृद्ध साधु से कहा।

“तुम लोगों को शायद लगता है कि नागा साधु बनना भी आम साधु बनने जैसा आसान होता है, जबकि ऐसा नहीं है।” उसने युवक की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा और चिलम सुलगा ली। “हकीकत तो यह है कि नागा साधु बनने के लिए हमें कठिन परीक्षा से गुजरना पड़ता है। कोई भी साधु यूँ ही नागा नहीं बन सकता, इसके लिए साधुओं को गुरु-शिष्य परंपरा में आना पड़ता है। बरगद के पेड़ के नीचे छह महीने तक खड़ा रहना पड़ता है। सालों तक गुरु की सेवा और मुश्किल तपस्या करनी पड़ती है और तब कहीं जाकर नागा साधु होने का दर्जा मिलता है। महाकुंभ के दौरान नागा साधु बनाए जाने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है, लेकिन हर किसी के लिए नागा बनना संभव नहीं है। नागा साधु बनने के लिए दृढ़ इच्छाशक्ति और संन्यासी जीवन जीने की प्रबल इच्छा होनी चाहिए। नागाओं को सामान्य दुनिया से हटकर बनना और असामान्य जीवन व्यतीत करना पड़ता है। सनातन परंपरा को आगे बढ़ाने और हर हाल में धर्म की रक्षा करने के लिए अलग-अलग संन्यासी अखाड़ों में हर महाकुंभ के दौरान नागा साधु बनने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। संपूर्ण भारत वर्ष में 13 ऐसे अखाड़े हैं, जहाँ संन्यासियों को नागा बनाया जाता है, लेकिन इन सभी में जूना अखाड़ा ऐसा स्थान है, जहाँ सबसे ज्यादा नागा साधु बनाए जाते हैं।

“आमतौर पर अठारह साल से ज्यादा के युवक को ही नागा बनाया जाता है। जब कोई व्यक्ति साधु बनने के लिए किसी अखाड़े में जाता है, तो उसे कभी सीधे-सीधे अखाड़े में शामिल नहीं किया जाता। पहले अखाड़ा अपने स्तर पर यह पता लगाता कि वह साधु क्यों बनना चाहता है? उस व्यक्ति की तथा उसके परिवार की संपूर्ण पृष्ठभूमि देखी जाती है। फिर उसे नागा साधु जीवन की कठिनाई से परिचय कराया जाता है, उसकी स्वयं पर नियंत्रण की स्थिति को परखा जाता है।

“अगर अखाड़े को यह लगता है कि वह साधु बनने के लिए सही व्यक्ति है, तो ही उसे अखाड़े में प्रवेश की अनुमति मिलती है। अखाड़े में शामिल होने के 3 साल तक उसे अपने गुरुओं की सेवा करनी होती है, सभी प्रकार के कर्मकांडों को समझना और उनका हिस्सा बनना होता है। अखाड़े में प्रवेश के बाद उसको ब्रह्मचर्य की शिक्षा दी जाती है। उससे लंबे समय तक ब्रह्मचर्य का पालन भी कराया जाता है। इस प्रक्रिया में केवल दैहिक की नहीं, मानसिक नियंत्रण को भी परखा जाता है। उसके तप, ब्रह्मचर्य, वैराग्य, ध्यान, संन्यास और धर्म का अनुशासन तथा निष्ठा आदि प्रमुखता से परखे-देखे जाते हैं। अचानक किसी को दीक्षा नहीं दी जाती। पहले यह तय किया जाता है कि दीक्षा लेने वाला व्यक्ति पूरी तरह से वासना और इच्छाओं से मुक्त हो चुका है या नहीं। ब्रह्मचर्य व्रत के साथ ही दीक्षा लेने वालों के मन में सेवा भाव होना भी जरूरी है। माना जाता है कि जो नागा बन रहा है, वह धर्म, राष्ट्र, मानव समाज की सेवा और रक्षा के लिए बन रहा है।

“दीक्षा लेने से पहले सबसे जरूरी है खुद का श्राद्ध और पिंडदान करना। नागा साधु बनने की प्रक्रिया की शुरुआत में सबसे पहले ब्रह्मचर्य की शिक्षा लेनी होती है। इसमें सफलता प्राप्त करने के बाद महापुरुष दीक्षा दी जाती है। इसके बाद यज्ञोपवीत होता है। इस प्रक्रिया को पूरी करने के बाद वह अपना और अपने परिवार का पिंडदान करते हैं, जिसे ‘बिजवान’

कहा जाता है।

"वे 17 पिंडदान करते हैं, जिसमें 16 अपने परिजनों का और 17वाँ खुद का पिंडदान होता है। अपना पिंडदान करने के बाद वे अपने आपको मृत समान घोषित करते हैं, जिसके बाद उनका पूर्वजन्म समाप्त माना जाता है। पिंडदान के बाद जनेऊ, गोत्र समेत उनके पूर्वजन्म की सारी निशानियाँ मिटा दी जाती हैं। इसकी वजह से हमारे लिए सांसारिक जीवन का कोई महत्त्व नहीं है। हम अपने समुदाय को ही अपना परिवार मानते हैं। छोड़ पाओगे अपना घर-परिवार? हिम्मत है स्वयं का पिंडदान करने का? जीवन को तुम लोग क्या रंगमंच समझते हो, जहाँ जैसा चाहे नाटक खेल सको?" वयोवृद्ध साधु की आवाज की गंभीरता हिला गई युवक को।

मजाक तो नहीं लगा था उसे इन साधुओं का जीवन, लेकिन इतना विषम होगा, यह उसने सोचा तक नहीं था। वह लड़की से थोड़े झुँझलाए स्वर में बोला, "तुमने ठीक से अध्ययन नहीं किया था क्या इनके बारे में? फिर शोध कैसे करोगी?"

"अपनी सहचरी या जो भी यह है, उसे दोष मत दो। किंचित् तुम्हारी जल्दबाजी तुम्हें यहाँ तक ले आई है या युवावस्था का उतावलापन जिसे लगता है कि वह बहुत बड़ा खोजी है। इसलिए हर चीज के बारे में अधकचरा ज्ञान लिए घूमता है। तो बताओ कर पाओगे अपना पिंडदान?" वह साधु जैसे युवक के मन के सारे गुंजलों को खोलने को तत्पर था।

युवक चुप रहा। कोई जवाब था भी नहीं उसके पास! स्वयं का पिंडदान करने की बात सोचकर ही वह भीतर ही भीतर काँप उठा था। इसलिए उत्तर न देना ही उचित लगा उसे।

"अगर वह जप, तप, योग, शस्त्र-शास्त्र की सारी कसौटियों पर खरा उतरता है तो महाकुंभ के दौरान किसी भी शाही स्नान से एक दिन पहले उसे नागा बनाया जाता है। उसका मुंडन किया जाता है, पितृऋण से मुक्ति के लिए पिंडदान कराया जाता है। 'विराज होम संस्कार' अर्थात् गृह त्याग संस्कार अखाड़े के आचार्य महामंडलेश्वर द्वारा संचालित किया जाता है। आकांक्षी को माता और पिता दोनों पक्षों से अपने पूर्वजों की सात पीढ़ियों के साथ स्वयं का भी पिंडदान करना होता है और सबसे आखिर में उस साधु की कामेंद्रियों को बेअसर किया जाता है। ताकि नागा साधु बनने से पहले उसकी वासनाओं का अंत हो जाए।" वयोवृद्ध साधु ने युवक से कोई उत्तर न पा अपनी बात जारी रखते हुए कहा। उसने चिलम का एक कश लगाया और इस बार आग्नेय नेत्रों से उसे ऐसे घूरा मानो उसे जला ही डालेंगे।

"महापुरुष सबसे असाधारण व्यक्तित्व होता है। महाकुंभ के दौरान उसे गंगा में 108 डुबकियाँ लगवाई जाती हैं और उसके पाँच गुरु निर्धारित किए जाते हैं। नागा बनने वाले साधुओं को भस्म, भगवा वस्त्र और रुद्राक्ष की माला दी जाती है। इच्छुक नागा के पास पाँच गुरु होते हैं। ये गुरु हैं भगवान् शिव, भगवान् विष्णु, भगवान् शक्ति, भगवान् सूर्य और भगवान् गणेश। साधक को रुद्राक्ष, केसर, राख और कुछ अन्य आध्यात्मिक चीजें मिलती हैं, जो नागा की पोशाक को पूरा करती हैं। फिर अवधूत अवस्था में सामान्य मनुष्यों की सभी चिंताओं और सांसारिक आसक्तियों से परे जाने की आवश्यकता होती है। साधक अपना सिर मुँड़वाता है और अखाड़ा पुजारी के मार्गदर्शन में अपना मृत्यु संस्कार करता है। मृत्यु समारोह का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति अब बाहरी दुनिया के लिए मर चुका है। नागा को अब

वैदिक परंपराओं और सनातन धर्म का पालन और रक्षा करनी होगी। अंतिम चरण सबसे असहनीय और यातनापूर्ण चरण है। यह प्रक्रिया इच्छुक नागा को 24 घंटे तक अखाड़े के ध्वज के नीचे खड़े रहने से शुरू होती है। उसे अपने दोनों हाथों में पानी से भरे बरतन और कंधों पर एक दंड (एक भारी वस्तु) रखना होता है। इस दौरान अखाड़े के सदस्यों द्वारा उस पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। फिर लिंग को निष्क्रिय करने के लिए मंत्रों की मदद से धीरे-धीरे पीटा जाता है। यह व्यायाम धीरे-धीरे लिंग को कमजोर कर देता है और इससे कामेच्छा खत्म हो जाती है। फिर होता है पूरी रात 'ॐ नम: शिवाय' का जाप। यह सब नागा साधु को सनातन धर्म और राष्ट्र की रक्षा के लिए एक योद्धा में बदल देता है। महापुरुष बन जाने के बाद उसे अवधूत बनाए जाने की तैयारी शुरू होती है। अखाड़ों के आचार्य अवधूत बनाने के लिए सबसे पहले महापुरुष बन चुके साधु का जनेऊ संस्कार किया जाता है और उसके बाद उसे संन्यासी जीवन की शपथ दिलवाई जाती है।

"इस चरण के पूरा होने के बाद वह साधक पूर्ण नागा साधु बन जाता है। बहुत कठिन है हमारी दुनिया में प्रवेश करना और तुम लोगों ने मजाक समझ रखा है हमारे जीवन को। शहर में रहते हो, आधुनिक मानते हो स्वयं को और बहुत ज्यादा समझदार भी, लेकिन चतुराई हर जगह काम नहीं आती," एक अन्य साधु, जिसका कद बहुत लंबा था और जिसने बालों की जटाएँ सिर पर लपेटने के बजाय चोटियाँ गूँथी हुई थीं और अपनी लटकती अनगिनत चोटियों की वजह से भयावह लग रहा था, तेज आवाज में बोला। "दे पाओगे क्या तुम ऐसी कठिन परीक्षा? क्या स्वयं पर, अपनी दैहिक और मानसिक इच्छाओं पर नियंत्रण करने की क्षमता है तुममें? अभी भी एक लड़की के साथ तुम घूम रहे हो। खुद को तो धोखा दे रहे हो, साथ ही इस लड़की को भी।"

"चलो शेखर," लड़की उठने लगी तो युवक ने उसे फिर से हाथ पकड़कर बिठा दिया।

उसकी उत्कंठा को शांत करने के इरादे से वयोवृद्ध ने कहा, "अपने वस्त्रों को त्यागने की कल्पना तक तुम नहीं कर पाओगे। हमारा जीवन कोई नाटक या चलचित्र नहीं है कि जैसे चाहो मनमर्जी चला सको। हमारा जीवन केवल नियमों पर चलता है, हम स्वच्छंद प्राणी हैं, पर अनुशासनहीन नहीं। तुम्हें तो यह भी ज्ञात नहीं होगा कि नागा साधु को वस्त्र पहनने की अनुमति नहीं होती है। हमें सिर्फ शरीर पर भस्म लगाने की अनुमति होती है और यही हमारा शृंगार भी है और वस्त्र भी। सिर पर जटा और शरीर पर भभूत...हर नागा साधु की पहचान है। हम आश्रम या मंदिरों में रहते हैं। या हिमालय पर भी पैदल भ्रमण करते हैं और किसी गाँव में झोंपड़ी बनाकर रहते हैं। या किसी गुफा को अपना बसेरा बना लेते हैं। सोने के लिए पलंग या किसी साधन का प्रयोग नहीं करते। गद्दे पर भी नहीं, केवल जमीन पर ही हम सो सकते हैं।

"कठोर तपस्या के माध्यम से हम आध्यात्मिक शक्तियाँ अर्जित करते हैं, जिनका उपयोग हम लोगों की मदद और उन्हें ठीक करने के लिए करते हैं।"

"मुझे ज्ञात है कि नागा साधुओं के पास रहस्यमयी शक्तियाँ होती हैं। तो क्या उनसे आप जो चाहे कर सकते हैं? शक्तियाँ होने का अर्थ ही है कि अहंकार आना। लेकिन आप तो अहंकार का परित्याग करते हैं, तभी तो भिक्षा माँगकर खाते हैं?" युवक बोला मानो उसे सब

ज्ञात है। हालाँकि उसने काफी कुछ रूमी के नोट्स पढ़कर जाना था।

"मूर्ख, ये शक्तियाँ हमें अपनी तपस्या के बल से मिलती हैं तो अहंकार कैसे पैदा होगा? हम कभी भी अपनी शक्तियों का गलत इस्तेमाल नहीं करते हैं, बल्कि इनसे हम लोगों की समस्याओं का समाधान करते हैं। आशा है, तुम्हारे मन में उठते सवालों के उत्तर मिल गए होंगे? एक बात और। हम धर्म के रक्षक हैं और शस्त्र उठाना भी जानते हैं और दुश्मनों का नाश करना भी...इतिहास टटोलोगे तो हैरत में पड़ जाओगे," गजानन नामक साधु ने लगभग क्रोध से जलते हुए कहा।

युवक स्तब्ध सा बैठा था, पर वह वापस लौटना चाहता है, ऐसा उसके भावों से नहीं लग रहा था। लड़की बेचैनी से अपने पाँवों पर हथेलियाँ रगड़ रही थी। प्रेमी की बात मानने का पछतावा उसके चेहरे पर परिलक्षित हो रहा था।

"चलो हमारे साथ। बहुत कुछ समझ आ जाएगा। मार्ग में तुम्हें बताते भी चलेंगे। भिक्षा माँगने में और देर नहीं कर सकते," मध्यम वय के साधु ने कहा तो लड़की झटपट खड़ी हो गई।

"एक मिनट रुको," वयोवृद्ध साधु का तेज स्वर सुन सब उसे देखने लगे। "पहले अपनी ये लंबी चोटियों बाँधकर सिर पर लपेट लो गजानन। ऐसे बाहर गए तो लोग और भी डरेंगे हमें देखकर," लंबे कद वाले साधु की ओर देखते हुए वह बोला।

4

भिक्षा प्राप्ति

गुफा के बाहर निकल वे टेढ़ी-मेढ़ी सीढ़ियों को पार करते नीचे मैदान की तरफ उतरने लगे। एक पूरा जत्था था साधुओं का, जिन्हें बाहर की रोशनी में देख एक पल को शेखर भी भयभीत हो उठा। शरीर पर केवल भस्म, जलती आँखें और हर-हर महादेव का जयघोष...लग रहा था कि जैसे कतार में चल रहे वे साधु किसी जंगल के निवासी हैं। जंगली ही तो कहते हैं लोग इन्हें...'उसने तो ऐसे ही कह दिया था, लेकिन क्या वह सचमुच यह जीवन चाहता है?' शेखर के मन में अचानक प्रश्न चक्कर लगाने लगे। 'रोमांच खोजने की चाह ही तो उसे नहीं खींच लाई है यहाँ? वैसे भी रूमी भी तो आना चाहती थी अपने शोध के सिलसिले में,' उसने अपने मन को समझाया।

सचमुच आसान कतई नहीं है इनका जीवन! सब इन्हें जंगली कह देते हैं, लेकिन कठिन तपस्या करनी पड़ती है इन्हें, तब जाकर नागा साधु बन पाते हैं और यह पद ग्रहण के बाद पूरा जीवन धर्म की रक्षा व लोगों के कल्याण में लगा देते हैं। शेखर ने मन ही मन उनके प्रति सम्मान व्यक्त किया।

"जो लोग हिंदू धर्म और उसके रीति-रिवाजों का मजाक उड़ाते हैं दरअसल वे हिंदू भक्ति और उसकी परंपराओं से अनजान हैं। उन्हें यह पता भी नहीं है कि साधु किस तरह से असाधारण तपस्या करते हैं, जो किसी आम इनसान की सोच से भी परे है," एक साधु पीछे से आगे आते हुए बोला।

शेखर को लगा जैसे उसने उसके मन की बात पढ़ ली हो। 'कहीं ऐसा उनकी आध्यात्मिक शक्तियों के कारण तो संभव नहीं है?'

"भिक्षा माँगने कहाँ जाना है, यह तो पहले से ही तय कर लेते होंगे आप? मेरा मतलब है कौन लोग भिक्षा देते हैं, किससे भिक्षा लेनी है, इसकी जानकारी तो अब तक हो ही गई होगी?"

"ऐसा कतई नहीं है," छोटे कद का एक साधु जो युवक के बगल में कदम मिलाता चल रहा था बोला। होगा कोई तीस-बत्तीस साल का। बातों से पता चल रहा था कि खूब पढ़ा-लिखा है और ज्ञानी भी। गौरवर्ण था और एकदम गोल चेहरे पर एक अजीब-सा आकर्षण था। शायद तप की वजह से माथे पर तेज था और व्यक्तित्व में आत्मविश्वास।

"हमारे कदम कहाँ, किस दिशा में मुड़ जाएँगे, हमें भी नहीं पता होता। हम किसी को बाध्य नहीं कर सकते भिक्षा देने के लिए। वैसे भी हमें दिन और रात मिलाकर केवल एक ही समय भोजन करना होता है। एक साधु को अधिक से अधिक सात घरों से भिक्षा लेने का अधिकार होता है। अगर उन सब घरों से भिक्षा न मिले तो भूखा रहना पड़ता है। जो खाना

मिले उसमें पसंद-नापसंद को नजरअंदाज कर उसे प्रेमपूर्वक ग्रहण करना होता है।"

शेखर और रूमी को तेज कदमों से चलते साधुओं के साथ अपनी गति बनाए रखने के लिए लगभग भागना ही पड़ रहा था। यह बात सुन दोनों ही हैरान रह गए थे। संभव है, इन्हें कई-कई दिनों तक भूखा भी रहना पड़ता हो!

"आपकी दिनचर्या क्या रहती है?"

"शाम को भोजन करने के बाद हम सो जाते हैं। सुबह ब्रह्म मुहूर्त में उठते हैं। स्नान करते हैं, अपना शृंगार करने के बाद योग करते हैं, प्रार्थना करते हैं और इस तरह हमारे दिन की शुरुआत होती है। इसके बाद हवन, ध्यान, वज्रोली, प्राणायाम, कपाल क्रिया व नौली क्रिया करते हैं। पूरे दिन में एक बार शाम को भोजन करने के बाद हम सो जाते हैं।"

"एक समय भोजन, वह भी जो मिल जाए, खाकर भी ये इतने फिट कैसे हैं?" रूमी ने शेखर से कहा। "तुम तो जिम जाते हो, पौष्टिक भोजन करते हो, फिर भी इनकी तरह तेज नहीं चल पा रहे!" उसने हँसते हुए कहा तो शेखर मुसकराया।

"वैसे योगा तो तुम भी करती हो, अपने बारे में क्या कहना है?"

"यहीं रुको। हम भिक्षा लेकर आते हैं," मकानों की कुछ कतारें, जो शायद किसी बस्ती का हिस्सा थीं, सामने दिखीं तो एक साधु जिसका नाम कीरत था, उन्हें टोका। पैंतीस के आसपास की उम्र का वह साधु बहुत पतला था और हड्डियाँ और पसलियाँ शरीर पर ऐसे चमक रही थीं, मानो शस्त्र लपेटे हुए हों। बला की फुरती थी उसके अंदर।

"हम नहीं चल सकते आपके साथ?" शेखर ने हैरानी से पूछा।

"नहीं। और बेतुके प्रश्न करने से बचो। हमें ज्यादा बात करना पसंद नहीं। इस तरह हमारी ऊर्जा नष्ट होती है।" वयोवृद्ध साधु, जिसे सब बाबा नाथ कहकर पुकार रहे थे, ने सपाट स्वर में कहा और वे आगे बढ़ गए।

शेखर और रूमी वहीं एक पत्थर पर बैठ गए। बैठते ही उन्हें लगा कि सचमुच इस समय वे सुस्ताना चाहते हैं। शरीर में थकान थी तो मन में केवल सवाल जो उन्हें और थका रहे थे। रूमी डायरी में कुछ लिखने लगी। अपने बैग से पानी की बोतल निकालकर शेखर ने रूमी को देते हुए कहा, "इतना तो समझ आ गया है कि नागा साधु होना कोई मजाक नहीं है। संयम और साधना की कठिन परीक्षा के बाद ही किसी को नागा साधु की उपाधि दी जाती है।"

"वैसे तुम्हें इतना नाटक करने की जरूरत नहीं थी। और तो और मुझे नागा साध्वी बनना है, यह तीर भी छोड़ दिया। बहुत फेंकते हो तुम।" रूमी ने पानी की कुछ छींटें उस पर उछाल दीं।

"अनायास ही मुँह से निकल गया था। शायद डर से..." शेखर ने ठहाका लगाया।

"नागा साध्वी बनने की बात तो मैं सोच भी नहीं सकती, पर तुम्हारे दिमाग में कैसे आ गई यह बात?"

"कुंभ में देखा था नागा साध्वियों को भी," शेखर झेंपता हुआ बोला।

"वैसे सही कह रहे हो तुम। एक नया ही पहलू देखने को मिला यहाँ आकर...न जाने कितने बंद द्वार खुलते महसूस हो रहे हैं। अबूझा-सा परत-दर-परत खुल रहा है। कुंभ मेले में

भी कितने रहस्य सामने आए थे। यही नहीं, मेरी नजर में कुंभ मानव सभ्यता का एक जीवंत दस्तावेज है। जिसे जीवन को समझना हो, तो कहीं और भटकने के बजाय कुंभ देख आए। वहाँ जानने, समझने और महसूस करने के लिए बहुत कुछ है। कुंभ ऐसे साधकों से भी मिलवाता है, जो चरम भौतिकता का आस्वाद लेने के बाद उसकी निरर्थकता को समझ सत्य की खोज एवं जीवन के रहस्यों की तलाश व उससे परिचित होने के लिए जंगलों, पर्वतों की खाक छान रहे हैं या निर्जन से निर्जन जगहों पर भी धूनी रमाए बैठे हैं," अपने बैग में से सैंडविच का पैकेट निकालते हुए रूमी बोली। हालाँकि उसके बोलने के अंदाज से लग रहा था कि इस समय वह किसी और ही दुनिया में है।

"कई नागा संन्यासी उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और गुजरात में जूनागढ़ की गुफाओं या पहाड़ियों से आए हैं। नागा संन्यासी किसी एक गुफा में कुछ साल रहते हैं और फिर किसी दूसरी गुफा में चले जाते हैं। इस कारण इनकी सटीक स्थिति का पता लगा पाना मुश्किल होता है। एक से दूसरी और दूसरी से तीसरी इसी तरह गुफाओं को बदलते और भोले बाबा की भक्ति में डूबे ये नागा जड़ी-बूटी और कंदमूल के सहारे पूरा जीवन बिता देते हैं। कई नागा जंगलों में घूमते-घूमते सालों काट लेते हैं और अगले कुंभ या अर्धकुंभ में नजर आते हैं।

"लेकिन हम इस बात को भी नकार नहीं सकते कि कुंभ की जान अखाड़े हैं और अखाड़े नागा साधुओं से चलते हैं। अखाड़ों का अपना एक पूरा तंत्र है। अगर कुंभ में हैं तो अखाड़ों को समझे बिना यात्रा अधूरी रहती है, जैसी हमारी रही। मैं उन अखाड़ों में जाना चाहता हूँ। तुम्हें तो काफी जानकारी होगी उनके बारे में? हैरत की बात तो यह है कि उच्च शिक्षित युवा भी उनमें शामिल हो रहा है। कीरत को ही देख लो..."

रूमी अपनी डायरी खोलकर पढ़ने लगी, "वर्तमान अखाड़ों में सबसे बड़ा अखाड़ा जूना अखाड़ा है। इसके बाद निरंजनी और महानिर्वाणी अखाड़ा हैं। इनके अध्यक्ष श्री महंत और अखाड़ों के प्रमुख आचार्य महामंडलेश्वर के रूप में जाने जाते हैं। सभी अखाड़ों में निरंजनी अखाड़ा सबसे प्रसिद्ध है। इतना ही नहीं, दुनियावी पैमाने पर भी इसमें सबसे ज्यादा शिक्षित साधु-संत हैं, जो शैव परंपरा को मानने वाले हैं। जटा रखते हैं। इस अखाड़े के इष्टदेव कार्तिकेय हैं। जो देव सेनापति हैं। निरंजनी अखाड़े का प्रमुख स्थान दारागंज है। प्राचीन काल में जिस उद्देश्य से अखाड़ों की स्थापना की गई थी, अखाड़ों ने उसे पूरा करने में खुद को समर्पित कर दिया। विदेशी आक्रांताओं से जीवन के रक्षार्थ लड़ना भी जीवन साधना ही है। हालाँकि, अब अखाड़ों का प्रमुख कार्य धार्मिक आध्यात्मिक साधना ही है।

"और अगर शिक्षित साधुओं की बात करूँ तो कुंभ में रजत राय नाम के जिस साधु से मेरी मुलाकात हुई थी, उसकी उम्र 27 साल है। उन्होंने कच्छ से मरीन इंजीनियरिंग में डिप्लोमा हासिल किया हुआ है। और तो और 29 वर्षीय शंभु गिरि यूक्रेन से मैनेजमेंट ग्रेजुएट हैं। उज्जैन के रहने वाले 18 वर्षीय घनश्याम गिरि ने बारहवीं में टॉप किया था। उसने बताया था कि बोर्ड की परीक्षा के बाद उसे अपने उद्देश्य का अहसास हुआ। उस वक्त उसकी उम्र 16 साल थी और तब वह अपने गुरु महंत जयराम गिरि के आश्रम आ गया था। मुझे तो यही लगता है कि वैरागी जीवन जीते हुए वीतरागी हो जाने की यात्रा है संन्यासी होना। नागा साधुओं के जीवन का प्रमुख उद्देश्य और अंतिम लक्ष्य धार्मिक आध्यात्मिक साधना सिद्धि

से जीवन के अनुभवों को सघन करते हुए उसके पार निकल जाना है। बाहरी प्रलोभनों से खुद को मुक्त कर अस्तित्व की गहराई को समझना ही उनका एकमात्र साध्य है। तो क्या कहते हो, बनने को तैयार हो तुम भी नागा साधु?" रूमी ने डायरी बंद करते हुए परिहास किया।

शेखर मुसकराया और प्यार भरी नजरों से उसे देखा। "अभी तो अपने प्रेम में ही मुझे गोते लगाने दो, साधु कब बनना है बाद में सोचेंगे। लेकिन डॉक्यूमेंट्री फिल्म अवश्य बनाऊँगा इन पर। उठो, देखो वे नागा साधु आ रहे हैं।"

रूमी ने देखा भिक्षा लिए वे साधु उनकी ओर आ रहे थे। वह बोली, "भिक्षा मिल गई है। इन्हें भूखा नहीं रहना पड़ेगा।"

5

भस्म और तप

“कुछ दूर और तुम बस साथ चल सकते हो। इसके बाद लौटना होगा तुम दोनों को। मन में व्यग्रता बची रहे तो उज्जैन चले जाना या जहाँ भी जाना चाहो और हमारे किसी महामंडलेश्वर से जानकारी हासिल कर लेना,” बाबा नाथ ने जिस लहजे में कहा शेखर और रूमी को लगा कि अब उनसे हठ या आग्रह करने का कोई औचित्य नहीं है। वे दोनों बस उनके साथ कदम मिलाते हुए चलने लगे।

“लोगों को लगता है कि हम केवल तप करते हैं और भस्म शरीर पर लपेटे घूमते रहते हैं, लेकिन वास्तव में हम नागा साधु धर्म के कमांडो हैं। हम सनातन धर्म के कमांडो हैं। जब-जब सनातन धर्म पर संकट आया है और सारी उम्मीदें खत्म हो गई थीं, तब-तब धर्म की रक्षा का अंतिम युद्ध लड़ने हम आए। जब-जब राष्ट्र खतरे में आया, जब-जब देश की संस्कृति नष्ट होने के कगार पर खड़ी हुई, आक्रमणकारियों ने सिर उठाया, तब-तब प्रशिक्षित कमांडो की तरह हमने युद्ध किए। देश पर मर-मिटने की ललकार बनकर युद्ध किए। हम धर्म के फौजी हैं और सभ्यता और धर्म की रक्षा का अंतिम युद्ध लड़ते रहे हैं। हम विरासत के पहरेदार बनकर, हुंकार बनकर लड़े हैं। यह जान लो कि साधु के वेश में हम योद्धा ही हैं,” वह बोले।

“कीरत, अन्य साधु बहुत आगे निकल चुके हैं। मैं उनके साथ गुफा में पहुँचता हूँ। ये युवा हमारी गति को सँभालने में असमर्थ हैं। मैं आगे जा रहा हूँ। तुम रूको। संभवतः इनकी जिज्ञासा शांत कर पाओ।”

अनायास ही शेखर और रूमी के हाथ उनके सम्मान में जुड़ गए। रास्ते भर वह फोटो खींचता रहा था। उसने उनकी और तसवीरें कैमरे में कैद कर लीं। कुछ क्षण वे दोनों उन्हें जाता देखते रहे। लंबे-लंबे डग भरते वे आँखों से ओझल हो गए।

“बैठना चाहोगे या चलते-चलते ही बताऊँ?” यह देख कि दोनों की साँस फूल रही है, कीरत ने पूछा।

“चलते-चलते,” शेखर बहुत लज्जित महसूस कर रहा था। वह बोला, “एक बात बहुत उद्वेलित करती है कि क्या तपस्या करके नागा साधु अपने जीवन को अद्भुत बनाते हैं? भभूत में लिपटा पूरा शरीर, आँखों में दहकते आध्यात्मिक शक्ति के शोले, माथे पर त्रिपुंड्र, रुद्राक्ष से सुशोभित भुजाओं में शिव शक्ति का प्रतीक त्रिशूल और पत्थर से चेहरे पर भोले शंकर जय-जयकार का भाव...अपने परिवार का अंत, अपने-अपने रिश्तेदार का अंत और अपना अंत...क्या इसी से शुरू होता है आपके तिलिस्म का रहस्य?”

“ऐसा मान सकते हो। इसी तरह शुरू होती है हमारे नए जीवन की शुरुआत। यह सही है

कि जो नागा संन्यासी होते हैं उनके नए जीवन के अध्याय की शुरुआत उनके पुराने जीवन के अंत से ही होती है। अपने हाथों अपना अंतिम संस्कार, अपनी चौदह पीढ़ियों का पिंडदान, अपना पिंडदान, अगला-पिछला सब पिंडदान और नाम, गोत्र सब बदल दिए जाते हैं। न घर वापस लौट सकते हैं, न किसी से कोई सरोकार या संबंध रख सकते हैं। पिंडदान के इस संस्कार के बाद जैसे ही संगम में डुबकी लगाई जाती है, तभी हमारा परिचय मिट जाता है। मान लिया जाता है कि हमारा कोई अतीत नहीं है। माँ-बाप, भाई-बहन, अब तक के जीवन के सारे चिह्नों, सारे संबंधों को मिटाकर ही हम संगम से बाहर निकलते हैं।

"अपने अस्तित्व को मिटाकर जब संगम से बाहर निकलते हैं तो हम धर्म की राह पर निकलने को तैयार होते हैं। एक ही उद्देश्य होता है धर्म की रक्षा करना और हर-हर महादेव का नारा लगाना। सबसे पहले अपने ही घर से भिक्षा लेने जाना होता है।"

"ऐसा क्यों? परिवार वालों को कितनी तकलीफ होती होगी उसका वह रूप देखकर? अपरिचित बन उनसे भिक्षा माँगना? कठिन होता होगा?" रूमी अवाक् थी। उसकी आँखों में एक दर्द लहरा उठा था। "आखिर कौन-सी माँ, कौन-सा पिता अपने बच्चे को ऐसे रूप में देख सकता है!"

"उन्हें अवश्य होती होगी, लेकिन हमें नहीं। जब साधु बनने के बाद कोई अपना परिचय ही नहीं रहता, तो कैसी तकलीफ? ऐसा नियम इसलिए है, ताकि वे सांसारिकता के हर बंधन से स्वयं को मुक्त कर सकें। अतीत से मुक्त हो सकें।"

"जब सब तर्पण कर दिया तो किसलिए तप करते हैं? किसलिए शस्त्र उठाते हैं? इतिहास गवाह है कि जब-जब धर्म को बचाने के लिए अंतिम कोशिशें बेकार होती दिखी हैं, तब-तब इन नागा साधुओं ने शस्त्र उठाए हैं और जान लेकर, जान देकर धर्म की रक्षा की है। आप स्वयं को धर्म की रक्षा करने वाले कमांडो कहते हैं," शेखर शायद किसी विरोधाभास से जूझ रहा था उस समय।

"हम शास्त्र और शस्त्र दोनों के प्रतीक हैं। भारतीय सनातन धर्म के वर्तमान स्वरूप की नींव आदिगुरु शंकराचार्य ने रखी थी। शंकराचार्य का जन्म आठवीं शताब्दी के मध्य में हुआ था, जब भारतीय जनमानस की दशा और दिशा बहुत बेहतर नहीं थी। भारत की धन-संपदा से आकर्षित हो तमाम आक्रमणकारी यहाँ आ रहे थे। कुछ उस खजाने को अपने साथ वापस ले गए तो कुछ भारत की दिव्य आभा से ऐसे मोहित हुए कि यहीं बस गए। सामान्य शांति-व्यवस्था पूर्णतया बाधित हो गई थी उनकी वजह से। ईश्वर, धर्म, धर्मशास्त्रों को तर्क, शस्त्र और शास्त्र सभी तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा था।

"ऐसे में शंकराचार्य ने सनातन धर्म की स्थापना के लिए कई कदम उठाए जिनमें से एक था देश के चार कोनों पर चार पीठों का निर्माण करना। ये थीं गोवर्धन पीठ, शारदा पीठ, द्वारिका पीठ और ज्योतिर्मठ पीठ। इसके अलावा आदिगुरु ने मठों-मंदिरों की संपत्ति को लूटने वालों और श्रद्धालुओं को सताने वालों का मुकाबला करने के लिए सनातन धर्म के विभिन्न संप्रदायों की सशस्त्र शाखाओं के रूप में अखाड़ों की स्थापना की शुरुआत की। आदिगुरु शंकराचार्य को लगने लगा था सामाजिक उथल-पुथल के उस युग में केवल आध्यात्मिक शक्ति से ही इन चुनौतियों का मुकाबला करना काफी नहीं है। उन्होंने जोर

दिया कि युवा साधु व्यायाम करके अपने शरीर को सुदृढ़ बनाएँ और हथियार चलाने में भी कुशलता हासिल करें। इसलिए ऐसे मठ बने, जहाँ इस तरह के व्यायाम या शस्त्र संचालन का अभ्यास कराया जाता था, ऐसे मठों को अखाड़ा कहा जाने लगा।

"आम बोलचाल की भाषा में भी अखाड़े उन जगहों को कहा जाता है जहाँ पहलवान कसरत के दाँवपेच सीखते हैं। कालांतर में कई और अखाड़े अस्तित्व में आए। शंकराचार्य ने अखाड़ों को सुझाव दिया कि मठ, मंदिरों और श्रद्धालुओं की रक्षा के लिए जरूरत पड़ने पर शक्ति का प्रयोग करें। इस तरह बाह्य आक्रमणों के उस दौर में इन अखाड़ों ने एक सुरक्षा कवच का काम किया।

"अखाड़ा एक तरह का मठ ही होता है, जहाँ साधुओं को न सिर्फ ज्ञान दिया जाता है, बल्कि उन्हें हर तरह की लड़ाई और सैन्य परंपराओं के लिए भी तैयार किया जाता है। अखाड़ों के संचालन के लिए नागा साधुओं का वरीयता क्रम होता है, जिसके अनुसार वह कोतवाल, बड़ा कोतवाल, पुजारी, भंडारी, कोठारी, बड़ा कोठारी, महंत और सचिव जैसे प्रशासनिक पद पाते हैं। अखाड़ों के आकार और महत्त्व के आधार पर उनके अध्यक्षों को महंत, श्रीमहंत, जमातिया महंत, थानापति महंत, महंत दिगंबर श्री, महामंडलेश्वर और आचार्य महामंडलेश्वर नामक पद प्रदान किए जाते हैं। नागा साधु एक सैन्य पंथ की तरह ही प्रशिक्षित होते हैं और उनकी पदावली भी एक सैन्य रेजीमेंट की तरह होती है। आपने देखा होगा कि नागा साधु हमेशा अपने साथ त्रिशूल, तलवार, भाला और गदा जैसे शस्त्र रखते हैं।

"नागा साधुओं के दो अंग माने गए हैं—शस्त्रधारी और शास्त्रधारी। शस्त्रधारियों ने मल्ल विद्या सीखी और शास्त्रधारी शास्त्रों के अध्ययन में लगे। शस्त्रधारियों का संगठित रूप ही अखाड़े में दिखाई देता है।

"हिमालय के सुदूर इलाकों में बिना वस्त्रों के नागा साधु दिख जाएँगे, लेकिन जब वे लोगों के बीच आते हैं तो लँगोट धारण कर लेते हैं। वे हमेशा अपने साथ शस्त्र भी रखते हैं और शस्त्रधारी नागाओं के अलग-अलग गुट हैं। जिन्हें अवधूत, औघड़ी, महंत, श्मशानी, कापालिक आदि नामों से जाना जाता है। नागा साधुओं को चार पद प्राप्त होते हैं जो हैं कुटीचक, बहूदक, हंस और परमहंस। किसी भी नागा साधु के लिए परमहंस पद प्राप्त करना अत्यंत दुर्लभ मन जाता है।

"नागा साधुओं की परंपरा कोई आज की नहीं है, बल्कि हजारों सालों से चली आ रही है। इस परंपरा के चिह्न हमें मोहनजोदड़ो के सिक्कों और तसवीरों में मिलते हैं, जहाँ नागा साधु पशुपति नाथ के रूप में भगवान् शिव की पूजा करते हुए मिलते हैं। कहा जाता है सिकंदर और उसके सिपाही जब भारत आए थे, तब उनकी मुलाकात नागा साधुओं से हुई थी। यही नहीं, नागा साधुओं की तपस्या और मातृभूमि के प्रति समर्पण से भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर भी काफी प्रभावित थे।"

रास्ते से गुजरने वाले लोग उन्हें आश्चर्यभरी नजरों से घूर रहे थे। हालाँकि बस्ती पीछे छूट गई थी और वे निर्जन रास्ते पर थे, पर कुछ लोग वहाँ थे। संभवतः पर्यटक या गाँव या बस्ती में रहने वाले जो किसी काम से निकले हों।

6

कीरत की डायरी

"आप इतने युवा हैं। पढ़े-लिखे भी हैं, आपके मन में नागा साधु बनने का विचार कैसे आया? किसी ने बाध्य किया था क्या?" शेखर ने पूछा। आखिर क्या वजह रही होगी, जो वह साधु बना और वह भी नागा साधु?

कीरत रुक गया। "तुम्हारे सवाल और कौतूहल का अंत संभव होता प्रतीत नहीं हो रहा, लेकिन अब तुम्हें लौटना होगा और आगे का रास्ता स्वयं तय करना होगा। देखो तो बात करते-करते हम इतने मग्न हो गए कि लगभग गुफा तक ही पहुँच गए हैं। जय महादेव!"

"शेखर के प्रश्न का उत्तर तो दे दें। बहुत स्वाभाविक प्रश्न है। किसी के मन में भी उठ सकता है। आप कहाँ तक पढ़े हैं?" इस बार रूमी ने पूछा था।

"पहले तो यह जान लो कि नागा साधु बनने के लिए कभी बाध्य नहीं किया जाता है। बल्कि कोई व्यक्ति अगर कहता भी है कि वह नागा साधु बनना चाहता है तो पहले उसके बारे में पूरी छानबीन की जाती है। सब बताया तो तुम लोगों को बाबा नाथ ने। जहाँ तक बात मेरी शिक्षा की है तो मैंने एम.एस.सी. किया है। प्रयागराज में कुंभ के दौरान मैं भी नागा साधुओं पर रिसर्च करने के उद्देश्य से ही गया था। केवल जिज्ञासा थी, जैसे तुम दोनों को है। सोचा नहीं था कि मैं उनसे इतना प्रभावित हो जाऊँगा कि घर-परिवार, समाज सब छोड़ दूँगा। मुझे महामंडलेश्वर को यकीन दिलाने में काफी समय लगा कि मैं वास्तव में उनकी दुनिया का हिस्सा बनना चाहता हूँ। तुम्हारी तरह मैंने उनके साथ न तो कोई मजाक किया था न ही खिलवाड़। मेरा निश्चय अटल था। क्यों मेरे मन ने मुझे इस ओर धकेला, इसका मेरे पास कोई जवाब नहीं है और शायद किसी के पास भी नहीं होता। इसलिए कुछ बातों को नियति पर छोड़ देना ही श्रेयस्कर है।"

"तो फिर..."

"तुम्हारे सवालों का अंत असंभव है।" कीरत तेज कदमों से आगे बढ़ गया।

शेखर और रूमी न जाने कितनी देर वहीं खड़े कीरत को जाते देखते रहे। या शायद वे भीतर ही भीतर जिस सवाल-जवाब के चक्रव्यूह में स्वयं को फँसा पा रहे थे, उसमें से निकलने की राह ढूँढ़ रहे थे।

तभी उन्होंने देखा एक साधु दौड़ता हुआ कीरत की ओर आ रहा है। रास्ते में उसका नाम सुना था...रत्नाकर था। पचास वर्ष का होगा, लेकिन शरीर का गठन ऐसा था कि युवाओं को मात दे दे। नग्न शरीर पर भस्म लगे होने के बावजूद, ढेर सारी रुद्राक्ष की मालाएँ गले से लेकर नाभि तक झूलने के बावजूद...देह का सौष्ठव छिप नहीं रहा था। अगर जटाएँ न होतीं और बढ़ी हुई बेतरतीब दाढ़ी न होती तो अवश्य ही कामदेव का अवतार लगता।

उसने कीरत के हाथ में कुछ थमाया। पुलिंदा-सा था। कीरत उसे उलट-पलटकर देखने लगा। उसके चेहरे पर चमक आ गई।

"शेखर," वह दौड़ता हुआ उन तक आया।

"बाबा नाथ ने तुम्हारे लिए कुछ भेजा है। दरअसल ये मेरे ही द्वारा लिखे कुछ नोट्स हैं, जिन्हें मैंने डायरी में तब दर्ज किया था, जब नागा साधु बनने से पहले उनके इतिहास को टटोल रहा था। इसके द्वारा तुम्हें नागा साधुओं के योद्धा पहलू की जानकारी मिल जाएगी। जब तुम्हारा काम हो जाए तो इसे उज्जैन में महामंडलेश्वर गिरनाथजी को दे देना। ईश्वर तुम दोनों की यात्रा सफल करे और उद्देश्य की प्राप्ति हो।"

रूमी ने झट से शेखर के हाथ से ऐसे डायरी ली, मानो कोई खजाना हाथ लग गया हो।

"अब क्या करना है?" शेखर ने पूछा।

"मतलब?" रूमी का ध्यान केवल डायरी पर था।

"उज्जैन जाना चाहती हो या घर लौट जाना चाहिए?"

उज्जैन पहुँचने में समय लगेगा। पहले घर जाना ही ठीक रहेगा। डायरी पढ़ने से काफी कुछ समझ आ जाएगा और जो समझ नहीं आएगा तो मुझे लगता है मेरे इतिहास के प्रोफेसर और गाइड डॉ. दीपांकर वाचस्पति इस डायरी को पढ़ हमें ज्यादा बेहतर ढंग से नागा साधु के इतिहास और धर्मरक्षक के साथ-साथ उनके योद्धा बनने की वजह समझा पाएँगे।"

एयरपोर्ट जाने के लिए टैक्सी में बैठते ही रूमी ने अपने बैग से डायरी को निकाल लिया। वह काफी मोटी थी। उस पर लाल रंग के मखमल का आवरण था और किनारों पर बारीक सुनहरी किनारी थी। डायरी के पहले पृष्ठ पर हर-हर महादेव लिखा था। अगले पृष्ठ पर लिखा था, 'ब्रजेश त्रिपाठी।'

"प्रतीत होता है कि कीरत का वास्तविक नाम ब्रजेश त्रिपाठी है।"

"हो सकता है, क्योंकि नागा साधु बनने के लिए सबसे पहले अपनी पहचान का ही तो पिंडदान करना होता है। नागा साधु बनने से पहले उसने जितना भी शोध किया है उनके बारे में, सब इसमें दर्ज है। इसे छोड़कर नहीं आ पाया होगा वह शायद...बाबा नाथ ने इसे रखने की अनुमति दे दी होगी संभवतः। अच्छा है न, वरना उसकी मेहनत व्यर्थ जाती। कम-से-कम हमारे काम तो आएगी और हम भी उनके इतिहास, वीरता, कड़ी तपस्या और जीवन के बारे में समझ और समझा सकेंगे," शेखर की आँखों में एक चमक आ गई थी।

"तुम्हारी दिलचस्पी मुझे हैरान कर रही है," रूमी बोली।

"सब तुम्हारे लिए ही तो कर रहा हूँ," शरारत शेखर की आँखों में चमक रही थी।

रूमी ने उसे ऐसे देखा मानो कह रही हो मैं सब जानती हूँ। फिर बोली, "नागा साधुओं के बारे में आमतौर पर लोगों की राय भ्रमित करने वाली है, जो ज्यादातर लोगों ने कुंभ के मेले में उन्हें नग्नावस्था में घूमते देख बनाई है," रूमी ने डायरी का अगला पन्ना खोला और बोली, "शुरुआत में अखाड़ों के बारे में लिखा है। ब्रजेश या कीरत, जो भी कहो, इनकी लिखावट कितनी सुंदर है। मोती की तरह लग रहा है एक-एक अक्षर। वह भी चाहता तो डिजिटल दुनिया का सहारा ले, सब कुछ टाइप कर सकता था। वैसे डायरी लिखकर हमारा भला ही किया है।"

“एयरपोर्ट पहुँचने में बहुत समय लगेगा। तुम पढ़ो, इस तरह सफर भी कट जाएगा। लिखावट सुंदर है तो पढ़ने में कोई दिक्कत भी नहीं आएगी। तुम जानती हो, इस मामले में मैं बहुत आलसी हूँ। जब तक लैपटॉप सामने न हो, मैं कुछ नहीं पढ़ सकता।”

रूमी सीट पर आराम से बैठते हुए पढ़ने लगी, “अखाड़े नागा साधुओं के निवास-स्थान मात्र नहीं हैं, अपितु उनका एक गौरवशाली सैनिक इतिहास भी रहा है। भारत के सैन्य इतिहास में दशनामी अखाड़ों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अखाड़ा शब्द मुगलकाल से प्रचलन में आया। इतिहासकारों का मानना है कि भारत में नागा संप्रदाय की परंपरा प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही है। इतिहासकारों का मानना है, ‘सिंधु की घाटी के प्राचीन नगर मोहनजोदड़ो की खुदाई के दौरान वहाँ मुद्रा तथा उस पर पशुओं द्वारा पूजित एवं दिगंबर रूप में विराजमान पशुपति की प्रतिमा इस बात का प्रमाण है कि वैदिक साहित्य में भी ऐसे जटाधारी तपस्वियों का उल्लेख मिलता है।’

“आदि शंकराचार्य ने सदियों पहले बौद्ध धर्म के बढ़ते प्रसार और मुगलों के आक्रमण से हिंदू संस्कृति को बचाने के लिए अखाड़ों की स्थापना की थी। शाही सवारी, हाथी-घोड़े की सजावट, घंटा-नाद, नागा-अखाड़ों के करतब और तलवार और बंदूक का खुलेआम प्रदर्शन अखाड़ों की पहचान है। यह साधुओं का वह दल है, जो शस्त्र विद्या में पारंगत होता है। अखाड़ों से जुड़े संतों के मुताबिक जो शास्त्र से नहीं मानते, उन्हें शस्त्र से मनाने के लिए अखाड़ों का जन्म हुआ। इन अखाड़ों ने स्वतंत्रता संघर्ष में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आजादी के बाद इन अखाड़ों ने अपना सैन्य चरित्र त्याग दिया था। शुरू में सिर्फ 4 प्रमुख अखाड़े थे, लेकिन वैचारिक मतभेद की वजह से उनका बँटवारा होता गया।

“परंपरा के मुताबिक शैव, वैष्णव और उदासीन पंथ के संन्यासियों के मान्यता प्राप्त कुल 13 अखाड़े हैं। इन अखाड़ों का नाम निरंजनी अखाड़ा, जूना अखाड़ा, महानिर्वाण अखाड़ा, अटल अखाड़ा, आह्वान अखाड़ा, आनंद अखाड़ा, पंचाग्नि अखाड़ा, नागपंथी गोरखनाथ अखाड़ा, वैष्णव अखाड़ा, उदासीन पंचायती बड़ा अखाड़ा, उदासीन नया अखाड़ा, निर्मल पंचायती अखाड़ा और निर्मोही अखाड़ा है। प्रत्येक अखाड़े के शीर्ष पर महंत आसीन होते हैं।

“अखाड़ा यूँ तो कुश्ती से जुड़ा हुआ शब्द है, मगर जहाँ भी दाँव-पेच की गुंजाइश होती है, वहाँ इसका प्रयोग भी होता है। पहले आश्रमों के अखाड़ों को बेड़ा अर्थात् साधुओं का जत्था कहा जाता था। पहले अखाड़ा शब्द का चलन नहीं था। साधुओं के जत्थे में पीर होते थे। अखाड़ा शब्द का चलन मुगलकाल से शुरू हुआ। हालाँकि, कुछ ग्रंथों के मुताबिक अलख शब्द से ही ‘अखाड़ा’ शब्द की उत्पत्ति हुई है। जबकि धर्म के कुछ जानकारों के मुताबिक साधुओं के अक्खड़ स्वभाव के चलते इसे अखाड़ा का नाम दिया गया है।

“माना जाता है कि अखाड़ों का संगठन सैन्य आधार पर किया गया था। अखाड़ों को ‘मिलिटरी रेजीमेंट’ की संज्ञा भी प्रदान की गई है। नागाओं के दल के ठहरने के स्थान को एक समय में छावनी कहा जाता था तथा इस्लामी संस्कृति से प्रभावित सैनिक पदों का प्रयोग भी अखाड़ों के लिए किया जाता रहा है। उत्तर भारत के राजनीतिक जीवन में अखाड़ों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है।

“आरंभ में अखाड़ों को नागा साधुओं ने केवल धार्मिक गतिविधियों तक ही सीमित रखा था। केवल धार्मिक स्थलों की सुरक्षा हेतु ही उन्होंने शस्त्रों का प्रयोग किया। लेकिन बाद में वे पेशेवर सैनिक बन गए और उत्तर-मुगलकाल में उत्तर भारत की राजनीति में ‘एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य’ के रूप में उनका उदय हुआ। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उन्होंने पूर्वी और उत्तरी भारत के सभी निर्णायक युद्धों में भाग लिया।

“अठारहवीं शताब्दी में भारत में राजनीतिक संगठनों, सामाजिक संस्थाओं, आर्थिक जीवन तथा अवस्था में दूरगामी परिवर्तन हुए। मुगल साम्राज्य का तीव्रता से पतन हुआ। मराठों द्वारा देश पर एकाधिकार करने का प्रयत्न असफल रहा। ब्रिटिश व्यापारी एक नए प्रकार के साम्राज्य की नींव डालने में सफल रहे। नागा संन्यासियों का न सिर्फ उत्तर भारत की राजनीति में दखल बना रहा, वरन् भारतीय राजाओं और ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी इनके साथ समझौता किया।

अठाहरवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नागा योद्धा राजेंद्र गिरि, गोसाईं नागा योद्धा समुदाय के अग्रदूत के रूप में अवतरित हुए। उनका आरंभिक जीवन बुदेलखंड में गुजरा था। उन्होंने अपने शिष्यों को लाठी, बल्लम, फड़, अखाड़े व कुश्ती की शिक्षा देकर युद्ध-विद्या में निपुण कर दिया था और उन्हें अखाड़ों के आधार पर चार वर्गों—आनंद अखाड़ा, अमान अखाड़ा, आखात अखाड़ा तथा जूना अखाड़ा में विभक्त कर दिया था, जो कालांतर में ‘बाबा सेना’ या ‘गोसाईं सेना’ के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे...”

“एयरपोर्ट पहुँच गए हैं,” शेखर ने रूमी को टोका। “बहुत दिलचस्प है सब। और तुम्हारे सुनाने का ढंग, उसके तो कहने ही क्या! तभी तो कॉलेज में हर भाषण और निबंध प्रतियोगिता जीत लेती हो।”

“मेरी तारीफ करना बंद करो और सामान निकालो,” शेखर की ओर प्यार भरी दृष्टि डालते हुए वह बोली। शेखर ने उसके गाल सहलाए तो रूमी के चेहरे पर लाली छा गई।

7

टूटा सिकंदर का दर्प

फ़्लाइट में बैठते ही रूमी ने फिर से डायरी खोल ली। वह लगातार पन्ने बदल रही थी। सब उसे बहुत रहस्यमय और गूढ़ लग रहा था। लगातार उसकी पलकें झपकी जा रही थीं। बेशक वह स्वयं इतिहास की छात्रा है, लेकिन फिर भी कठिन हो जाता है उसकी गहराइयों को समझना। नागा साधुओं का इतिहास तो वैसे भी बहुत विस्मित करने वाला लग रहा था उसे। वैसे भी इससे पहले इतने विस्तार से पढ़ा भी नहीं था कुछ खास उनके बारे में। दूसरे लोगों की तरह वह भी तो इनको हिप्पियों का साम्य मान रही थी, जो जहाँ चाहे घूमते रहते हैं और मस्ती में रहने के लिए चिलम फूँकते हैं या नशा करते हैं। अभी तो उसने रिसर्च पेपर लिखना शुरू ही किया था। इसलिए जिज्ञासा से वह पृष्ठ पलटते जा रही थी। इस समय शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से थकान महसूस होने के कारण वह कुछ बहुत सरल वर्णन या कहानी पढ़ना चाहती थी।

"थोड़ी देर आँखें बंद करके आराम कर लो, रूमी। फ़्लाइट लंबी है और हम थके हुए भी हैं। मुझे तो नींद आ रही है। घर जाकर पढ़ लेना डायरी। अभी तो यह हमारे पास ही रहेगी कुछ दिनों तक जब तक हमारा उज्जैन जाना नहीं होगा," शेखर ने रूमी के हाथ को सहलाते हुए कहा।

"हूँ," रूमी ने कहा और सीट पर सिर टिकाकर आँखें बंद कर लीं। फ़्लाइट के उड़ान भरने की घोषणा हो चुकी थी।

"मैम, जूस," परिचारिका की आवाज से चौंकी रूमी। शायद उसे झपकी आ गई थी। थकान महसूस करने के बावजूद दिमाग में उथल-पुथल चल रही थी। एक अजीब-सी बेचैनी भी महसूस कर रही थी।

शेखर गहरी नींद में सोया हुआ था। जूस पीकर कुछ राहत महसूस की उसने। सोने का कोई फायदा नहीं, उसने सोचा। वैसे भी अभी परिचारिका डिनर सर्व करना शुरू कर देगी। डायरी के पृष्ठ बदलते-बदलते रूमी की नजरें एक जगह रुक गईं। शीर्षक था, 'सिकंदर और नागा साधु का संवाद'। वह उसे पढ़ने लगी।

"मैं दुनिया के आखिरी छोर तक अपना राज कायम करूँगा, भले मेरी सेना साथ दे, न दे," गर्व से चूर, महत्त्वाकांक्षी सिकंदर ने सामने खड़ी सेना से कहा।

उसकी सेना अचरज से उसे देख रही थी। 'आखिर और कितना पाना चाहता है वह?' यह सवाल उनके मन में घूम रहा था, लेकिन वे उसका साथ नहीं छोड़ सकते थे।

सिकंदर सिर्फ बीस वर्ष की आयु में मेसिडोनिया का राजा बन गया था, तभी से विश्व को जीत लेने का सपना उसकी आँखों में पलने लगा था। अपने पिता की एशिया माइनर को

जीतने की इच्छा को पूरी करने के लिए अपने सैनिकों, हथियारों और लश्कर के साथ निकल पड़ा। इसके बाद लगातार सिकंदर को एक के बाद सफलता मिलती गई और वह अपने उद्देश्य की ओर तेजी से बढ़ने लगा। कई छोटे-बड़े राज्यों को जीतने के बाद वह मिस्र तक जा पहुँचा। जहाँ उसने अलेक्जांड्रिया नाम का एक नया राज्य बसाया। यहाँ उसने एक विश्वविद्यालय की स्थापना की, साथ ही अन्य कई इमारतों का निर्माण करवाया।

"हमने तुर्की, सीरिया, मिस्र और ईरान को जीत लिया है और मैं समृद्धि और धन के भंडार भारत पर विजय हासिल करना चाहता हूँ।

"हेरोडोटस और अन्य यूनानी लेखकों से मैंने भारत के बारे में बहुत कुछ जाना है। इसका भूगोल और प्राकृतिक इतिहास मुझे आकर्षित करता है।"

ईरान पर विजय प्राप्त करने के बाद सिकंदर ने काबुल की ओर प्रस्थान किया था, जहाँ से वह खैबर दर्रा पार करके भारत में आया और सिंधु नदी पर पहुँचा। सिकंदर ने कई छोटे गणराज्यों पर विजय प्राप्त की और भारतीय उपमहाद्वीप में वापस अपना रास्ता बनाया। भारत में युद्ध में बिताए गए उसके 19 महीने (326-325 ईसा पूर्व) सबसे कठिन थे। विजय अभियान शुरू करने से पहले उसके पास अपनी विजय की योजना बनाने के लिए बहुत समय नहीं था। इसके बावजूद उसने अपनी कुछ योजनाएँ बनाईं। उसके द्वारा जीते गए अधिकांश राज्यों को राजा के शासन में वापस कर दिया गया, जिन्होंने उसकी इच्छा पूरी कर दी। हालाँकि, उसके क्षेत्र को तीन टुकड़ों में विभाजित किया गया था, जिनमें से प्रत्येक का प्रशासन एक अलग यूनानी गवर्नर द्वारा किया जाता था। सिकंदर की विजय के परिणामस्वरूप, प्राचीन यूरोप और भारत का सार्वकालिक पहला मुकाबला हुआ। इसके कई महत्त्वपूर्ण परिणाम हुए। सिकंदर का भारत पर आक्रमण एक जबरदस्त सफलता थी। हालाँकि, भारत में यूनानी भूमि पर जल्द ही मौर्य वंश के शासकों ने कब्जा कर लिया, जिन्होंने एक विशाल भारतीय प्रांत को अपने साम्राज्य में जोड़ा, फिर भी यूनानियों की देश में उपस्थिति थी।

तक्षशिला का राजकुमार आंभी और पोरस, जिनका प्रभुत्व झेलम और चिनाब के बीच था, इन क्षेत्रों के दो राजा थे। उसके आक्रमण करते ही तक्षशिला के राजकुमार आंभी ने तुरंत आत्मसमर्पण कर दिया। झेलम नदी पार करते समय सिकंदर को पोरस के पहले और सबसे कठिन विरोध का सामना करना पड़ा। पोरस पर सिकंदर की जीत के बावजूद भारतीय राजकुमार की निर्भीकता और साहस ने उसका ध्यान खींचा। परिणामस्वरूप, उसने उसका राज्य उसे लौटा दिया। वह पूर्व की ओर जाना चाहता था, लेकिन उसके सैनिकों ने उसके साथ शामिल होने से इनकार कर दिया। युद्ध से थकी हुई और रोगग्रस्त यूनानी सेना वापस लौटना चाहती थी। भारत की प्रचंड गरमी उन्हें सहन नहीं हो रही थी।

नागा साधुओं से कई बार सिकंदर की मुलाकात हुई और हर बार वह विस्मित हुआ। एक बार जब उसे सिंधु के तट पर एक नागा साधु मिला तो उसने गौर किया कि वह बहुत देर से एक पत्थर पर बैठकर आसमान की तरफ देख रहा है। सिकंदर ने पूछा, 'तुम क्या कर रहे हो?'

नागा साधु ने तटस्थता से जवाब दिया, 'शून्य को महसूस कर रहा हूँ।'

सिकंदर हतप्रभ-सा खड़ा कुछ और पूछता, उससे पहले ही साधु ने सिकंदर से पूछा, 'तुम क्या कर रहे हो?'

सिकंदर ने बहुत गर्व और शान से उत्तर दिया, 'मैं दुनिया जीत रहा हूँ। मैं दुनिया के अंतिम कोने तक जाना चाहता हूँ, पर तुम तो एक ही जगह बैठे रहते हो।' फिर वह जोर से हँसने लगा।

उसका उत्तर सुनकर नागा साधु को भी हँसी आ गई। सिकंदर को लगा कि यह साधु मूर्ख है, जो एक जगह बैठा हुआ है। साधु बोला, 'दुनिया में अंतिम तो कुछ भी नहीं।'

सिंधु नदी के तट पर ही सिकंदर की और नागा साधुओं से भेंट हुई और वह उनके ज्ञान, दर्शन और जीवन के प्रति समझ को देखकर हैरान रह गया। प्लूटार्क, जो एक यूनानी जीवनी लेखक और निबंधकार था, ने नागा साधुओं के लिए जिम्नोसोफिस्ट 'Gymnosophists' शब्द का प्रयोग किया था। इसका अर्थ होता है 'ज्ञानी नागा'। उसने अपने एक वर्णन में लिखा—'सिकंदर ने दस नागाओं को गिरफ्तार किया, जिन्होंने यूनानी सेना के खिलाफ विद्रोह को बढ़ावा दिया था। ये नागा चालाक थे और किसी भी तरह के सवालों के जवाब देने के लिए प्रसिद्ध थे। इसलिए सिकंदर उनसे मुश्किल सवाल पूछना चाहता था। सिकंदर ने शर्त रखी कि गलत जवाब देने वाले को तुरंत ही मार दिया जाएगा। नागाओं ने सभी सवालों के सही जवाब दिए। सिकंदर अचंभित था। उसने सभी नागाओं को इनाम देकर विदा किया।'

चूँकि वर्षों से युद्ध लड़ती सिकंदर की सेना बहुत थक चुकी थी। सैनिकों की इच्छा का सम्मान करते हुए सिकंदर ने वापस लौटने का फैसला लिया। उसे एक ज्ञानी संत की तलाश थी, जिसे वह अपने साथ ले जाना चाहता था। कुछ लोगों से रास्ता पूछता हुआ वह अपनी फौज के साथ एक नागा साधु के पास पहुँचा। सिकंदर ने देखा कि वह साधु बिना कपड़ों के पेड़ के नीचे ध्यान कर रहा है। वह और उसकी फौज साधु के ध्यान से बाहर आने की प्रतीक्षा करने लगे। जैसे ही साधु का ध्यान टूटा, पूरी फौज एक स्वर में नारा लगाने लगी—'एलेक्जेंडर द ग्रेट! एलेक्जेंडर द ग्रेट!' नागा साधु उन्हें देखकर मुसकराया।

सिकंदर ने आदेशात्मक स्वर में कहा, 'मैं भारत से लौटते समय आपको अपने साथ ले जाना चाहता हूँ।'

साधु ने बड़े धैर्य से जवाब दिया, 'तुम्हारे पास ऐसा कुछ भी नहीं है, जो तुम मुझे दे सको। ऐसा कुछ नहीं है, जो मेरे पास न हो। मैं जहाँ हूँ, जैसा हूँ, खुश हूँ। मुझे यहीं रहना है। मैं तुम्हारे साथ नहीं आ सकता।'

यह सुनकर सिकंदर की फौज को बहुत गुस्सा आया कि आखिर एक मामूली साधु उनके सम्राट् की इच्छा को कैसे नकारने की हिम्मत कर सकता है!

'आप सब शांत हो जाओ,' सिकंदर ने अपनी फौज से कहा। फिर साधु से बोला, 'मुझे जवाब में 'नहीं' सुनने की आदत नहीं है। आपको मेरे साथ चलना ही होगा।'

'तुम मेरी जिंदगी के फैसले नहीं ले सकते हो। मैंने फैसला किया है कि मैं यहीं रहूँगा तो मैं

यहीं रहूँगा। तुम जा सकते हो,’ नागा साधु ने सिकंदर को आदेश दिया।

सिकंदर को ऐसे जवाब की उम्मीद नहीं थी, आखिर वह एक विजेता था। वह गुस्से से आगबबूला हो गया। उसने अपनी तलवार निकाली और साधु की गरदन पर रख दी। ‘अब बताओ, जिंदगी चाहिए या मौत?’ सिकंदर ने पूछा।

‘अगर तुम मुझे मार दो तो अपने आपको फिर कभी सिकंदर महान् या जैसे कि तुम्हारी फौज तुम्हें कहती है, एलेक्जेंडर द ग्रेट, मत कहना। क्योंकि तुम्हारे में महान् जैसी कोई बात नहीं है। तुम तो मेरे गुलाम के गुलाम हो।’

यह सुनकर सिकंदर को झटका लगा। वह एक ऐसा सम्राट् है, जिसने पूरी दुनिया को जीता है और एक साधु उसे अपने दास का दास बता रहा है। ‘तुम कहना क्या चाहते हो? इस बात से तुम्हारा अभिप्राय क्या है?’

‘मैं जब तक नहीं चाहता, तब तक मुझे क्रोध नहीं आता। क्रोध मेरा गुलाम है। जबकि गुस्से का जब मन करता है, वह तुम पर हावी हो जाता है। तुम अपने गुस्से के गुलाम हो। भले ही तुमने पूरी दुनिया को जीता हो, तुमने कई योद्धाओं को पराजित किया होगा, पर क्रोध से नहीं जीत पाए। इसलिए रहोगे तो मेरे दास के दास।’

यह सुनकर सिकंदर दंग रह गया। वह श्रद्धा से साधु के आगे नतमस्तक हो गया। सिकंदर का दर्प चूर-चूर हो गया और वह अपनी फौज के साथ वापस लौट गया।

“शेखर उठो, डिनर आ गया है।”

जँभाई लेते हुए उसने पूछा, “डायरी तुम्हारे हाथ में है और उसके पन्ने खुले हुए हैं। इसका अर्थ है तुम सोई नहीं?”

“बहुत मजेदार किस्सा पढ़ रही थी। सिकंदर जब भारत आया तो उसने कई नागा साधुओं से मुलाकात की थी और हर बार उसे एक नया अनुभव हुआ। और मेरे सामने भी उन नागा साधुओं की विद्वत्ता के नए पहलू खुल रहे हैं। नागा साधुओं से मिलने की अभी तो और भी घटनाएँ दर्ज हैं इसमें। खाना खाकर पढ़ूँगी। तुम चाहो तो साथ में पढ़ सकते हैं। अब फ्लाइट में तो मैं तुम्हें पढ़कर सुनाने से रही,” रूमी ने मजाक किया।

“सिकंदर के बारे में तो मैं भी बहुत कुछ जानता हूँ। माना कि तुम्हारी तरह इतिहास का छात्र नहीं हूँ और वैज्ञानिक सोच रखता हूँ। सिकंदर 327-26 ईसा पूर्व में भारत आया; शायद एक धूमकेतु की तरह और कुल लगभग डेढ़ साल (ठीक उन्नीस महीने) तक अपनी करामात दिखाकर लौट गया। यूनानी अभिलेखों, विशेषकर एरियन के ‘एनाबेसिस ऑफ एलेक्जेंडर’, में उसके भारत प्रवेश के विस्तृत ब्योरे उपलब्ध हैं और उन ब्योरों के उद्धरण से भारतीय इतिहास-ग्रंथों के पृष्ठ-दर-पृष्ठ भरे पड़े हैं।

“लेकिन सच तो यह है कि वह भारत के साधुओं, तपस्वियों और ज्ञानियों से अत्यधिक प्रभावित हुआ था। भारत में वह कई विद्वानों से मिला था। उन्होंने उसे बताया कि महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति ऐसी चीज को पाने की कोशिश करता रहता है, जो प्रयास के लायक नहीं होती और जब वह अपना सबकुछ खो देता है तब केवल उसके अच्छे कर्म ही उसके साथ होते हैं। वे सिकंदर को लालच और अत्यधिक अभिमान के विरुद्ध चेतावनी भी देते रहते थे।” शेखर बोला तो रूमी ने प्रशंसा भरी नजरों से उसे देखा।

“मुझे नहीं पता था कि मेरा प्रेमी इतिहास की इतनी जानकारी रखता है, खासकर सिकंदर के बारे में,” रूमी प्यार भरी नजरों से उस देखते हुए बोली।

“तुम भूल गईं सिकंदर पर एक बार नाटक किया था,” शेखर ने रूमी को याद दिलाया।

“अरे हाँ। और क्या बता सकते हो सिकंदर के बारे में? मुझे मदद मिलेगी उसके साधुओं से भेंट करने के किस्सों को बेहतर ढंग से समझने में।”

“अगर तुम्हारी आज्ञा हो तो पहले डिनर खा लूँ?”

“बातों-बातों में मैं भूल ही गई कि तुमने अभी डिनर खत्म नहीं किया है।”

शेखर ने पानी पीने के बाद कहा, “सिकंदर जिस तरह अपने जीवन में बाकी मूर्खतापूर्ण चीजों की चाह रखता था, उसी तरह वह अमरता की चाह रखता था। क्योंकि वह अपनी ताकत से पूरी दुनिया को जीतना चाहता था। वह उस समय तक आधी दुनिया को बहुत निर्मम तरीके से जीत चुका था और अब वह अधीर हो रहा था, क्योंकि उसे लग रहा था कि अपनी योजना पूरी करने के लिए उसे और अधिक समय की जरूरत है। इसलिए उसे अमरता की तलाश थी, जिसके लिए वह भारत की ओर आया। हिंदूकुश पर्वत पर उसे एक योगी मिले, जो ध्यान की गहरी अवस्था में बैठे हुए थे। सिकंदर जैसे लोगों में कोई विवेक नहीं होता, इसलिए उसने जाकर योगी का ध्यान भंग कर दिया।

“उसने पूछा, ‘लोग कहते हैं कि भारत में योगी हजारों साल तक जीवित रहते हैं। वे अमरत्व पा चुके हैं। क्या तुम मुझे अमरता सिखा सकते हो? उसके बदले तुम जो चाहो, मैं तुम्हें दे सकता हूँ’। योगी ने पूछा, ‘तुम्हारे पास क्या है?’ उसने अपने सिपाहियों से सभी लूटे हुए रत्न, हीरे-मोतियों और स्वर्ण से भरे हुए बड़े-बड़े संदूक लाने को कहा। उन्हें खोलते हुए बोला, ‘यह रहा, पूरी दुनिया की दौलत यहाँ है।’ योगी हँसते हुए बोले, ‘तुम तो मिट्टी से चीजें उठाते रहे हो। ये सभी रत्न और स्वर्ण सिर्फ मिट्टी है। तुमने पता नहीं क्यों इसे इतना कीमती समझ लिया है! तुमने उस मिट्टी की कीमत नहीं समझी, जिस पर तुम चलते हो, जो तुम्हें प्रतिदिन भोजन देती है। लेकिन एक पत्थर जिसे तुम ‘हीरा’ कहते हो, जो किसी काम का नहीं है, वह बहुत कीमती हो गया है। मैं तुम्हें यह बात समझाना चाहता हूँ कि तुम्हारे हीरे इसलिए कीमती नहीं हैं, क्योंकि उसमें तुम्हें बहुत सुंदरता नजर आती है। हर कहीं फूल खिले हुए हैं जो किसी हीरे से ज्यादा खूबसूरत हैं। उनमें खुशबू भी है, तुम्हारी नजर उन पर नहीं पड़ती। लेकिन हीरा बहुमूल्य है, इसलिए नहीं कि तुम्हें उसमें कोई खूबसूरती दिखती है। असल में हीरे खूबसूरत हैं ही नहीं। उन्हें जिस तरह से तराशा जाता है, उससे वे चमकते हैं और इस तरह दिखते हैं। लेकिन तुम्हें सिर्फ इस बात से खुशी मिलती है कि वह हर किसी के पास नहीं है। यह खुशी नहीं है, यह एक तरह की बीमारी है। ऐसा सिर्फ इसलिए होता है, क्योंकि तुम्हारे मन ने मौत को नकार दिया है।’ यह सुन सिकंदर भड़क गया।

“‘तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई मुझसे ऐसी बात करने की? जानते नहीं मैं कौन हूँ?’

“यह सुन वह साधु मुसकराया और बिना डरे बोला, ‘अगर तुम लगातार, पल-पल, जीवन की प्रक्रिया के रूप में मृत्यु को स्वीकार कर लेते, तो तुम्हारे जीवन-मूल्य बिल्कुल अलग होते।

‘फिर भी तुम अमरत्व पाना चाहते हो तो यहाँ पर एक जंगल है, वहाँ तुम्हें एक छोटी सी

गुफा मिलेगी। उस गुफा में प्रवेश करना, वहाँ एक छोटा सा जलकुंड होगा। उससे एक अँजुली पानी लेकर पी लो। तुम अमर हो जाओगे।'

वह गुफा में घुसा और जलकुंड से पानी अपने हाथ में लेकर पीने ही वाला था कि कुंड के दूसरी ओर बैठा एक कौवा बोला, 'अरे रुको, सिकंदर महान् मूर्ख, रुको।' सिकंदर हैरान रह गया। कौवा काँव-काँव न करके यूनानी भाषा बोल रहा था। उसने ऊपर देखा। कौवा बोला, 'देखो, मैंने अमरता के इस कुंड से पानी पीया और मैं पता नहीं कब से यहाँ बैठा हुआ हूँ। मैं हजारों साल से यहाँ बैठा हुआ हूँ, समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ! मैंने जीवन में सब कुछ देख लिया है। अब यहाँ बैठा हुआ हूँ। चाहे जो भी कर लूँ, मैं मर नहीं सकता, आत्महत्या तक नहीं कर सकता। मैं चिरकाल से यहाँ बैठा हुआ हूँ। क्या तुम वाकई यही चाहते हो? कृपया पानी पीने से पहले एक बार सोच लो। मैंने इस कुंड का पानी पीने की गलती की। तुम पीने से पहले एक बार सोच लो।'

"सिकंदर काँपता हुआ वहीं खड़ा रहा। उसने कल्पना की कि दस हजार साल बाद भी वह इसी धरती पर रहेगा। वह नजारा कैसा होगा। उसे बात समझ आ गई। वह धीरे से वापस लौट पड़ा और कुंड से पानी नहीं पीया। वह जान गया कि मृत्यु आपके जीवन की एकमात्र ही ऐसी चीज है, जो निश्चित है। आध्यात्मिक प्रक्रिया तभी शुरू होती है, जब आप अपनी मृत्यु के बारे में जागरूक होना शुरू करते हैं। सिकंदर उस साधु को प्रणाम कर वहाँ से लौट गया।"

एयर होस्टेस ने कॉफी सर्व की तो वे दोनों स्वाद लेकर उसे पीने लगे, क्योंकि कॉफी दोनों को ही बहुत पसंद थी।

8

सवाल-जवाब

कॉफी पीकर रूमी को नींद आ गई तो शेखर डायरी पढ़ने लगे। उसने वहीं से शुरुआत की, जहाँ पर रूमी ने बुकमार्क लगाया था।

“मैं हमेशा से ही सिकंदर से प्रभावित रहा, उसकी वजह उसका पराक्रम तो था ही, पर उससे ज्यादा यह कि उसे भारत के ज्ञानियों की विद्वत्ता का आभास हुआ था। नागा साधु, जिन्हें उसने नग्नावस्था में धूप, बारिश, ठंड और संतुलित भोजन खाते देखा था, से उसने बहुत कुछ सीखा और कई बार उसका घमंड चूर-चूर भी हुआ। अरस्तू की शिक्षाओं के कारण सिकंदर को दर्शनशास्त्र की ओर झुकाव था।” कीरत ने लिखा हुआ था।

डायरी के अगले पृष्ठ पर एक नागा साधु का चित्र बना हुआ था। शायद कीरत ने ही बनाया होगा! उसके बाद वाले पृष्ठ पर नागा साधु के साथ सिकंदर की फोटो थी, जो इंटरनेट से लेकर वहाँ चिपकाई गई होगी। फिर अगले पृष्ठ पर से उसके नोट्स शुरू हो गए थे। सिकंदर के हौसले को मार्ग में आने वाली उफनती नदी, दुर्गम पहाड़ और सँकरी घाटियाँ तक नहीं हिला सकीं। भारत की सीमा में प्रवेश करने के थोड़ी ही देर बाद सिकंदर को एक साधु विशाल चट्टान पर लेटा हुआ मिला। सिकंदर की सेना उसकी जय-जयकार करती हुई आगे बढ़ रही थी। साधु विश्राम अवस्था में लेटा यह सब देख रहा था। सिकंदर के समीप आने पर भी वह उसी प्रकार लेटा रहा। ऐसी विशाल सेना इतने पास से गुजर जाए और कोई इस तरह अविचलित रहे, यह देख सिकंदर को बड़ा विचित्र लगा। वह एकटक साधु को देखता रहा।

उसने साधु से पूछा, ‘मुझे और मेरी सेना को देखकर क्या तुम्हें तनिक भी भय नहीं लगता? मैंने सारे जगत को जीत लिया है। मैं विशाल भू-भाग और धन-संपत्ति का स्वामी हूँ।’

साधु ने स्पष्ट शब्दों में निर्भीक होकर कहा, ‘एक लुटेरे से उसे भय लगेगा जिसे उससे कुछ छिन जाने की आशंका हो। किंतु तुम बड़ी संख्या में निरीह लोगों का वध करके इतनी धन-दौलत एकत्र करके क्या करोगे?’

सिकंदर ने उत्तर दिया, ‘पूरा जीवन सुख-सुविधा व निश्चिंतता से व्यतीत करूँगा।’

‘साधु बोला, ‘पर मैं तो बिना किसी का वध किए तथा बिना कुछ धन संचित किए अब भी विश्रांति से जीवन-यापन कर रहा हूँ।’ साधु ने सिकंदर से विमुख होकर करवट ली और शांति की मुद्रा में आँखें बंद कर लीं। सिकंदर अवाक् उसे देखता रह गया। भारत की संस्कृति से उसका प्रथम परिचय हो चुका था।

शेखर ने एक गहरी साँस ली। नागा साधुओं के प्रति उसके मन में जहाँ एक ओर आदर

भाव में वृद्धि हो रही थी, वहीं दूसरी ओर जिज्ञासा किसी वेगवती नदी की तरह उछालें मार रही थी। रूमी ने सोते-सोते अपना सिर शेखर के कंधे पर टिका दिया था। उसे बेफिक्री से सोते देख अच्छा लगा शेखर को। दो पल को उसके होंठों पर उस बात के बारे में सोचकर हँसी थिरक उठी। कहाँ तो वह और रूमी जल्दी शादी करने का विचार बना रहे हैं और कहाँ उसने बिना सोचे-समझे नागा साधुओं से कहा था कि वह नागा साधु-साध्वी बनने आए हैं।

अभी मुंबई पहुँचने में करीब पैंतालीस मिनट और थे। फ्लाइट विलंब से चल रही है, इसके लिए पायलट और एयर होस्टेस पहले ही खेद जताते हुए क्षमा माँग चुके थे। शेखर ने पढ़ना शुरू किया, 'जब सिंध के राजा सब्बास को सिकंदर के आने की सूचना मिली तो उसने भागने का फैसला किया। कई साधुओं ने सांसारिक मामलों में अपनी अरुचि के बावजूद राजा को आक्रमणकारी से लड़ने के लिए प्रोत्साहित किया। नग्न साधुओं के इस विद्रोह को सुनने के बाद सिकंदर को बहुत क्रोध आया और उसने अपने सैनिकों को उन्हें पकड़कर अपने पास लाने का आदेश दिया। उसके सैनिक दस सबसे बुद्धिमान साधुओं को छोड़कर कई साधुओं को पकड़ने में कामयाब रहे। वे चतुर होने और संक्षिप्त, लेकिन जटिल उत्तर देने के लिए जाने जाते थे।

उनके असामान्य कौशल के बारे में सुनने के बाद, सिकंदर ने उन्हें मारने से पहले उनके साथ पहेलियाँ खेलने का फैसला किया, जैसे एक शिकारी अपने शिकार को खाने से पहले उसके साथ खेलता है। उसने उन्हें उनकी आजादी का कोई आश्वासन तो नहीं दिया, यह केवल उनके निष्पादन का क्रम निर्धारित करने की एक विधि थी।

प्रस्तावित खेल में पहेली की एक दिलचस्प विशेषता थी जिसमें साधु पहेली को हल करने में असमर्थ होने पर अपनी गरदन खोने के लिए तैयार थे। अंत में, एक और विशेषता स्वचालित रूप से पहेली से जुड़ गई, जो अरिस्टोटेलियन तर्क के समान थी। यह झूठ बोलने वाले के विरोधाभास के समान एक गतिरोध था, जिसमें एक आदमी कहता है कि वह झूठ बोल रहा है। क्या वह अब सच बोल रहा है या अब भी झूठ बोल रहा है?

यूनानी दार्शनिक प्लूटार्क ने अपने ग्रंथ 'लाइफ ऑफ एलेक्जेंडर' में इस प्रतियोगिता का सजीव वर्णन किया है। यूनानी दार्शनिकों और इतिहासकारों के पास वास्तव में नाटक के लिए एक आँख और एक दिल था। इस दृश्य में भी, प्रतियोगिता को इस तरह से तैयार किया गया था कि प्रश्न और उत्तर अनंत उपवाक्यों और प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष भाषण के एक जटिल स्वरूप में रखे गए थे। सिकंदर ने कहा कि हर किसी से एक प्रश्न पूछा जाएगा और जो कोई भी गलत उत्तर देगा उसे मौत की सजा दी जाएगी। निष्पक्षता से देखने के लिए उन्होंने सबसे बुजुर्ग साधु को प्रतियोगिता का निर्णायक बनाया। फिर शक्ति और ज्ञान, जीवन और मृत्यु के बीच एक चतुर और आकर्षक प्रतियोगिता शुरू हुई।

सिकंदर पहले साधु से : आपकी राय में, कौन अधिक संख्या में है, जीवित या मृत?

पहला साधु : जीवित, चूँकि मृत अब अस्तित्व में नहीं हैं।

सिकंदर दूसरे साधु से : आपकी राय में, क्या पृथ्वी या समुद्र बड़े जानवर पैदा करते हैं?

दूसरा साधु : पृथ्वी सभी को उत्पन्न करती है, क्योंकि समुद्र पृथ्वी का एक हिस्सा है।

सिकंदर तीसरे साधु से : कौन-सा जानवर सबसे चालाक है?

तीसरा साधु : आज तक मनुष्य ने इसकी खोज नहीं की है।
सिकंदर चौथे साधु से : आपने सिंध के राजा सब्बास को विद्रोह के लिए क्यों प्रेरित किया?
चौथा साधु : क्योंकि मैं चाहता था कि वह या तो शालीनता से मरे या जीवित रहे।
सिकंदर पाँचवें साधु से : कौन बड़ा है? दिन या रात?
पाँचवाँ साधु : एक दिन, दिन एक दिन से पहले था!
सिकंदर छठे साधु से : एक आदमी सबसे अधिक प्रिय कैसे हो सकता है?
छठा साधु : यदि वह सबसे शक्तिशाली है और फिर भी भय उत्पन्न नहीं करता है।
सिकंदर सातवें साधु से : आदमी की जगह कोई भगवान् कैसे बन सकता है?
सातवाँ साधु : ऐसा कुछ करने से जो मनुष्य नहीं कर सकता।
सिकंदर आठवें साधु से : कौन अधिक शक्तिशाली है? जीवन या मृत्यु?
आठवाँ साधु : जीवन, क्योंकि यह बहुत सारी बुराइयों का समर्थन करता है।
सिकंदर नौवें साधु से : एक आदमी के लिए कितने समय तक जीवित रहना ठीक है?
नौवाँ साधु : जब तक वह मृत्यु को जीवन से बेहतर नहीं मानता।

इन उत्तरों को सुनने के बाद, सिकंदर ने दसवें साधु की ओर रुख किया, जो न्यायाधीश की भूमिका निभा रहा था। वह उसका निर्णय जानना चाहता था कि नौ उत्तरों में से कौन सा सबसे खराब था। सबसे बुद्धिमान होने के कारण साधु ने कहा कि प्रत्येक उत्तर पिछले उत्तर से भी बदतर था। तब सिकंदर ने मुसकराते हुए जवाब दिया कि निर्णायक से लेकर सभी साधुओं को मार देना चाहिए।

तब साधु ने उसे प्रतियोगिता के प्रारंभिक आधार के बारे में याद दिलाया कि गलत उत्तर देने वाले साधु को मारा जाएगा, न कि इससे भी बदतर उत्तर देने के लिए। न्यायाधीश ने आगे तर्क दिया कि उसका उत्तर एक साथ सही (सिकंदर द्वारा स्वीकार किया गया) और सबसे खराब (अंतिम उत्तर) नहीं हो सकता, बिना यह बताए कि न केवल उसका, बल्कि पिछले सभी उत्तर सही थे। उनकी प्रतिक्रियाओं की गुणवत्ता पर कोई निर्णय नहीं हुआ।

एक साधु ने प्रतियोगिता के बीच में हँसते हुए कहा कि 'असामान्य प्रश्नों के लिए असामान्य उत्तर की आवश्यकता होती है।'

अंत में उसने उन्हें रिहा कर दिया और महँगे उपहार देकर उनका सम्मान किया। उसने साधुओं से यह भी पूछा कि क्या वे और अधिक चाहते हैं, जिस पर उन्होंने चतुराई से उससे अमरता की माँग की। ऐसा असामान्य अनुरोध सुनकर सिकंदर का चेहरा उतर गया और उसने निराशा से उत्तर दिया कि उसके पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है, क्योंकि वह स्वयं नश्वर है।

तब एक साधु ने उससे पूछा, 'तुम युद्ध क्यों करते हो, शहरों को, देशों को क्यों लूटते हो और इतने सारे लोगों को मारने की आखिर क्या जरूरत है? जबकि एक दिन तो तुम्हें अपनी सारी संपत्ति और जमीन दूसरों के लिए छोड़नी ही है?' सिकंदर ने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया 'यह ईश्वर की इच्छा है, जो उसे इन कार्यों को पूरा करने के लिए प्रेरित करती है। जिस प्रकार हवा के बिना समुद्र की लहरें नहीं चल सकतीं और हवा के झोंके के बिना पेड़ हिल

नहीं सकते, उसी प्रकार देवताओं की इच्छा के बिना मनुष्य गति में नहीं आ सकते। मैं युद्ध नहीं करना चाहता था, लेकिन विश्व-विजेता बनने की भूख ने मुझे ऐसा नहीं करने दिया।’

तब साधु ने कहा, ‘तुम्हारे आक्रमण से कई लोग बरबाद हो गए। यह भी सही है कि तुम्हारे आक्रमणों की वजह से कई लोग समान रूप से समृद्ध भी हुए। जिन लोगों ने संपत्ति लूटी, उन्हें अंततः संपत्ति दूसरों को देनी पड़ी और कुछ भी स्थायी रूप से किसी भी व्यक्ति का नहीं रहा।’ यह सुन सिकंदर चला गया।

रूमी उठ गई थी। “अभी और कितनी देर है फ़्लाइट लैंड होने में?” उसने उबासी लेते हुए पूछा।

“दस मिनट। सिकंदर की कहानी के दो ही पृष्ठ बचे हैं। सोच रहा हूँ कि तब तक पढ़ डालूँ। बहुत ही रोचक है, सुबह तक प्रतीक्षा नहीं कर सकता।”

रूमी मुसकराई। “मैं जानती थी कि तुम एक बार पढ़ना शुरू करोगे तो छोड़ नहीं पाओगे। वैसे भी डायरी मेरे पास रहेगी तो जितना चाहो पढ़ लो अभी।”

शेखर आगे पढ़ने लगा, ‘सिकंदर और एक बुद्धिमान साधु के संबंध में एक और किस्सा है। जंगल के किनारे एक पेड़ के नीचे, उसने एक ‘विचित्र दिखने वाले साधु’ को देखा। लगभग नग्न व्यक्ति के लंबे बाल, उलझी हुई लटें, बिखरी हुई दाढ़ी थी और उसने केवल एक लँगोटी पहनी थी। सिकंदर कई दिनों तक बिना उसे परेशान किए उसका निरीक्षण करता रहा। साधु घंटों पेड़ के नीचे एक निश्चित मुद्रा में बैठा रहता था और क्षितिज को देखता रहता। एक दिन उसने साधु से पूछा, ‘मैं तुम्हें हर दिन एक विशेष मुद्रा में पेड़ के नीचे घंटों बैठे क्षितिज की ओर देखते हुए देखता हूँ। तुम वास्तव में क्या कर रहे हो?’

साधु ने कोई जवाब नहीं दिया। सिकंदर बोला, ‘हम युद्ध के लिए तैयार हो रहे हैं और इतनी कड़ी मेहनत कर रहे हैं और तुम बस यहाँ बैठे हो और कुछ भी नहीं कर रहे। आखिर यह सब क्या है?’

साधु ने कोई जवाब नहीं दिया।

बड़े मुश्किल से अपने गुस्से पर काबू पाते हुए, सिकंदर ने फिर साधु से पूछा, ‘कम-से-कम अपने जीवन के उद्देश्य के बारे में तो बता दो। यहाँ घंटों बैठे समय बरबाद करते हो केवल।’

इस बार बुद्धिमान साधु ने ऊपर देखा और प्रतिप्रश्न किया, ‘तुम्हारे जीवन का उद्देश्य क्या है?’

‘मैं सिकंदर हूँ और पृथ्वी पर अधिकार करने निकला हूँ।’

‘उसके बाद आप क्या करने की योजना बना रहे हैं?’ साधु ने जिज्ञासापूर्वक पूछा।

‘मैं विजित भूमि से सारा धन, घोड़े और हाथी यूनान ले जाऊँगा।’

‘मान लो तुमने अपना लक्ष्य पूरा कर लिया सम्राट्, उसके बाद क्या?’

‘मैं इन दुष्ट देशों के सभी पुरुषों को अपने दास के रूप में और सभी महिलाओं को यूनान में अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिए ले जाऊँगा।’

‘वाह क्या सोच है! सभी पुरुष दास के रूप में और स्त्रियाँ मनोरंजनकर्ता के रूप में!’ साधु ने व्यंगात्मक टिप्पणी की। ‘मान लो वह उद्देश्य भी पूरा कर लेते हो तो उसके बाद क्या

करोगे?’

‘उसके बाद, निस्संदेह मैं अपने सिंहासन पर बैठूँगा और आराम करूँगा।’

साधु ने मुसकराते हुए कहा, ‘मैं यही कर रहा हूँ।’

सशस्त्र सैनिकों को देखकर भी साधु नहीं घबराया था, उसके आक्रामक स्वभाव से वह डरा नहीं था। साधु उसके माथे पर परेशानी की रेखाएँ देख शांत स्वर में बोला, ‘तुम्हें इतने सारे लोगों को जीतने और मारने की आवश्यकता क्यों थी, जबकि मृत्यु के बाद केवल छह फीट भूमि की आवश्यकता होती है।’

यह सुन सिकंदर इतना प्रभावित हुआ कि उसने कहा कि वह किसी साधु को अपने साथ यूनान ले जाना चाहता हूँ। एक को छोड़कर सभी ने उसके साथ जाने से इनकार कर दिया। इस साधु को बाद में यूनानियों द्वारा कलानोस नाम दिया गया था। हालाँकि उन्हें कल्याणस्वामी, शोभनास्वामी, स्फींस और कल्याण जैसे अन्य नामों से भी जाना जाता था। वह एक भारतीय शिक्षक जिम्नोसोफिस्ट, डंडामिस के शिष्य थे। तक्षशिला से डंडामिस को लाने के लिए सिकंदर ने अपने दूत ओनेसिक्रिटोस को भेजा था।

‘आपकी जय हो, हे ब्राह्मणों के गुरु!’ ओनेसिक्रिटोस ने अपने वन आश्रय स्थल में डंडामिस की तलाश करने के बाद कहा। ‘सिकंदर महान् ने आपको बुलाया है। मैं आपको लेने आया हूँ। यदि आप उनकी आज्ञा का पालन करते हैं, तो वह आपको बेशकीमती उपहार भेंट में देगा, अन्यथा वह आपका सिर काट देगा!’

साधु बोला, ‘सिकंदर कोई भगवान् नहीं है, क्योंकि उसे मौत का स्वाद चखना होगा। ऐसे लोग विश्व के स्वामी कैसे हो सकते हैं, जब उन्होंने स्वयं को अभी तक आंतरिक सार्वभौमिक प्रभुत्व के सिंहासन पर नहीं बैठाया है? न तो वह अब तक पाताल लोक में प्रवेश कर पाया है और न ही वह पृथ्वी के मध्य क्षेत्रों से होकर सूर्य के मार्ग को जानता है, जबकि उसकी सीमाओं पर रहने वाले राष्ट्रों ने उसका नाम भी नहीं सुना है! यदि सिकंदर का वर्तमान प्रभुत्व उसकी इच्छाओं के लिए पर्याप्त नहीं है, तो उसे गंगा नदी पार करने दें; वहाँ उसे एक ऐसा क्षेत्र मिलेगा, जो उसके सभी लोगों को बनाए रखने में सक्षम होगा। यह जान लो कि सिकंदर जो कुछ देता है और जो उपहार देने का वादा करता है, वे मेरे लिए पूरी तरह से बेकार हैं; जिन चीजों को मैं महत्त्व देता हूँ और वास्तविक उपयोग और मूल्य पाता हूँ, वे हैं ये पत्तियाँ जो मेरा घर हैं, ये खिलते हुए पौधे हैं, जो मुझे दैनिक भोजन प्रदान करते हैं और पानी जो मेरा पेय है; जबकि अन्य सभी संपत्तियाँ जो उत्सुकता से एकत्र की जाती हैं, वे इकट्ठा करने वालों के लिए विनाशकारी साबित होती हैं और केवल दुःख और झुँझलाहट का कारण बनती हैं, जिससे हर गरीब व्यक्ति पूरी तरह से पीड़ित होता है। जहाँ तक मेरी बात है, मैं जंगल की पत्तियों पर लेटा हूँ और मुझे किसी सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है। मैं शांत निद्रा में अपनी आँखें बंद कर लेता हूँ; क्योंकि मेरे पास पहरा देने के लिए ऐसा कुछ भी नहीं, जिससे नींद गायब हो जाए। पृथ्वी मुझे सब कुछ प्रदान करती है। मैं जहाँ भी चाहता हूँ, वहाँ जाता हूँ और ऐसी कोई चिंता नहीं है जिसके लिए मैं खुद को परेशान करूँ। सिकंदर मेरा सिर क्या काटेगा, वह मेरी आत्मा को भी नष्ट नहीं कर सकता।

‘सिकंदर को इन धमकियों से उन लोगों को डराने दें, जो धन की इच्छा रखते हैं और जो

मौत से डरते हैं, क्योंकि हमारे खिलाफ ये दोनों हथियार समान रूप से शक्तिहीन हैं। हम साधु मृत्यु से नहीं डरते हैं। तो जाओ और सिकंदर से कहो कि डंडामिस को तुम्हारी किसी भी चीज की कोई जरूरत नहीं है, और इसलिए वह तुम्हारे पास नहीं जाएगा और यदि तुम्हें डंडामिस से कुछ चाहिए, तो उसके पास आओ।'

सिकंदर अपने गुरु के रूप में एक सच्चे योगी कलानोस को साथ यूनान ले जाता है। एक निश्चित दिन, फारस के सुसा में, कलानोस ने पूरी मैसेडोनियन सेना के सामने एक अंतिम संस्कार की चिता में प्रवेश करके अपने वृद्ध शरीर को त्याग दिया। जाने से पहले कलानोस ने अपने सभी करीबी साथियों को गले लगाया, लेकिन सिकंदर से इतना ही कहा, 'मैं तुमसे जल्द ही बेबीलोन में मिलूँगा।'

सिकंदर ने फारस छोड़ दिया, और एक साल बाद बेबीलोन में उसकी मृत्यु हो गई।

फ्लाइट लैंड होने की एनाउंसमेंट हो गई थी। रूमी और शेखर अपना सामान सँभालने लगे।

9

इतिहास ज्ञाता प्रोफेसर वाचस्पति

एयरपोर्ट से जब वे बाहर निकले तब तक रात का एक बज चुका था। “मैं घर छोड़ने चलूँ?” कैब में रूमी का बैग रखते हुए शेखर ने पूछा।

“नहीं, कोई दिक्कत नहीं होगी, मैं चली जाऊँगी। तुम भी घर जाकर आराम करो। मैं कल शाम को प्रो. वाचस्पति से मिलने जाऊँगी। तुम आना चाहो तो उनके घर आ जाना। डायरी में और जो बातें लिखी हैं, वह उनके साथ ही पढ़ूँगी, ताकि इतिहास की घटनाओं का ठीक तरह से स्पष्टीकरण हो सके।”

“बिल्कुल आऊँगा मैं। वैसे भी जहाँ पतंग, वहीं डोर,” वह शरारत से मुसकराया। “ऑफिस से सीधे पहुँच जाऊँगा।”

“नागा साधु बनने की चाह रखने वाला हमेशा रोमांस में डूबा रहे, यह तो उचित नहीं है बालक! स्वयं पर नियंत्रण करना सीखो।” रूमी ने हँसते हुए कहा और कैब में बैठ गई।

शेखर झेंप गया, लेकिन वह भी क्या करे! रूमी के प्यार में पूरी तरह से डूबा हुआ जो है।

सुबह ही रूमी ने प्रोफेसर वाचस्पति से फोन कर मिलने का समय तय कर लिया और शेखर को मैसेज कर दिया। वह भी इस समय उससे मिलना चाहते थे, क्योंकि वह उन्हें नागा साधुओं से हुई मुलाकात के बारे में पहले ही फोन पर बता चुकी थी। शेखर की नागा साधु-साध्वी बनने की बात सुन वह खूब हँसे थे।

“शेखर इज वैरी नॉटी रूमी। लेकिन उसकी हरकतें कभी किसी मुसीबत में न डाल दें। उसकी लगाम थोड़ी कसकर रखो।”

“ऐसा ही करूँगी सर।” प्रो. वाचस्पति कम ही मजाक करते थे, इसलिए रूमी ने भी मौका नहीं छोड़ा मजाक करने का।

प्रो. वाचस्पति न सिर्फ इतिहास पढ़ाते थे, वरन् विद्वान् भी थे। कई विषयों का उन्होंने गहन अध्ययन किया था। रूमी उनकी गाइडेंस में पी.एच.डी. कर रही थी और उसकी लगन व बुद्धिमत्ता से वह प्रभावित थे। पचास वर्ष के थे, लेकिन चाल में इतनी फुरती थी कि युवा भी उनके साथ दौड़ें तो पीछे रह जाएँ। खादी का ब्राउन कुरता और पैंट कट सफेद पाजामा उनका ड्रेस कोड था। गोरे इतने कि कामदेव भी उनके सामने शरमा जाए। गोल चेहरे पर सुनहरी फ्रेम का चश्मा उन पर खूब फबता था। बाल लगभग न के बराबर थे, इसलिए सिर की चमक से आँखें धूप में चौंधिया जाती थीं। पता नहीं कोई खास तेल लगाते थे या चमक स्वाभाविक थी। वह चमक एक तेज की तरह उनके माथे पर भी दिखती थी। दोनों हाथों की मध्यमा अंगुली में सोने के छल्ले पहनते थे। अकसर कहते, ‘यही एकमात्र शौक है मुझे।’

उनकी पत्नी दीपशिखा दर्शनशास्त्र पढ़ाती थीं और कॉटन की साड़ियाँ उनका ड्रेस कोड

था। प्रो. वाचस्पति की तरह गोरी तो नहीं थीं, लेकिन कंचन-कामिनी सा रूप था। गंभीर प्रकृति की थीं, पर घर पर आने वाले प्रोफेसर के छात्रों से खूब प्रेम से मिलतीं और आवभगत करने में भी कोई कसर नहीं छोड़ती थीं।

शाम को जब वह उनके घर गई तो विस्तार से उन्होंने उसकी सारी बातें सुनीं और पूछा सफर की थकान दूर हो गई कि नहीं। अपनी स्टडी में रूमी के साथ बैठे प्रो. वाचस्पति बहुत देर तक डायरी के पन्ने उलटते-पलटते रहे। उस बीच कई बार उनकी आँखों में चमक आई और चेहरे पर अलग-अलग तरह के भाव उभरे। इस बीच शेखर भी आ गया था।

"शेखर, चाहे तुमने उन नागा साधुओं से जो भी ऊट-पटाँग बातें कीं और उनके क्रोध का शिकार हुए, लेकिन रूमी तुम तो अपने साथ खजाना ले आई हो। ऐसा लगता है कि मेरा ज्ञान भी और समृद्ध हो जाएगा। शिष्या हो तो ऐसी, क्यों शेखर, तुम्हारा क्या खयाल है?"

उनकी बात सुन शेखर झेंप गया था, लेकिन रूमी की तारीफ सुन झट बोला, "बिल्कुल सही कह रहे हैं आप सर। रूमी की बुद्धिमत्ता का तो मैं भी कायल हूँ। तभी तो उसके कहने पर कहीं भी चल देता हूँ। नागा साधुओं के बीच पहुँचा दिया इसने मुझे, वह भी एक गुफा में। उस समय उन नागा साधुओं को देख कुछ समझ नहीं तो मन में आया कह दिया। यह कैसे कहता कि मेरी गर्लफ्रेंड आप पर शोध कर रही है। क्या पता यह सुन और भड़क जाते," शेखर हँसते हुए बोला।

"सर, मेरे बारे में नहीं, इस डायरी में जो लिखा है उस पर बात करते हैं न!" रूमी बोली।

इस बीच दीपशिखाजी ने चाय-नाश्ता स्टडी में भिजवा दिया था। रूमी जानती है कि जब प्रोफेसर स्टडी में या अपने छात्रों के साथ होते हैं, तो दीपशिखाजी आकर उन्हें कभी डिस्टर्ब नहीं करती हैं। मानो उनके बीच एक अनकहा समझौता था कि दोनों एक-दूसरे को सलाह तो अवश्य दे सकते हैं, पर एक-दूसरे के काम में हस्तक्षेप नहीं करेंगे। रूमी लंबे समय से प्रो. वाचस्पति के घर आ रही है, इसलिए जानती है कि उन दोनों के बीच एक प्यारा-सा रिश्ता है और वह शेखर के साथ ऐसा ही रिश्ता चाहती है। प्रो. वाचस्पति को वह अपना आदर्श मानती है।

उसकी नजरें अचानक शेखर की ओर उठ गईं, जो प्रोफेसर सर की लाइब्रेरी में रखी पुस्तकें देख रहा था। उसने भी आँखों-ही-आँखों में पूछा कि क्या बात है तो रूमी ने न में सिर हिला दिया। शेखर का उसका खयाल रखना, अच्छा लगता है रूमी को। वह उसके साथ बहुत सुरक्षित महसूस करती है।

"वैसे आज मैं तुम्हें किसी और से भी मिलवाना चाहता हूँ। वह आती ही होगी थोड़ी देर में," प्रो. वाचस्पति ने कहा तो रूमी सवालिया नजरों से उन्हें देखने लगी।

"तुम्हें याद होगा पिछले साल मैं एक कॉन्फ्रेंस के सिलसिले में सैनफ्रांसिस्को गया था। वहीं कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के डॉ. माइकल पीटरसन से मुलाकात हुई थी। उन्होंने अपनी छात्रा रोजलीना से मुझे मिलवाया था। वह भारत की संस्कृति, इतिहास, तपस्वियों और साधुओं में बहुत दिलचस्पी रखती है। दो साल पहले वह भारत भी आई थी और कुछ साधुओं से भी मिली थी। मैं यह तो नहीं जानता कि वह नागा साधुओं से मिली थी कि नहीं, लेकिन अगर वह इलाहाबाद गई थी तो अवश्य मिली होगी। मुझे आशा है कि उसके पास भी

कोई जानकारी होगी, जो तुम्हारे रिसर्च पेपर में काम आ सकती है।”

“वाह, यह तो बहुत अच्छी बात है,” रूमी कुछ कहती, उससे पहले ही शेखर बोल पड़ा।

“चलो तब तक मैं वह बताता हूँ, जो मैंने पढ़ा है,” प्रो. वाचस्पति ने अपना चश्मा नाक के ऊपर सरकाते हुए कहा। यह अपनी बात शुरू करने का शायद उनका एक तरीका है। “डायरी में जगह-जगह अखाड़ों का उल्लेख हुआ है और हम जानते भी हैं कि महानिर्वाणी अखाड़ा वैदिक हिंदू परंपराओं के आधार पर स्थापित अखाड़ों में तीसरा सबसे बड़ा अखाड़ा है। यह एक शैव अखाड़ा है। इस अखाड़े के पूज्य साधुओं में से कपिल मुनि प्रमुख हैं। उन्हें ही नागा परंपरा को शुरू करने वाला भी माना जाता है। इसे अखाड़ों में सबसे पुराना माना जाता है, कहा जाता है यह अखाड़ा पहले से ही स्थापित था। आदि शंकराचार्य ने अपने जीवनकाल में इसका फिर से संगठन किया था। महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की पूजा का जिम्मा इसी अखाड़े के पास है। इस अखाड़े के प्रमुख को आचार्य महामंडलेश्वर की उपाधि से जाना जाता है। एक बार चुने जाने के बाद साधु इस पद पर जीवन भर बने रहते हैं। अखाड़े के पाँच प्रमुख साधुओं को पंचेश्वर भी कहा जाता है, जिन्हें हर कुंभ में चुना जाता है। 1260 में श्रीपंचायती महानिर्वाण अखाड़ा के महंत भगवानंद गिरि के नेतृत्व में 22 हजार नागा साधुओं ने भीषण युद्ध के बाद हरिद्वार कनखल स्थित मंदिर को आक्रमणकारी गुलाम वंश की सेना के कब्जे से मुक्त कराया था। इसके बाद 1774 में काशी विश्वनाथ मंदिर की रक्षा करने के लिए औरंगजेब के सेनापतियों के साथ भी जबरदस्त संघर्ष किया था और विजय प्राप्त की थी। 1771 में गढ़कुंठा पर औरंगजेब के कब्जा करने की कोशिशों का भी अखाड़े के नागा संन्यासियों ने पुरजोर विरोध किया था।

“श्रीपंचायती महानिर्वाण अखाड़े का इतिहास बेहद गौरवमयी है, साथ ही अखाड़े की स्थापना का प्रसंग भी बेहद रोचक है। बताया जाता है कि शंभु गिरि महाराज, शंकर गिरि महाराज, परशुराम गिरि महाराज, महादेव पुरी, रामगिरि, बलिराम गिरि, कपिल सेवक गिरि महाराज एक बार कठोर तपस्या के लिए एक साथ नेपाल यात्रा पर गए। नेपाल यात्रा के दौरान मार्ग में उन्हें एक अपरिचित महात्मा मिले। उन्होंने महंतों के उद्देश्य, त्याग, तप और ज्ञान से प्रभावित होकर उन्हें अपना आशीर्वाद देते हुए रास्ते में प्राणरक्षा को दो लकड़ियाँ प्रदान कीं। यही दोनों लकड़ियाँ बाद में भाले में परिवर्तित हो गई। सूर्य प्रकाश और भैरव प्रकाश नाम के ये दोनों भाले आज भी अखाड़े की शोभा बढ़ा रहे हैं और हर विजयादशमी को इनकी पूरे विधि-विधान के साथ पूजा-अर्चना की जाती है। भैरव प्रकाश और सूर्य प्रकाश देवतारूपी भाले कुंभ मेले के अवसर पर अखाड़ों की पेशवाई के आगे चलते हैं और इन भालोंरूपी देवताओं को कुंभ में शाही स्नानों में सबसे पहले गंगा स्नान कराया जाता है। उसके बाद अखाड़ों के आचार्य महामंडलेश्वर, महामंडलेश्वर जमात के श्री महंत और अन्य नागा साधु स्नान करते हैं। श्री पंचायती महानिर्वाणी अखाड़ा के सचिव श्री महंत रवींद्र पुरी महाराज का कहना है कि ‘दशहरे के दिन हम अपने प्राचीन देवताओं और शस्त्रों की पूजा करते हैं, क्योंकि आदिजगद्गुरु शंकराचार्य ने राष्ट्र की रक्षा के लिए शास्त्र और शस्त्र की परंपरा की स्थापना की थी। हमारे देवी-देवताओं के हाथों में भी शस्त्र विराजमान हैं।’

“हाँ तो मैं नेपाल यात्रा की बात कर रहा था। वहाँ उन्होंने पशुपतिनाथ भगवान् की

आराधना की। स्वप्न में उन्हें गंगा सागर जाकर अपनी तपस्या से कपिल मुनि महाराज को प्रसन्न करने का आदेश मिला। वहाँ उन्हें गंगा पार करने पर 15-16 वर्ष का बालक मिला, उसे उन्होंने अपने साथ ले लिया। सभी महंतों ने एक राय से बालक को देवदत्त गिरि नाम दिया।

"गंगासागर में तपस्या के तीन वर्ष बाद उन्हें भगवान् कपिल मुनि ने दर्शन दिए और अपना अखाड़ा स्थापित करने का आदेश दिया। कहा जाता है कि इसके ठीक दूसरे दिन आकाशवाणी हुई कि देवदत्त गिरि सबसे छोटा है, उसे छोटिया कहकर पुकारा जाए और वही अखाड़ा की स्थापना का काम करेगा। महानिर्वाणी अखाड़े का मुख्यालय दारागंज प्रयागराज में है। और..." कहते-कहते प्रो. वाचस्पति रुक गए। दरवाजे से अंदर आती युवती को देख प्रसन्नता से बोले, "हे रोजलीना कम-कम, आई वॉज वेटिंग फॉर यू।"

रोजलीना बहुत लंबी थी। कद होगा कोई पाँच फीट नौ इंच। गोरे रंग पर लाल गाल किसी कश्मीरी सेब की तरह लग रहे थे। मैरून रंग की लंबी फ्रॉक की तरह ड्रेस पहनी हुई थी, जिस पर छोटे-छोटे पीले रंग के फूल बने थे। शूज पहने हुए थे, जिसे वह उतारने ही लगी थी कि प्रो. वाचस्पति ने हाथ से इशारा किया कि पहने रहो। भूरी आँखें छोटी-छोटी थीं और गोल्डन बाल किसी डॉल का लुक दे रहे थे।

वह मुसकराई और प्रोफेसर को हाथ जोड़ प्रणाम कर उनकी बगल में रखी कुरसी पर बैठ गई। उसकी मुसकान बहुत प्यारी व मित्रवत थी।

"आई वॉज ओल्सो वैरी कीन टू मीट यू प्रोफेसर। माइकल सर ऑफेन टॉक अबाउट यू।" उसने बहुत ही संयत स्वर में कहा। उसकी आवाज में एक मिठास थी जो सहज ही आकर्षित करती थी। फिर मुसकराते हुए बोली, "आई मस्ट से यूउर वाइफ इज रियली स्वीट। शी ग्रीटिड मी वैरी वार्मली। आई मेट हर आउटसाइड एंड शी ओनली टोल्ड मी दैट यू आर इन द स्टडी।"

यह सुन प्रो. वाचस्पति यूँ खिल उठे मानो उनकी ही तारीफ की जा रही हो।

"थैंक्यू। रूमी—शेखर, यह रोजलीना है। रोजलीना, रूमी मेरी गाइडेंस में शोध कर रही है नागा साधुओं पर। आई होप आप दोनों की रुचि काफी मिलती-जुलती है तो एक-दूसरे की मदद कर पाओगे।"

"ओह दैट्स ग्रेट। नाइस टू मीट यू बोथ ऑफ यू।" रोजलीना ने उनसे हाथ मिलाते हुए कहा।

रूमी और शेखर ने सोचा नहीं था कि रोजलीना इतनी साफ हिंदी बोल सकती है। उच्चारण भी कमाल का था, हालाँकि बीच-बीच में अंग्रेजी शब्द आ ही जाते थे, शायद जो शब्द मुश्किल लगते थे, उन्हें अंग्रेजी में बोलना उसके लिए ज्यादा आसान होगा। वैसे भी रूमी और वह भी तो हिंदी के साथ काफी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते थे।

"इलाहाबाद प्रवास के दौरान मैं कुछ नागा साधुओं से भी मिली थी। उससे पहले मैं कुछ नहीं जानती थी उनके बारे में, क्योंकि इससे पहले मैं केवल आम साधुओं और तपस्वियों से मिली थी। लेकिन नागा साधुओं की जीवन-शैली और पूरे शरीर में केवल भस्म लपेटे रहने ने मेरे अंदर उनको जानने की क्यूरिसिटी पैदा की। जो कुछ मुझे पता है, वह अवश्य शेयर

करना चाहूँगी," उसने मुसकराते हुए कहा।
"रोजलीना, हम अखाड़ों की बात कर रहे थे। तुम्हें इसके बारे में जानकारी है, तुमने मुझे फोन पर बताया था।"
तब तक फिर से चाय-नाश्ता आ गया था। प्रो. वाचस्पति ने समोसे की प्लेट रोजलीना की तरफ बढ़ाई तो "वाओ, आई लव समोसा," कहते हुए उसने समोसा उठा लिया।
खाने के बाद शुरू करेंगे, यह सोचकर सब आराम से चाय का मजा लेने लगे। इस बीच प्रो. वाचस्पति ने रोजलीना को डायरी दिखाई और बताने लगे कि कैसे रूमी और शेखर को यह डायरी मिली।

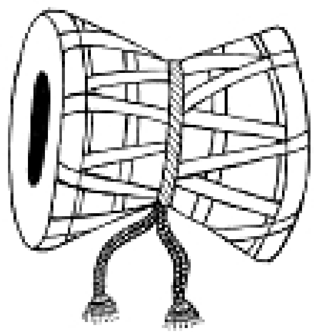

10

अखाड़ों की भूमिका

रोजलीना बोली, "निर्वाणी अनी अखाड़ा के श्री महंत धर्मदास से मेरी मुलाकात हुई थी। पहले तो वह मिलने से मना करते रहे, लेकिन फिर बहुत आग्रह करने पर मान गए। उन्होंने बताया कि 'मठों और मंदिरों में रह रहे युवा साधुओं के लिए यह नियम बना कि वे कसरत करके शरीर को सुदृढ़ बनाएँ और कुछ हथियार चलाने में भी कुशलता हासिल करें। इसके लिए ऐसे मठ स्थापित किए गए, जहाँ कसरत के साथ ही हथियार चलाने का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। ऐसे ही मठों को अखाड़ा कहा जाने लगा। सनातन संस्कृति और धर्म की रक्षा के लिए ही अखाड़े बने। हिंदू धर्म के अलग-अलग संप्रदायों से जुड़े अखाड़ों के नियम-कानून और परंपराएँ अलग हैं। अखाड़े में शामिल साधुओं को नागा की उपाधि दी जाती है। नागा का मतलब है, जो अपनी बात पर अडिग रहे। देश और समाज की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान कर दे। परिवार और रिश्ते-नातों को बुलाकर भगवान् की सेवा-पूजा और देश की रक्षा करे। जब-जब समाज पर कोई संकट आता है और धर्म पर खतरा उत्पन्न होता है तब अखाड़े के साधु भगवान् की पूजा-उपासना के साथ शस्त्र उठाकर देश और समाज के लिए संघर्ष करते हैं।'

"जहाँ तक मुझे पता है सबसे पहले वेद व्यास ने संगठित रूप से वनवासी संन्यासी परंपरा शुरू की। उनके बाद शुकदेव ने, फिर अनेक ऋषि और संतों ने इस परंपरा को अपने-अपने तरीके से नया आकार दिया। बाद में शंकराचार्य ने चार मठ स्थापित कर दशनामी संप्रदाय का गठन किया। बाद में अखाड़ों की परंपरा शुरू हुई। पहला अखाड़ा 'अखंड आह्वान अखाड़ा' सन् 547 ई. में बना।

"भारत के सैन्य इतिहास में दशनामी अखाड़ों की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। दशनामी अखाड़ों में सर्वोपरि महानिर्वाणी अखाड़ा है, जिसका मुख्यालय दारागंज, इलाहाबाद में स्थित है। इस अखाड़े के अनेक शूरवीर और पराक्रमी योद्धा संन्यासियों का नाम इतिहास में दर्ज है, जैसे—राजेंद्र गिरि, अनूप गिरि उर्फ हिम्मत बहादुर, झाबुआ के महंत मुकुंद गिरि, जोधपुर के दौलतपुरी, जैसलमेर के भैरवपुरी तथा उदयपुर के नीलकंठ गिरि आदि।

"माना जाता है कि अखाड़ों का संगठन ही सैन्य आधार पर किया गया था। अखाड़ों को 'मिलिटरी रेजीमेंट' की संज्ञा भी प्रदान की गई है। नागाओं के दल के ठहरने स्थान को पहले छावनी भी कहा जाता था। उत्तर भारत के राजनीतिक जीवन में अखाड़ों की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। बारहवीं से अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक नागा संन्यासियों की राजनीतिक सक्रियता का परिचय मिलता है। उससे पहले तक नागा साधुओं की एक 'डरावनी और बेलगाम' वाली ख्याति थी।"

"लेकिन उनका काम तो धर्म की रक्षा करना था न फिर वे राजनीति से कैसे जुड़े? यहाँ तक कि कई राजाओं तक की उन्होंने सुरक्षा की। साधुओं का राजनीतिक रूप से सक्रिय होना कुछ अजीब नहीं लगता?" रूमी ने प्रश्न किया।

"सही कह रही हो तुम, लेकिन शुरू में तो नागा साधु केवल धार्मिक गतिविधियों में ही इंवॉल्व थे। केवल धार्मिक स्थलों की सुरक्षा करने के लिए ही उन्होंने शस्त्रों का प्रयोग किया। लेकिन फिर समय की जरूरत के हिसाब से वे पेशेवर सैनिक की भूमिका में आ गए और उत्तर मुगलकाल की राजनीति में 'एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले साधुओं' के रूप में उनका उदय हुआ। दिलचस्प बात यह है कि अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उन्होंने पूर्वी और उत्तरी भारत के सभी निर्णायक युद्धों में भाग लिया। उस समय नागा 'हथियारों से सुसज्जित और अनुशासित' होते थे। उन्हें 'सबसे बढ़िया घुड़सवार और पैदल सेना' माना जाता था।"

"नागा साधुओं को लेकर विचित्र धारणाएँ थीं। मैंने एक नागा सैनिक का एक चित्र देखा है, जिसे ईस्ट इंडिया कंपनी के एक अफसर जेम्स स्किनर ने उन्नीसवीं शताब्दी की शुरुआत में बनवाया था," प्रो. वाचस्पति ने अपनी बुकशेल्फ से एक मोटी पुस्तक निकालते हुए कहा। उन्होंने पुस्तक खोलकर वह चित्र दिखाया। चित्र में एक व्यक्ति को दरशाया गया था, जो नंगे पैर और नंगे बदन था और जिसकी कमर पर चमड़े की एक बेल्ट थी, जिसमें एक कटार और बारूद से भरी थैलियाँ लटकी हुई थीं। उसकी जटाएँ बड़ी थीं और सिर पर एक बड़े जूड़े की तरह बँधी थीं, सुरक्षा हेलमेट जैसी। बाएँ हाथ में एक बड़ी-सी नलीवाली फौजी बंदूक पकड़े था और माथे पर सिंदूरी तिलक लगा था।

वह बोले, "इन थैलियों में वे हथियार और गोला-बारूद रखते थे। धावा बोलने और बिल्कुल पास आकर हाथ से लड़ने वाले सैनिकों के रूप में नागाओं की अच्छी ख्याति थी। अनूप गिर के नेतृत्व में वे एक पूरी पैदल और घुड़सवार सेना के रूप में विकसित हो गए थे, जिनकी तुलना बेहतरीन फौजों से की जा सकती थी।"

"अनूप गिर के साहसिक कारनामों के बारे में कुछ बताओ रोजलीना। ऊपर तुमने उनका जिक्र भी किया है एक पराक्रमी योद्धा के रूप में," शेखर ने कहा। उसकी दिलचस्पी भी लगातार बढ़ रही थी। रूमी बीच-बीच में नोट्स भी बनाती जा रही थी। रोजलीना जिस ढंग से एक कहानी की तरह नागा साधुओं की गाथा सुना रही थी, वह किसी चलचित्र की तरह लग रही थी।

"वह भी बताऊँगी, पर उससे पहले अठाहरवीं शताब्दी की स्थिति के बारे में बताना चाहूँगी, ताकि उनकी भूमिका की महत्ता समझ आ सके। इस पुस्तक में विस्तृत रूप से लिखा है। वैसे मैंने पढ़ा था गूगल पर कि अनूप गिर के गुरु राजेंद्र गिरि ने भी युद्ध में अहम भूमिका निभाई है। यह भी कहा जाता है कि अनूप गिरि गोसाईं एक तपस्वी भी थे—हिंदू भगवान् शिव के प्रति समर्पित व्यक्ति, ऐसे नागा साधु, जो भारत के पूजनीय पवित्र व्यक्तियों में से एक थे। 'वॉरियर एसेटिक्स एंड इंडियन एंपायर्स' के लेखक और इतिहासकार विलियम आर पिंच के अनुसार, अनूप गिर गोसाईं एक 'योद्धा तपस्वी' थे। निश्चित रूप से, नागा साधुओं की प्रतिष्ठा 'डरावनी और अनियंत्रित' थी। स्पष्ट अंतर यह है कि 18वीं

शताब्दी के नागा बेहद अच्छी तरह से सशस्त्र और अनुशासित थे और कहा जाता था कि वे उत्कृष्ट घुड़सवार और पैदल सेना के सैनिक थे।”

वह कुछ क्षण के लिए चुप हो गई, क्योंकि रोजलीना की निगाहें अभी भी चित्र पर ही थीं। ऐसा लग रहा था जैसे उस चित्र ने उसे बहुत प्रभावित किया है। “बहुत ही सुंदर फोटो है।” पानी का गिलास उठाकर उसने एक घूँट भरा, अपने बालों को हाथ से ठीक किया और कुरसी पर पीठ टिकाते हुए पुस्तक पढ़ते हुए बोली, “अठारहवीं शताब्दी में भारत में राजनीतिक संगठनों, सामाजिक संस्थाओं, आर्थिक जीवन तथा अवस्था में दूरगामी परिवर्तन हुए। मुगल साम्राज्य का, जिसने डेढ़ शताब्दी तक देश को एकता की भावना प्रदान की तथा विभिन्न क्षेत्रों में प्रगतिशील विकास का नेतृत्व किया था, तीव्रता से पतन हुआ। मराठों द्वारा देश पर एकाधिकार करने का प्रयत्न असफल रहा और ब्रिटिश व्यापारी एक नए प्रकार के साम्राज्य की नींव डालने में सफल रहे। मुगल साम्राज्य के पतन के साथ-साथ अनेक क्षेत्रीय शक्तियों का उत्थान हुआ, जिनमें कुछ स्वतंत्र तथा कुछ अर्द्धस्वतंत्र थीं। इनमें प्रमुख शक्तियाँ थीं—बंगाल, अवध, हैदराबाद तथा मराठा राज्य आदि।

“मुगल सम्राट् औरंगजेब की मुत्यु के बाद राजगद्दी पर अनेक कमजोर शासक आरूढ़ हुए। मुहम्मदशाह भी एक था, जिसके काल में मुगल साम्राज्य के दो महत्त्वपूर्ण राज्य अवध व बंगाल स्वतंत्र हो गए। मुहम्मदशाह की मृत्यु के उपरांत अहमदशाह ने सत्ता सँभाली तथा उसने सफदरजंग को अपना वजीर नियुक्त किया। अवध ही वह स्वतंत्र राज्य था, जिसके नवाब सफदरजंग को मुगलकाल में सर्वप्रथम नागा योद्धाओं को आश्रय देने तथा रणभूमि उतारने का श्रेय जाता है। नागा योद्धा अवध की सेना के सर्वश्रेष्ठ योद्धा में स्थान रखते थे।

“अठाहरवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में नागा योद्धा राजेंद्र गिरि गोसाईं नागा योद्धा समुदाय के अग्रदूत के रूप में अवतरित हुए। उन्होंने अपने शिष्यों को लाठी, बल्लम, फड़, अखाड़े एवं कुश्ती की शिक्षा देकर युद्ध-विद्या में निपुण किया। राजेंद्र गिरि की वीरता से प्रभावित होकर जहाँ कुछ राजाओं ने अपने किले के समीप उनके अखाड़े स्थापित करवाकर अपनी सुरक्षा का दायित्व उन्हें सौंपा तो कुछ राजाओं ने उन्हें किलेदार बनाया।

“मुगल बादशाह अहमदशाह जब गद्दी पर बैठा तब तक मुगल साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। अहमदशाह के समय में जावेद खाँ नामक हिजड़ों का एक सरदार दरबार में बहुत प्रभावशाली हो गया था और सम्राट् इसके हाथों का खिलौना बन गया था। वजीर सफदरजंग के विरुद्ध भी इसने षड्यंत्र रचा। तब सफदरजंग ने अपना ध्यान अपने राज्य अवध की ओर केंद्रित किया।

“अवध का राज्य रुहेलखंड की सीमा से लगा हुआ था और उस पर बंगश अफगानों व रुहेलों का अधिकार था। सफदरजंग अवध के आस-पड़ोस के अफगानों की शक्ति कमजोर करना चाहता था। उसने कायम खाँ को, जो फर्रुखाबाद पर शासन कर रहा था, रुहेलों पर आक्रमण करने के लिए उकसाया। कायम खाँ मारा गया। सफदरजंग ने बंगश प्रदेश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

“अफगान लोग अवध के क्षेत्रों में फैल गए। केवल इलाहाबाद सूबा इससे अलग रहा। अवध की ओर बढ़ने के साथ-साथ अहमद खाँ बंगश का सौतेला भाई शादीखान बीस

हजार घुड़सवार एवं पैदल सेना के साथ इलाहाबाद की ओर बढ़ा। इस बीच अहमद खाँ ने इलाहाबाद के किले से एक मील पूर्व स्थित झूसी में डेरा डाला तथा राजा हरबोंग के टीले पर अपना तोपखाना स्थापित कर किले पर गोलाबारी प्रारंभ कर दी। फरवरी 1751 से अप्रैल 1751 तक इलाहाबाद का घेरा चलता रहा और अफगानों को सफलता नहीं मिली, जिसकी उन्हें उम्मीद थी। इसका एक प्रमुख कारण था बकाउल्ला खाँ, जो एक महान् योद्धा था, को राजेंद्र गिरि गोसाईं के रूप में एक विचित्र सहायक का मिलना। राजेंद्र गिरि इलाहाबाद में माघ मेले में अपने अनुयायियों के साथ ठहरा हुआ था। राजेंद्र गिरि ने जब किले के निवासियों को संकट में घिरा देखा तो उसने निस्स्वार्थ भाव से अपने सहयोगी नागाओं के साथ मिलकर अफगानों पर आक्रमण कर दिया। उसने कई अफगानों का वध किया।

"नागा संन्यासियों के आगमन से युद्ध को एक नई दिशा प्राप्त हुई। एक इतिहासकार ने लिखा है, 'इलाहाबाद किले के बिल्कुल पास गंगा के किनारे एक बहुत बहादुर संन्यासी अपने शिष्यों सहित रहा करता था, जो महादेव की भक्ति में अपना समय व्यतीत करता था। यह व्यक्ति अफगानों द्वारा किए जा रहे विध्वंस को देखकर दुःखी हो गया और बिना निमंत्रण के बकाउल्ला खाँ की सहायता करने को तैयार हो गया, पर उसने किले के अंदर जाने की प्रार्थना अस्वीकार कर दी तथा अपने बहादुर शिष्यों और आदमियों के साथ किले से कुछ दूरी पर डटा रहा। प्रतिदिन वह अपने सर्वश्रेष्ठ बहादुरों को संगठित कर सुंदर घोड़ियों पर सवार होकर अफगान शिविर पर धावा बोलता था और बिना शत्रु-पक्ष के कई श्रेष्ठ बहादुरों का वध किए वापस नहीं आता था। जब तक घेरा चला, वह शत्रुओं का संहार करता रहा।' इस प्रकार नागा साधुओं के साहसिक प्रतिरोध के कारण इलाहाबाद के किले पर अधिकार करने का अफगानों का प्रत्येक प्रयास विफल हो गया।

"राजेंद्र गिरि गोसाईं ने नागा योद्धा संन्यासियों का अग्रदूत होने का गौरव पाया। वह जीवन और मृत्यु के मोह से परे थे। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शिष्य अनूप गिर व उनके छोटे भाई उमराव गिरि उनके उत्तराधिकारी बने और उनकी परंपरा को आगे बढ़ाया तथा नागा सेनाओं के संचालन की कमान उनके हाथ आ गई।" रोजलीना ने प्रोफेसर को पुस्तक वापस करते हुए कहा। "मैं इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहूँगी प्रोफेसर।"

प्रोफेसर वाचस्पति अपना चश्मा खिसकाते हुए बोले, "पिंच ने अपनी पुस्तक में और भी कई चौंकाने वाली बातें व तथ्य लिखे हैं।"

तीनों उत्सुकता से उनकी ओर देखने लगे।

"नागा साधुओं की चौंकाने वाली सेना की आमने-सामने की लड़ाई में अच्छी प्रतिष्ठा थी। अनूप गिरि के तहत वे एक पूर्ण पैदल सेना और घुड़सवार सेना के रूप में विकसित हुए, जो सर्वश्रेष्ठ के साथ प्रतिस्पर्धा कर सकती थी। 1700 के दशक के अंत में अनूप गिरि और उनके भाई उमराव गिरि ने 20,000 से अधिक लोगों की कमान सँभाली थी। 18वीं शताब्दी के अंत तक शस्त्र चलाने वाले तपस्वी सैनिकों की संख्या में नाटकीय रूप से वृद्धि हुई।

"वाराणसी, जिसे पहले बनारस कहा जाता था, के न्यायाधीश थॉमस ब्रुक ने भी लिखा है, 'अनूप गिरि सर्वव्यापी थे, क्योंकि वह एक ऐसे व्यक्ति थे, जिनकी हर किसी को जरूरत थी।

उनकी निंदा इसलिए की जाती थी, क्योंकि वह उस आदमी की तरह थे, जो नदी पार करते समय दो नावों में पैर रखते थे और जो नाव डूब रही होती थी उसे छोड़ने के लिए तैयार रहते थे।'

"इतना ही नहीं, अनूप गिरि ने हर तरफ से लड़ाई लड़ी। 1761 में पानीपत की लड़ाई में उन्होंने मुगल सम्राट् और अफगानों की तरफ से मराठों के खिलाफ लड़ाई लड़ी। तीन साल बाद वह बक्सर की लड़ाई में अंग्रेजों के खिलाफ मुगल सेना के साथ मौजूद थे। अनूप गिरि ने दिल्ली में फारसी साहसी नजफ खान के उदय में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। बाद में उन्होंने मराठों से मुँह मोड़ लिया और अंग्रेजों से मिल गए। 1803 में अपने जीवन के अंत में, उन्होंने अंग्रेजों के हाथों मराठों की हार को सक्षम बनाया और दिल्ली पर ब्रिटिश कब्जे में मदद की, एक ऐसी घटना जिसने ईस्ट इंडिया कंपनी को दक्षिणी एशिया में सर्वोपरि शक्ति की भूमिका में ला खड़ा किया।"

प्रो. वाचस्पति आगे कुछ कहते कि उससे पहले ही दीपशिखा की आवाज आई जो दरवाजे पर खड़ी थीं। वह अंदर आते हुए बोलीं, "प्रोफेसर साहब, मैं जानती हूँ कि काम के सामने आपको भूख-प्यास कुछ नहीं लगती, लेकिन इन लोगों पर तो मेहरबानी करिए। रात के दस बज रहे हैं। इन्हें तो अवश्य ही भूख लग रही होगी? खाना लग चुका है। बाहर आइए सब और उसके बाद इन्हें घर जाने दें। बाकी बातें कल कीजिएगा," उन्होंने प्रोफेसर को एक मीठी झिड़की देते हुए कहा।

"जो हुक्म मल्लिका!" प्रो. वाचस्पति ने सचमुच सिर झुकाते हुए कहा तो दीपशिखा को हँसी आ गई।

रूमी, शेखर और रोजलीना भी हँसे बिना नहीं रह सके।

o

11

अब्दाली के आक्रमण

अगले दिन शाम को रूमी जब प्रो. वाचस्पति के घर पहुँची तो न वह घर पर थे और न ही दीपशिखाजी। उन दोनों को ही किसी काम से अचानक जाना पड़ा था। लेकिन वे अपने यहाँ काम करने वाले रामदीन काका को निर्देश देकर गए थे कि जो भी आए उसे स्टडी में बिठा दें।

रूमी उस एकांत में कीरत की डायरी पढ़ने लगी, जिसे वह प्रो. वाचस्पति के पास ही छोड़ गई थी। एक जगह लाल स्याही से कुछ लिखा था और कुछ शब्द रेखांकित भी थे, इसलिए रूमी वही पढ़ने लगी, 'नागाओं के गुरु दत्तात्रेय हैं। गुरु दत्तात्रेय को महादेव का अंश माना जाता है। मठ परंपरा के अनुसार दत्तात्रेय देव को दशनामी संप्रदाय से जोड़ा जाता है, जिसे आदि शंकराचार्य द्वारा चार मठों के अंतर्गत संगठित किया गया। मठों के अलावा उन्होंने सनातन धर्म की रक्षा के लिए योद्धा साधुओं के एक वर्ग को भी संगठित किया। बाद में उन्हें नागा साधु के नाम से जाना जाने लगा, जिन्हें मृत्यु का कोई भय नहीं होता और त्रिशूल, तलवार, लाठी जिनके अस्त्र होते हैं। वे संगीत वाद्य यंत्र और शंख सहित अन्य हथियार भी रखते हैं।'

इसके बारे में रोजलीना ने भी जिक्र किया था। अनूप गिर के बारे में भी अवश्य कीरत ने इसमें लिखा होगा, सह सोच वह बहुत ध्यान से पन्ने पलटने लगी। राजेंद्र गिरि के बारे में भी एक जगह लिखा था, 'उन्हें मृत्युंजय योद्धा माना जाता था और सफदरजंग उनका इतना सम्मान करता था कि उनकी किसी भी बात को अस्वीकार नहीं करता था। उनके लिए आदेश दिया गया था कि शाही दीवान के नगाड़े घोड़ों पर बजा करें (यह सम्मान मुगलों के सर्वोच्च मनसबदार को ही प्राप्त था) और वह सफदरजंग को सलाम करने के बजाय एक महंत की तरह आशीर्वाद दें। लोगों में प्रसिद्ध था कि वह जादूगर हैं और तलवार-गोले का उन पर असर नहीं हो सकता।'

"हैलो रूमी, यू हैव ऑलरेडी रीच्ड। आई एम वैरी मच एंप्रेड विद यूअर क्योरोसिटी। बाई दे वे वेयर इज यूअर ब्यॉय फ्रेंड? यू बोथ आर मैडली इन लव विद ईच अदर, राइट?" रोजलीना ने कुरसी पर बैठते हुए बेबाकी से पूछा।

"वह ऑफिस से सीधे आएगा। शायद देर से ही आएगा," रूमी ने झेंपते हुए कहा। रूमी और शेखर की भाव-भंगिमा को देख रोजलीना बिना बताए ही समझ गई थी कि वे एक-दूसरे से प्यार करते हैं।

"तो आज अनूप गिर से शुरू करें क्या?" रूमी ने बात का रुख पलटते हुए पूछा।

"ओह येस, आई रिमेंबर, कल उन्हीं पर बात खत्म हुई थी। राजेंद्र गिरि के बाद उन्हें और

उनके भाई को नागा सेना के संचालन की कमान सौंपी गई, जैसा कि मैंने तुम्हें कल बताया ही था। मैंने कुछ नोट्स बनाए थे, वही पढ़कर सुनाती हूँ। सफदरजंग की मृत्यु के बाद अनूप गिर और उनके भाई उमराव गिरि ने अपनी सेवाएँ उसके पुत्र शुजाउद्दौला को सौंप दीं। ये दोनों ही 1753 से 1804 तक उत्तर मुगलकाल की राजनीति में एक महत्त्वपूर्ण शक्ति बने रहे। अपने पचास वर्ष के लंबे राजनीतिक जीवन में इन योद्धाओं ने अवध के नवाब शुजाउद्दौला, आसफुद्दौला, जवाहर सिंह जाट, नजफ खाँ, रघुनाथराव, महादजी सिंधिया की तरफ से अनेक युद्धों में भाग लिया और अभूतपूर्व वीरता का प्रदर्शन किया। शुजाउद्दौला ने अनूप गिर की वीरता से प्रभावित होकर उसे 'हिम्मत बहादुर' की उपाधि तथा सिकंदरा और बिंदकी की जागीर दी थीं।

"शुजाउद्दौला के शासन के प्रारंभिक दिनों में नागाओं द्वारा बनारस के राजा बलवंत सिंह के विरुद्ध शुजा की सहायता भी एक महत्त्वपूर्ण घटना है। सफदरजंग जिन दिनों दिल्ली में गृहयुद्ध में फँसा हुआ था, उस समय उसकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर अवध के जागीरदारों ने अपनी स्थिति मजबूत कर ली। उस काल में बनारस के राजा बलवंत सिंह ने अपनी शक्ति का अत्यधिक विस्तार किया। शुजा ने जब बनारस की ओर प्रस्थान किया तब मार्ग में पंदुरा नामक स्थान पर बलवंत सिंह की सेना ने डटकर मुकाबला किया। इस समय व्यर्थ का खून-खराबा रोकने के उद्देश्य से तथा अपनी यात्रा को अधिक समय तक स्थगित न रखने के उद्देश्य से समझौता करना ही उचित समझा गया और इस कार्य के लिए अनूप गिरि को नियुक्त किया। अनूप गिरि ने अपनी नीति-कुशलता का परिचय देते हुए समझौते की शर्तें इस प्रकार निश्चित कीं जो दोनों पक्षों को मान्य थीं।"

"सॉरी, हमें कहीं जाना पड़ा था। लेकिन तुम दोनों को देखकर लगता है तेज गति से अपनी जानकारियों का आदान-प्रदान कर रही हो," प्रो. वाचस्पति ने अपनी जैकेट उतारते हुए कहा। "वैसे एक और अच्छी बात है तुम्हारे लिए रूमी। आज सुबह इतिहासकार डॉ. सुदीप देशमुख यूनिवर्सिटी आए थे। वह अहमदाबाद में रहते हैं, लेकिन इन दिनों दिल्ली आए हुए हैं एक सिमनार में भाग लेने। मैंने उन्हें भी आज डिनर पर आमंत्रित किया है। उनकी बौद्धिक विचारशीलता गजब है इसलिए उन्हें सुनना बेहद सुखद होता है। तुम दोनों चाहो तो उनकी बातें रिकॉर्ड भी कर सकती हो, क्योंकि वह इतना धाराप्रवाह बोलते हैं कि लिख पाना असंभव है।"

यह सुन रूमी और रोजलीना ने एक-दूसरे को देखा मानो अपनी प्रसन्नता को संप्रेषित कर रही हों। तब तक शेखर भी आ गया था। वरना रूमी यह सोचकर परेशान हो रही थी कि ऐसा न हो कि वह डॉ. देशमुख से मिल न पाए।

"तुम लोग जारी रखो अपनी बात। मैं दीपशिखा की थोड़ी मदद करके आता हूँ। करना पड़ता है ऐसा। शेखर खासकर तुम तो यह बात अच्छे से समझ लो, वरना बीवी की डाँट खाते रहना।"

"इनकी बातों को ज्यादा गंभीरता से मत लेना शेखर।" दीपशिखा कब स्टडी में आ गई थीं, किसी को उस हास-परिहास में पता ही नहीं लगा था।

"आप बाहर चलिए, आज तो सचमुच मदद करवाऊँगी," वह हँसीं और वे दोनों किचन की

ओर बढ़ गए।

रोजलीना ने नोट्स पढ़ने शुरू किए, '1757 में अनूप गिरि ने दिल्ली के राजकुमारों के विरुद्ध शुजाउद्दौला की सहायता की। 1756 के अंत में अफगानिस्तान का बादशाह अहमदशाह अब्दाली फिर से भारत आया। अफगान शासक अहमद शाह अब्दाली सन् 1748 में नादिरशाह की मौत के बाद अफगानिस्तान का शासक और दुर्रानी साम्राज्य का संस्थापक बना था। उसने भारत पर सन् 1748 से सन् 1758 तक कई बार चढ़ाई की और अपने दल-बल के साथ रक्तपात और मूल्यवान संपदा की लूटपाट करता रहा। उस समय मुगल अत्यंत कमजोर थे और इस्लामी आक्रमणकारियों का विरोध करने के लिए उत्तरी भारत में कोई अन्य हिंदू शक्ति नहीं थी। उसने अपना सबसे बड़ा हमला सन् 1757 में जनवरी में दिल्ली पर किया। उस समय दिल्ली का शासक आलमगीर द्वितीय था। वह बहुत ही कमजोर और डरपोक शासक था। उसने अब्दाली से अपमानजनक संधि की, जिसमें एक शर्त दिल्ली को लूटने की अनुमति देना था। अहमदशाह एक माह तक दिल्ली में ठहरकर लूटमार करता रहा। वहाँ की लूट में उसे करोड़ों की संपदा हाथ लगी थी।

'दिल्ली लूटने के बाद अब्दाली का लालच बढ़ गया। उसने दिल्ली से सटी आसपास के छोटे-छोटे राज्य के जाटों की रियासतों को भी लूटने का मन बनाया। ब्रज पर अधिकार करने के लिए उसने जाटों और मराठों के विवाद की स्थिति का पूरी तरह से फायदा उठाया। अहमदशाह अब्दाली पठानों की सेना के साथ दिल्ली से आगरा की ओर चला। अब्दाली की सेना की पहली मुठभेड़ जाटों के साथ बल्लभगढ़ में हुई। वहाँ जाट सरदार बालूसिंह और सूरजमल के ज्येष्ठ पुत्र जवाहर सिंह ने सेना की एक छोटी टुकड़ी लेकर अब्दाली की विशाल सेना को रोकने की कोशिश की। उन्होंने बड़ी वीरता से युद्ध किया, पर उन्हें शत्रु सेना से पराजित होना पड़ा।

'अब्दाली द्वारा मथुरा और ब्रज की भीषण लूट बहुत ही क्रूर और बर्बर थी, जहाँ उसका नागा साधुओं से संघर्ष हुआ। अहमदशाह अब्दाली 15 मार्च, 1757 को मथुरा पहुँचा और यमुना नदी को पार कर मथुरा से दस किलोमीटर दक्षिण-पूर्व महावन में डेरा डाला। गोकुल इस स्थान से साढ़े तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित था। यह नागा साधुओं का स्थान था, जहाँ चार हजार नागा साधु उपस्थित थे। अहमदशाह अब्दाली ने आगरा से लेकर मथुरा तक कत्लेआम तथा सारे शहर में आग लगाने की आज्ञा दे दी थी। अहमदशाह ने अपने दो सरदारों के नेतृत्व में 20 हजार पठान सैनिकों को मथुरा लूटने के लिए भेजा। उसने उन्हें आदेश दिया, 'मेरे जांबाज बहादुरो! मथुरा नगर हिंदुओं का पवित्र स्थान है। उसे पूरी तरह नेस्तनाबूद कर दो। आगरा तक एक भी इमारत खड़ी न दिखाई पड़े। जहाँ कहीं पहुँचो, कत्लेआम करो और लूटो। लूट में जिसको जो मिलेगा, वह उसी का होगा। सभी सिपाही लोग काफिरों के सिर काटकर लाएँ और प्रधान सरदार के खेमे के सामने डालते जाएँ। सरकारी खजाने से प्रत्येक सिर के लिए पाँच रुपया इनाम दिया जाएगा।'

रोजलीना से आगे पढ़ा नहीं गया। "इट वॉज रियली हॉरीबल एंड क्रूएल। इतने सारे नागा साधु मारे गए। इंडियन हिस्ट्री कई बार मुझे डरा देती है।"

"सही कह रही हो, लेकिन फिर भी भारतीय इतिहास और संस्कृति ही तुम्हें खींचकर

बार-बार भारत ले आती है।”

तभी रूमी, शेखर और रोजलीना ने देखा कि प्रो. वाचस्पति के साथ एक व्यक्ति खड़े हैं।

“डॉ. सुदीप देशमुख से मिलो। इनकी प्रसिद्धि भारत ही में नहीं, विदेशों तक फैली हुई है,” प्रो. वाचस्पति ने उनका परिचय करवाते हुए कहा।

“वाचस्पति सर, आप मुझे इतना ऊँचा न बनाइए। आपसे छोटा हूँ उम्र में भी और ज्ञान में भी,” डॉ. देशमुख ने उनके आगे सिर झुकाते हुए कहा।

इतने बड़े इतिहासकार की विनम्रता व शालीनता देख रूमी, शेखर और रोजलीना तीनों अचंभित रह गए थे। उम्र होगी कोई पैंतालीस साल के लगभग, कद-काठी सामान्य थी। लंबा चेहरा था और शरीर थोड़ा भरा हुआ था। बाल घने और एकदम काले थे। पतली मूँछें थीं और उन्होंने टी-शर्ट और जींस पहनी हुई थी। दोनों हाथों में अँगूठियाँ थीं, जिन्हें वह बात करते-करते घुमा रहे थे। ‘हर व्यक्ति की अपनी विशिष्टता होती है,’ रूमी ने सोचा। ‘लेकिन यह इतने विनम्र व सरल हैं कि कोई सोच भी नहीं सकता कि यह व्यक्ति देश-विदेश में भारतीय इतिहास के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार रखता होगा। सच ही कहा जाता है कि लदा पेड़ झुका रहता है।’ रूमी के मन में उनके प्रति श्रद्धा भर गई।

“राइट डॉ. देशमुख, मैं भारतीय इतिहास को जितना पढ़ती हूँ, उतनी ज्यादा प्रभावित होती हूँ। मेरा सौभाग्य कि मुझे आपसे मिलने का अवसर मिला,” रोजलीना ने उन्हें हाथ जोड़कर नमस्ते की।

“मुझे खुशी है और गर्व भी मिस रोजलीना कि आप हमारी संस्कृति का सम्मान करती हैं,” डॉ. देशमुख ने भी हाथ जोड़कर उसके अभिवादन का जवाब दिया।

“आप तो अब्दाली के मथुरा-गोकुल आक्रमण के बारे में जानते होंगे। आप ही अब बताइए न।” शेखर ने आग्रह किया तो उस पर एक गहरी दृष्टि डालते हुए उन्होंने कॉफी का आखिरी घूँट भरते हुए कप को टेबल पर रखा और बोले, “बहुत ही क्रूर कृत्य था वह अब्दाली का। नागा साधुओं के बलिदान के बारे में अधिकांश लोग अनभिज्ञ हैं, क्योंकि उनसे ज्यादा आज तक अफगानों को ग्लोरीफाई किया जाता रहा है। साधुओं और अफगानों के मध्य भयंकर संग्राम हुआ था। जब अहमदशाह अब्दाली गोकुल पहुँचा तो वहाँ पर उसका सामना नागा साधुओं से हुआ, जो हाथ में चिमटा लिए क्रूर अफगानी सेना के सामने खड़े थे। यह नजारा देखकर अहमदशाह अब्दाली ने उनका उपहास किया और साधुओं को बहुत हलके में लिया। नागा साधु अहमदशाह अब्दाली की करतूतें जानते थे, इसलिए अहमदशाह अब्दाली को सबक सिखाने के लिए सीना तानकर खड़े हो गए।

“कुछ क्षण बाद वहाँ पर माहौल शांत हो गया और शायद यह अंदेशा दे रहा था कि कोई बड़ा तूफान आने वाला है। तभी अचानक हर-हर महादेव का जयकारा एक साथ बुलंद आवाज में गूँज उठा। नागा साधु ने हाथ में त्रिशूल और चिमटा लिए अफगानी सेना को धूल चटाने का संकल्प लेकर अफगानी सेना पर टूट पड़े। अपने सैनिकों के चिथड़े उड़ते देख अब्दाली को अहसास हो गया कि ये साधु तो अपनी धरती की अस्मिता के लिए साक्षात् महाकाल बन रण में उतरे हैं। बड़ी-बड़ी तोपों और तलवारों के सामने चिमटे और त्रिशूल इतने भारी पड़े कि अफगानी सेना तितर-बितर हो गई और युद्धस्थल से कोसों पीछे हट

गई।

"मथुरा में खून की नदियाँ बहीं और सारा नगर लाशों से पट गया। संन्यासियों तथा वैरागियों के सिर धड़ से अलग कर दिए गए थे। कहा जाता है कि उस युद्ध के समय नागा साधुओं के एक हाथ में तलवार थी और दूसरे हाथ में शास्त्र। उन्हें धर्म भी बचाना था और देश भी। उस वक्त अफगानी शासक अगर आगे बढ़ जाते तो लाखों लोगों का कत्लेआम हो सकता था। हिंदू मंदिर तोड़ दिए जाते, लेकिन हर साधु ने अपनी बहादुरी का परिचय दिया और मरने से पहले एक-एक साधु ने सैकड़ों दुश्मनों को धूल में मिला दिया था। तोप, तलवारों के सम्मुख चिमटा, त्रिशूल लेकर पहाड़ बनकर खड़े दो हजार नागा साधु इस भीषण संग्राम में वीरगति को प्राप्त हो गए। लेकिन सबसे बड़ी बात यह रही कि दुश्मनों की सेना चार कदम भी आगे नहीं बढ़ पाई। जो जहाँ था, वहीं ढेर कर दिया गया या फिर पीछे हटकर भाग गया। हालाँकि इस भीषण युद्ध में दो हजार नागा साधु वीरगति को प्राप्त हुए, लेकिन क्रूर अब्दाली को युद्ध मैदान छोड़कर भागना पड़ा। चारों तरफ अब्दाली के सैनिकों की लाशें बिछी हुई थीं। यह नजारा देखकर अब्दाली के पैरों तले जमीन खिसक गई जैसे-तैसे वह जान बचाकर भाग निकला। संयोग की बात है कि नगर में महामारी फैल गई, जिसके कारण बहुत से अफगान सैनिकों की मौत हो गई और अहमदशाह अब्दाली को वापस लौटने को बाध्य होना पड़ा।

"इस प्रकार नागाओं की वीरता और दैवीय मदद से गोकुल लूटमार से बच गया। गोकुल-महावन से वापसी में अब्दाली ने फिर से वृंदावन में लूट की। मथुरा-वृंदावन की लूट में ही अब्दाली को लगभग 12 करोड़ रुपए की धनराशि प्राप्त हुई, जिसे वह तीस हजार घोड़ों, खच्चरों और ऊँटों पर लादकर ले गया।"

"डॉ. देशमुख, क्या यह सच है कि अब्दाली द्वारा दिल्ली और मथुरा के बीच ऐसा भारी विध्वंस किया गया था कि आगरा-दिल्ली सड़क पर एक भी झोंपड़ी ऐसी नहीं बची थी, जिसमें एक आदमी भी जीवित रहा हो?" रोजलीना ने उनसे पूछा। उसके लिए जैसे इस सब पर विश्वास करना मुश्किल हो रहा था।

"हाँ, यह दिल दहलाने वाला सच है," डॉ. देशमुख ने गंभीर स्वर में कहा। उनकी आँखों में नमी उतर आई थी, जैसे नागा साधुओं को मन-ही-मन विनम्र श्रद्धांजलि दे रहे हों। "लेकिन यह भी सच है कि नागा साधुओं का प्रकोप देखकर अहमदशाह अब्दाली इतना खौफ खा गया कि जहाँ-जहाँ भी उसे नागा साधु नजर आते वह वहाँ से भाग निकलता। या फिर ऐसा कहें कि किसी भी विदेशी जेहादी आक्रांता को यह पता चलता है कि युद्ध में नागा साधु भाग ले रहे हैं, तो वह लड़ने की बजाय मैदान छोड़कर भाग निकलते।"

रोजलीना के साथ-साथ रूमी भी डॉ. देशमुख की बातें सुन उन्हें आश्चर्य से देखने लगी। उनके चेहरे पर दर्द भी दिख रहा था।

इतिहास की न जानें कितनी परतें अभी खुलनी बाकी थीं।

o

12

पन्नों पर नहीं दर्ज बलिदान

रात को खाना खाकर जब रूमी शेखर के साथ डॉ. वाचस्पति के घर से निकली तो उसका मन बहुत विचलित था। उसके दिमाग में किसी चलचित्र की भाँति गोकुल की घटना और नागा साधुओं का बलिदान घूम रहा था। "कैसी विडंबना है न शेखर कि इतिहासकारों ने सिर्फ तैमूर, अकबर और बाबर जैसे क्रूर और लुटेरों का गुणगान किया है, जबकि वास्तविक रूप में देश की आन-बान और शान की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति देने वाले रणबाँकुरे को इतिहास के पन्नों से गायब कर दिया। यह हमारा दुर्भाग्य है कि इन भारतीय वीर योद्धाओं के बारे हम कुछ नहीं जानते, जिन्होंने पग-पग पर देश-धर्म के लिए अपने बलिदान दिए हैं। इतिहास की पुस्तकों में इनका जिक्र तक नहीं किया जाता। वे नग्न रहते हैं, उस पर केवल लोगों का ध्यान जाता है और वह भी उपहास उड़ाने की दृष्टि से," रूमी के स्वर में छिपे कंपन को महसूस कर पा रहा था शेखर।

उसने उसका हाथ थाम लिया। थोड़ी दूर तक सैर करने के खयाल से वे पैदल ही चल रहे थे।

"वास्तव में है तो यह दुर्भाग्यपूर्ण बात रूमी। भारत में अधिकतर लोग 'नागा साधुओं' को लेकर यही जानते हैं कि वे हर वक्त समाधि में लीन या भाँग के नशे में चूर रहते हैं, लेकिन ऐसा कतई नहीं है। उन्हें नहीं पता कि तन पर केवल लँगोट पहने और बदन पर भस्म लपेटे नागा साधुओं का इतिहास योद्धाओं का रहा है। नागा साधु वीरता और आस्था के वास्तविक उदाहरण हैं, जो हमें विदेशी अतिक्रमण के खिलाफ अपनी संस्कृति और मातृभूमि की रक्षा करने के लिए प्रेरित करते हैं। यह नागा साधुओं का वीरतापूर्ण इतिहास और लंबे समय से चली आ रही परंपरा है, जो दुनिया की भौतिकवादी आकांक्षाओं से अप्रभावित है," शेखर ने बहुत ही दार्शनिक अंदाज में कहा। पिछले कुछ दिनों में उसे भी नागा साधुओं के बारे में काफी जानकारी हो गई थी।

"दिलचस्प बात यह है शेखर कि हमारे इतिहासकारों ने उन्हें महत्त्व न दिया हो, पर मेगस्थनीज, जो यूनान का राजदूत था और चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आया था, ने नागा साधुओं का वर्णन करते हुए उस दौरान लिखा था, 'भारत में ब्राह्मणों या नागा साधुओं का एक दार्शनिक संप्रदाय है, जो स्वतंत्र जीवन व्यतीत करता है तथा मांस और पके भोजन से परहेज करता है और केवल फलाहार करके रहता है। पूरा जीवन भी नग्न रहकर बिताता है तथा कहता है कि ईश्वर ने शरीर आत्मा को ढकने के लिए दिया है। उनका मानना है कि ईश्वर प्रकाश है, लेकिन सूर्य अथवा अग्नि की तरह नहीं जिसे हम आँखों से देखते हैं, किंतु ईश्वर से उनका तात्पर्य तर्कपूर्ण प्रवचन से है, जिसके द्वारा बुद्धिमान लोग जीवन के गूढ़

रहस्य को पहचानते हैं। वे देवता का नाम आश्चर्यजनक आदर के साथ उच्चारित करते हैं तथा मंत्रों के साथ उसकी पूजा करते हैं। उनके साथ स्त्री एवं बच्चे नहीं होते। ये नंगे रहकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं। जाड़ों में खुले आकाश के नीचे धूप में किंतु ग्रीष्म ऋतु में जब सूर्य बहुत तपने लगता है, वे घास के मैदानों में और आर्द्र स्थानों में पेड़ों के नीचे रहते हैं।"

"मुझे खुशी है कि तुम नागा साधुओं पर काम कर रही हो। कम-से-कम तुम जो शोध-पत्र लिखोगी, उससे वर्तमान पीढ़ी को उनके बलिदान और वीरता का पता चल सकेगा। आज भारत के हर व्यक्ति को यह मालूम होना चाहिए ि क नागा साधुओं ने कैसे अपनी समाधि और संन्यास छोड़ देश के लिए किसी योद्धा से दुगुना पराक्रम अपने दुश्मनों के खिलाफ दिखाया है।"

"और मुझे इस बात की खुशी है कि एक विज्ञान का छात्र जो इंजीनियर है, वह भारत के इतिहास में रुचि ले रहा है," वातावरण की गंभीरता को तोड़ने के खयाल से रूमी ने शेखर को छेड़ते हुए कहा।

"तुम्हारे लिए तो यह बंदा कुछ भी कर सकता है। लेकिन यह मत भूलो कि मैं रंगमंच से भी जुड़ा हूँ। उसके कारण ही इतिहास को खँगालना पड़ता है कई बार। वैसे आज रात लगता है तुम सोने वाली नहीं हो।"

"क्यों? मुझे तो अभी बहुत नींद आ रही है।" रूमी ने हैरानी से पूछा।

"क्योंकि तुम कीरत की डायरी जो ले आई हो आज अपने साथ प्रो. वाचस्पति से," शेखर ने डायरी की ओर देखकर कहा जो रूमी ने हाथ में पकड़ी हुई थी।

"हो सकता है," वह हँसी। "पर पहले मुझे घर तो छोड़ो।"

"जो हुक्म मल्लिका।" शेखर कैब बुक करने लगा फोन से।

सच ही कहा था शेखर ने रूमी सोएगी नहीं। पलकें नींद से बोझिल होने के बावजूद उसने यह सोचकर कीरत की डायरी खोल ली थी कि एक-दो पृष्ठ पढ़ लेती है। डायरी में हरे रंग से लिखे अंश पर नजर गई तो रूमी उसे ही पढ़ने लगी। यह तो समझ आ गया था कि कीरत कुछ महत्त्वपूर्ण अंशों को अलग-अलग रंगों की स्याही से लिखा करता था। शायद अलग से नोट्स बनाने के खयाल से या याद रखने के लिए, संभवतः।

महाकुंभ भारत के चार शहरों, हरिद्वार, उज्जैन, नासिक और इलाहाबाद में लगता है, इसलिए नागा साधु बनाए जाने की प्रक्रिया भी इन्हीं चार शहरों में होती है। नागा साधुओं का नाम भी अलग-अलग होता है, जिससे कि यह पहचान हो सके कि उन्होंने किस स्थान से दीक्षा ली है। जैसे कि प्रयागराज के महाकुंभ में दीक्षा लेने वालों को 'नागा', उज्जैन में दीक्षा लेने वालों को 'खूनी नागा', हरिद्वार में दीक्षा लेने वालों को 'बर्फानी' व नासिक में दीक्षावालों को 'खिचड़ी नागा' के नाम से जाना जाता है। इन्हीं नागा संन्यासियों पर होता है धर्म ध्वजा की रक्षा का भार।

हर अखाड़े में एक कोतवाल होता है। ये कोतवाल नागा साधुओं और अखाड़ों के बीच की कड़ी का काम करता है। दीक्षा पूरी होने के बाद जब साधु अखाड़ा छोड़कर साधना करने जंगल या कंदराओं में चले जाते हैं तो ये कोतवाल उन्हें अखाड़ों की सूचनाएँ पहुँचाते हैं। सिंहस्थ, कुंभ और अर्धकुंभ जैसे महापर्वों में ये लोग कोतवाल की सूचना पर पहुँचते हैं।

वर्तमान में नए नागा साधुओं को कुंभ में ही नागा साधु बनने की दीक्षा दी जाती है। 13 अखाड़ों में से केवल शैव अखाड़ों में ही नागा साधु बनने की दीक्षा दी जाती है। इनमें जूना अखाड़े में सबसे अधिक नागा साधु बनते हैं।

कुंभ मेले के दौरान नागा साधु ही सबसे पहले शाही स्नान करते हैं। इनके बाद ही कोई अन्य शाही स्नान के लिए पवित्र नदी में प्रवेश कर सकता है।

डायरी में कुछ गुलाबी रंग के पृष्ठ थे, शायद अलग से चिपकाए गए थे। पहले पन्ने पर शीर्षक लिखा था—'मेरे अनुभव'। रूमी समझ गई कि इसमें नागा साधुओं से हुई मुलाकात का विवरण लिखा होगा। इलाहाबाद में हुए कुंभ के दौरान जो घटा, उसी को कीरत ने बहुत लयात्मक ढंग से लिपिबद्ध किया था। वह बहुत ध्यान से एक-एक शब्द को पढ़ने लगी—'संगम नगरी पर छाया कुहासा छँट चुका है। सूर्य की स्वर्णिम रश्मियों की आभा अखाड़ों के शिविरों की जीवंतता को कांति प्रदान कर रही है। माघ के चढ़ते सूरज की गुनगुनी धूप से ऊर्जस्वित श्रद्धालुओं की चहल-पहल कुंभ नगरी के सेक्टर 4 के मुख्य मार्ग पर बढ़ चुकी है। रास्ते के बाईं ओर श्री पंच आह्वान अखाड़े के बाहर साधुओं की एक टोली को देख पैर स्वत: ही थम जाते हैं। कई और लोग हैं जो पहले ही ठिठक चुके हैं। सबकी नजरें इस टोली की ही ओर हैं।

'अखाड़ों की विचित्रता और संतों की विराटता के बीच इनकी छटा अलग है। अजब वेशभूषा, निराला अंदाज। सिर पर पीतल का नाग मुकुट, इस पर आगे की ओर फन उठाए सर्प की आकृति और पीछे की ओर बेलनाकार स्तंभ में मोरपंख। कानों से धागों के जरिए लटकते धातु के दो गोल छल्ले, धोती-कुर्ता पहने और शरीर पर गेरुआ चादर। दीन-दुनिया से अलग गायन में तल्लीन। रेशेदार कपड़े से बँधी छड़ी की मूठ पर लगी घंटी की मधुर आवाज। मैं सम्मोहित हो गया। इसी बीच बगल से आवाज आई—यही जंगम साधु हैं। ये सिर्फ भिक्षा माँगने कुरुक्षेत्र से आए हैं। नागा साधुओं का दरबार खटखटाएँगे। जंगम साधु यानी ऐसे साधु जो केवल महात्माओं से दान-दक्षिणा लेते हैं। माना जाता है कि भगवान् शिव की जंघा से इन साधुओं की उत्पत्ति हुई है।

'गाती-बजाती साधुओं की टोली अखाड़ा परिसर में प्रवेश कर जाती है। जिज्ञासा मुझे भी उनके पीछे-पीछे चलने को उकसाती है। महाकुंभ का सबसे सशक्त अखाड़ा, बाएँ-दाएँ म़ढियों की कतार है। हर साधु की एक मढ़ी में उनके इष्ट और सामने जलती धूनी। यह क्या? मैंने देखा कि अब तक निर्विकार बैठे नागा साधु का सिर अपने आप झूमने लगा। जंगम साधुओं के गीतों का असर उनकी धूनी पर भारी है। नागा प्रसन्न हुए। कुछ निकालते हैं। जंगम साधु की घंटीवाली छड़ी आगे बढ़ती है। मिलने वाली भिक्षा को स्पर्श करती है।

'अजब दृश्य, किसने किसको आशीर्वाद दिया, कौन प्रसन्न हुआ, यह समझना आसान नहीं था। जंगम आगे बढ़ जाते हैं, उनके पीछे मैं भी। ग्यारह बज गए हैं। एक घंटा कब बीत गया, पता ही न चला। जंगम साधु दूसरे नागा संन्यासियों को प्रसन्न करने में जुटे हैं। सिर हिल रहा है, छड़ी हिल रही है, घंटी बज रही है। जिज्ञासा भीतर और हलचल मचाती है। नागाओं के क्षेत्र में यह अधिकार? जूना अखाड़ा से बाहर निकलते ही बरबस जत्थे के सबसे बुजुर्ग नजर आ रहे साधु को रोक लेता हूँ। थोड़ी हिचक मुझमें भी है और उनमें भी। नाम

बताते हैं पूरन जंगम। बातचीत में कथा सामने आती है कि दशनामी नागा साधुओं का पुरोहित होने के नाते उन्हें नागा साधुओं से भिक्षा लेने का अधिकार है। मुझे अपने पुरोहित याद आते हैं। वे भी हम पर अपना अधिकार मानते हैं। वह बताते हैं—हम लोग गृहस्थ साधु हैं। हमारे गीतों में दशनाम की वंश परंपरा गुंजित होती है। नागा साधुओं के खुश होने का रहस्य अब सामने है, लेकिन पौराणिक संदर्भ जानने की इच्छा बलवती हो उठी है।

'मेरे कौतूहल का समाधान करते हुए उन्होंने बताया—शिव पुराण में बताया गया है कि भगवान् शंकर के विवाह के समय ब्रह्मा और विष्णु ने भोलेनाथ से दान-दक्षिणा लेने का आग्रह किया। भोलेनाथ ने यह अनुरोध अस्वीकार कर दिया और अपनी जाँघ से साधु को उत्पन्न किया, जो जंगम कहलाया। जंगम ने ब्रह्मा, विष्णु से दान लेकर और गीत गाकर विवाहोत्सव संपन्न कराया। मैं उन्हें प्रणाम कर आगे बढ़ता हूँ। महाकुंभ में हर परंपरा के पीछे एक कथा नजर आती है। मैं निरंजनी अखाड़े की ओर बढ़ता हूँ। यकीन है कि वहाँ भी जंगम साधुओं की घंटियाँ बज रही होंगी।

'साधु नरोत्तम गिरि से भेंट होती है तो उन्होंने संन्यास में गुरु की महत्ता समझाते हुए रामचरितमानस की एक चौपाई सुनाई—गुरु गृह पढ़न गए रघुराई, अल्पकाल सब विद्या पाई। उस समय भी राजा रामचंद्रजी ने माता-पिता का त्याग करके गुरु के पास पाँच-छह बरस व्यतीत किए थे और भगवान् कृष्णजी ने भी गुरुजी के यहाँ रहकर सुदामा के साथ शिक्षा ग्रहण की थी।

'मैंने जब साधु बनने के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा—साधु बनना आसान नहीं होता। इसके लिए धन-माया का त्याग, मान-अपमान का त्याग करना होता है, ये गुरु-शिष्य परंपरा होती है, जिसके लिए सर्वप्रथम त्याग करने की आवश्यकता होती है। सबकुछ त्याग करके ही संन्यास दीक्षा ग्रहण की जाती है। सर्वप्रथम अहंकार का त्याग करना होता है, जो शिष्य जिज्ञासा लेकर आता है, उसी को संन्यास की दीक्षा जल्दी प्राप्त होती है। जब सनातन धर्म पर कोई विपदा पड़ती है तो वहाँ नागा दल आगे आते हैं। रुद्राक्ष हमारा शृंगार है, वही रुद्राक्ष हमारा देवता है, जो हमारे भोलेनाथ का शृंगार है।'

पढ़ते-पढ़ते रूमी को नींद आ गई, लेकिन सपने में भी वह चिमटा पकड़े नागा साधुओं को देखती रही।

सुबह जब नींद खुली तो नौ बज चुके थे। माँ नाराजगी से बड़बड़ा रही थीं, "यह भी क्या बात हुई कि न सोने-जागने का टाइम है और न ही खाने-पीने का। जल्दी से शादी करो और फिर जो मन आए करना। शेखर सँभाले तुझे। मुझसे नहीं उठाए जाते तेरे नाज-नखरे। पता नहीं कहाँ-कहाँ बैग लटकाए घूमती रहती है। उस निर्जन में उन साधुओं के बीच तुझे कुछ हो जाता तो हम क्या करते? पता नहीं कैसे विषय पर शोध कर रही है? बस, बहुत हुई पढ़ाई अब घर बसाओ।"

"ओह हो माँ, फिर शुरू हो गईं आप? मेरी विदाई पर आप ही सबसे ज्यादा रोएँगी," रूमी माँ से लिपटते हुई बोली।

"माँ-बेटी का रोज का ड्रामा खत्म हो गया हो तो जरा नाश्ता देने का कष्ट करें, मिसेज कीर्ति दवे।" जब भी पापा माँ को छेड़ते थे, उन्हें ऐसे ही बुलाते थे।

“आप तो छुट्टी लेकर बैठी हैं आज, पर मैं ऑफिस के लिए लेट हो जाऊँगा,” मनोहर दवे ने मुसकराते हुए कहा, “और बेटा कैसा चल रहा है तुम्हारा शोध? खूब मेहनत कर और नाम कमा।”

“जी पापा। प्रो. वाचस्पति ने रोजलीना और प्रो. देशमुख से मिलवाया है। बहुत कुछ जानने को मिल रहा है और फिर कीरत की डायरी तो आई ओपनर है। मुझे काम खत्म कर डायरी को उज्ज्ैन जाकर लौटाना भी है। कितने विश्वास से उसने यह डायरी मुझे दी है, मेरा भी फर्ज है कि मैं उसे सुरक्षित हाथों में लौटा दूँ।”

“बिल्कुल लौटानी चाहिए, आखिर यह कीरत की अमानत है। चली जाना उज्ज्ैन।”

“बाकी बातें नाश्ते पर कर लेना। आपकी ही शह पर इसकी मनमानी बढ़ती जा रही है,” माँ ने नाश्ता परोसते हुए कहा तो रूमी और पापा चुपचाप नाश्ता करने लगे।

o

13

मुगलों के खिलाफ जंग

दोपहर में रूमी लाइब्रेरी से लाया शिवानी का एक उपन्यास पढ़ने बैठ गई, ताकि दिमाग में जो खलबली मची हुई थी, वह थोड़ी शांत हो जाए। शिवानी उसकी पसंदीदा लेखिका भी हैं। रात से अहमदशाह अब्दाली की बर्बरता और खूनी खेल उसे परेशान कर रहा था। माँ किसी काम से कमरे में आईं तो उसे सोच में डूबा देख उसके पास ही बैठ गईं। आज वह छुट्टी पर थीं। रूमी जानती है कि चाहे माँ जो कहें या नाराजगी दिखाएँ, लेकिन वह उसे प्रोत्साहित करने में पीछे नहीं रहती हैं।

"किस बात को सोचकर इतनी व्याकुल है? रिसर्च वर्क तो ठीक ही चल रहा है तेरा। प्रो. वाचस्पति बहुत अच्छे मार्गदर्शक हैं। क्या नागा साधुओं को लेकर तेरे मन में कोई उलझन है? असल में हमारे समाज में अनैतिक कार्यों में लिप्त कुछ साधुओं व बाबाओं की वजह से धर्म की रक्षा करने वालों को भी संदिग्ध दृष्टि से देखा जाता है। लेकिन हर कोई एक समान नहीं होता है।"

"माँ, नागा साधुओं से मिलने के बाद उनको लेकर मेरे मन में कोई शंका नहीं है, अपितु अफसोस इस बात का है कि वे न जाने कब से धर्म की रक्षा करते हुए अपने प्राण गँवा रहे हैं और जनसाधारण इससे अनभिज्ञ है। बल्कि उनके कुंभ मेलों के दौरान उनके नग्न रूप को देख लोग ऊटपटाँग बातें करने से भी हिचकते नहीं हैं। सर्दी, गरमी, बारिश, तेज चलती आँधियों को भस्म से लिपटे शरीर पर सहना आसान नहीं होता, पर उनके इस रूप का लोग मजाक उड़ाते हैं। यहाँ तक कि उन्हें अघोरियों तक की संज्ञा दी जाती है। लोगों को यह तक नहीं पता कि नागा और अघोरियों में अंतर होता है," रूमी ने माँ की प्रतिक्रिया जानने के लिए उनकी ओर देखा कि कहीं वह उसकी बातों से ऊब तो नहीं रही हैं।

"हमारा समाज आज भी सुनी-सुनाई बातों का गुलाम है, बेटा। बस इसीलिए सत्य जानने या गहराई से तथ्यों का पता लगाने की कोशिश नहीं करता। केवल शोधकर्त्ता और इतिहासकार इस काम में जुटे रहते हैं। यह तो मैं भी जानती हूँ कि अघोरियों के पास काला जादू की कुछ शक्तियाँ होती हैं, जबकि नागों को आमतौर पर योद्धा साधुओं के रूप में जाना जाता है और वे किसी भी समय बौद्धिक रूप से लड़ने या कुश्ती करने के लिए तैयार रहते हैं।

"अघोरी भगवान् शिव और देवी काली के उपासक हैं। वे एक रहस्यमय आभामंडल में रहते हैं और एक अजीब जीवन-शैली अपनाते हैं। अघोरी मूर्ति पूजा नहीं करते। वे ध्यान केंद्रित करने के लिए मारिजुआना और शराब में विश्वास करते हैं। नागा साधुओं की तरह अघोरी भी उत्थान और आत्मज्ञान चाहते हैं। वे सोचते हैं कि नशीली दवाओं और शराब

का उपयोग उन्हें उस स्तर तक ले जाता है, जो उन्हें भगवान् के करीब लाता है। अघोरियों का विश्वास है कि पूर्ण अंधकार एक ऐसी चीज है, जो उन्हें आत्म-साक्षात्कार या आत्मज्ञान की ओर ले जाती है।

"हालाँकि हिंदू धर्म इस मान्यता से बिल्कुल अलग है, लेकिन अघोरियों के लिए यह कारगर साबित होती है। हिंदू अनेक देवताओं में विश्वास करते हैं और पूरे मन से उनकी पूजा करते हैं; अघोरी सोचते हैं कि केवल एक ही सर्वशक्तिमान हैं—भगवान् शिव। अघोरियों के अनुसार, हिंदू जिन अन्य भगवानों में विश्वास करते हैं, वे शिव की अभिव्यक्ति मात्र हैं। भैरव शिव का वह रूप है, जो मृत्यु से जुड़ा है।

"अधिकतर अघोरी मृतकों के साथ श्मशान में रहना पसंद करते हैं, क्योंकि उनके अनुष्ठान मुख्य रूप से शवों से जुड़े होते हैं। वे एकांत जीवन जीते हैं और इसलिए, उन जगहों पर रहते हैं जहाँ लोग आमतौर पर नहीं जाते हैं। अलग-थलग रहने से उन्हें समाज से दूर रहने और बिना किसी हस्तक्षेप के अपने अनुष्ठान करने में मदद मिलती है।

"नागा साधुओं की तरह अघोरियों को भी साधु बनने के लिए कड़ी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। नागा साधुओं को अपनी तपस्या की परीक्षा अखाड़ों में देनी होती है, जबकि अघोरियों को अपनी तपस्या की परीक्षा श्मशान में देनी होती है।"

"वाह! माँ, आप जताती नहीं, लेकिन जानकारी रखती हैं। चलिए और कुछ बताइए। सोशल साइंस की टीचर हैं तो क्या, पढ़ती तो खूब हैं आप भी।"

"बहुत कुछ तो नहीं जानती, लेकिन यह बता सकती हूँ कि मुगलों के अत्याचार हम हिंदुओं ने बहुत सहे हैं और उनके आक्रमणों और अत्याचारों का उल्लेख पाठ्यपुस्तकों में इस तरह किया जाता है मानो वे उनके साहसिक कृत्य हों। उनके जुल्मों को पढ़ते हैं, लेकिन हिंदू संस्कृति को बचाने के लिए हमारे साधु-संतों, शिक्षकों और विद्वानों ने कैसे-कैसे त्याग किए, वे उनमें दर्ज नहीं हैं। मुगल अत्यंत आततायी थे। अंग्रेजों की तरह उन्होंने भी हमारे देश को लूटा, लेकिन उन्होंने नर संहार भी कम नहीं किया। स्त्रियों की अस्मिता मुगलों के समय संकट में रही।"

"अपने रिसर्च पेपर में मैं यह सब भी लिखने वाली हूँ," रूमी के स्वर में आक्रोश झलक रहा था।

"मुगलों से हिंदुओं की रक्षा के लिए सोलहवीं शताब्दी में बंगाल के महान् अद्वैत आचार्य मधुसूदन सरस्वती द्वारा नागा साधुओं का पुनर्गठन किया गया था। मधुसूदन सरस्वती अद्वैत वेदांत परंपरा के एक दार्शनिक तथा बादशाह अकबर के समकालीन थे। उनका नाम सनातन दर्शन, सांस्कृतिक कायाकल्प और सबसे महत्त्वपूर्ण रूप से हिंदू समुदाय के बीच एक धधकती अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए उनकी अग्रणी सेवा के कई इतिहासों में स्वर्णिम रूप से अंकित है। वह भारतवर्ष जो मुसलिम आक्रमणों की निरंतर बर्बरता से जूझ रहा था, मुसलमानों द्वारा साधुओं पर हो रहे हमलों को देख मधुसूदन सरस्वती आगरा में अकबर के दरबार में पहुँचे और उनसे शिकायत की। जब उनकी शिकायत का समाधान नहीं किया गया, तो उन्होंने नागा साधुओं को पुनर्गठित किया और उन्होंने मुसलमानों द्वारा किए गए अत्याचारों से हिंदुओं की रक्षा करने के लिए काररवाई शुरू की। विलियम आर.

पिंच ने अपनी पुस्तक 'सोल्जर मोंक्स एंड मिलिटेंट साधूज' में इसके ऐतिहासिक आधार का वर्णन किया है। यह सिद्धांत सत्य है या नहीं, इस पर बहस के बावजूद इस बात के प्रमाण हैं कि मधुसूदन सरस्वती के आगरा से लौटने के बाद नागा साधु वाराणसी में इकट्ठे हुए और हिंदुओं की रक्षा करने की शपथ ली। उन्होंने जिस प्रणाली की नींव रखी उसे बाद में साधुओं और संन्यासियों की अखाड़ा प्रणाली के रूप में जाना जाने लगा।"

"भारत के लोगों और धर्म दोनों को ही मुगलों ने बहुत हानि पहुँचाई। तभी शायद मध्ययुगीन भारत के मुगल शासन के समय को एक काला अध्याय माना जाता है," रूमी यकायक बोली जैसे कुछ याद आ गया हो।

"दुःखद बात तो यह है कि 'शांतिकाल' में भी साधुओं, संन्यासियों और संतों के खिलाफ अकारण हमले करना मुगलों की आदत थी। इसके पीछे का उद्देश्य था इन साधुओं को परेशान करके या उनकी हत्या करके बड़े सनातन समाज को धीरे-धीरे कमजोर करना। इसी बात से त्रस्त, लेकिन डरे बिना, मधुसूदन सरस्वती ने सामूहिक कट्टरता को खत्म करने का फैसला किया। इसीलिए अकबर के दरबार में पहुँच गए और कहा, 'हमारे संन्यासी बार-बार म्लेच्छ शासन और मुसलिम फकीरों की असहिष्णुता के दोहरे झटके झेल रहे हैं। यदि आप चाहते हैं कि आपका नाम कलंकित न हो तो हमारे संन्यासियों की इनसे रक्षा करें। या हमें अपनी सुरक्षा के लिए स्वयं कोई व्यवस्था करने की अनुमति दें।'"

"तो क्या अकबर ने मदद करने के लिए हाथ आगे बढ़ाया माँ?" रूमी बहुत उत्सुकता से माँ की बात सुन रही थी।

"नहीं। तब मधुसूदन सरस्वती ने स्वयं कुछ कदम उठाने का निश्चय किया। उन्होंने सनातन समाज की रक्षा के लिए जैसे बिगुल बजा दिया और लोगों से जुड़ने के लिए आह्वान किया। सनातन धर्म की रक्षा के लिए उनकी नई पहल में किसी भी वर्ण के लोग शामिल होने के लिए स्वतंत्र थे। सभी वर्णों के हजारों हिंदू योद्धाओं को संन्यास की दीक्षा दी गई और इस भूमि के प्राचीन, कालातीत और मूल धर्म की रक्षा के स्पष्ट उद्देश्य के साथ एक नई प्रणाली का जन्म हुआ।

"जब मधुसूदन सरस्वती अकबर से मिलने के बाद आगरा से लौटे, तो नागा संन्यासियों ने उन्हें अपना समर्थन देने के लिए वाराणसी में एक विशाल सम्मेलन का आयोजन किया। नागा साधुओं के इतिहास का एक सावधानीपूर्वक छिपा हुआ तथ्य यह है कि वे हमलावर मुसलिम बर्बर लोगों के खिलाफ वाराणसी के हिंदू तीर्थयात्रियों के पहले सशस्त्र रक्षक थे। यही मुख्य कारण है कि नागा साधु इतने सम्मानित स्थान पर हैं और कुंभ मेले जैसे त्योहारों पर आज तक श्रद्धा अर्जित करते हैं। वे सनातन समाज और धर्म की रक्षा में, उसके लिए मरते हुए, उसकी सेवा में मरते हुए, मूल अग्रिम पंक्ति के योद्धा हैं। उस समय इसे संन्यासी आंदोलन का नाम दिया गया।"

"मैंने पढ़ा था कि फ्रांसीसी यात्री टैवर्नियर ने लिखा है कि सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में भारत में लगभग बारह लाख संन्यासी और आठ लाख फकीर थे," रूमी बोली और फिर से माँ की ओर देखने लगी। वह जिस तरह से बता रही थीं, उस वास्तविकता को जैसे वह महसूस कर पा रही थी। शायद किसी चीज को जानने या समझने के जुनून की वजह से, जो

उसके अंदर नागा साधुओं को लेकर समाहित हो गया था।

"असल में संन्यासी आंदोलन जो 1770 में शुरू हुआ और कई दशकों तक अनवरत चलता रहा, आकस्मिक नहीं था। यह पूरी तरह से सुसंगत था और एक लंबी परंपरा की निरंतरता मात्र थी। यही वजह है कि संन्यासियों और फकीरों की गतिविधियाँ उन्नीसवीं सदी की शुरुआत तक बिना किसी रुकावट के जारी रहीं। उसके बाद अंग्रेजों ने उन्हें नियंत्रित करने के लिए अत्यधिक दमनकारी उपायों की एक शृंखला शुरू की। परिणामस्वरूप, संन्यासी समूहों की टकरावपूर्ण प्रकृति ने अपनी धार खो दी। हालाँकि, आने वाले दशकों में भी नागा साधुओं और अघोरियों की धार्मिक और आध्यात्मिक गतिविधियाँ बिना रुके जारी रहीं। अब इक्कीसवीं सदी में भी उत्तर भारत के सभी अखाड़ों के अनुयायियों की अच्छी-खासी संख्या है।"

"कीरत ने डायरी में लिखा है कि अपनी पुस्तक 'आनंदमठ' में बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय ने संन्यासियों को एक पवित्र मठ के निस्स्वार्थ निवासियों के रूप में चित्रित किया है। इतिहासकारों का कहना है कि 1760 में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह करने वाले भिक्षु दशनामी नागा संन्यासी थे, जो बहुत कम या बिल्कुल कपड़े नहीं पहनते थे और अखाड़ों में रहते थे और ये अखाड़े या मठ शस्त्रागार और प्रशिक्षण केंद्र के रूप में भी काम करते थे।" बोलते-बोलते रूमी की पलकें बोझिल होते देख वह कमरे से बाहर आ गईं। उन्हें लगा इस समय उसका सोना ही ठीक है। वह जानती थीं कि देर तक वह पढ़ती रही थी।

रूमी सो गई थी, लेकिन सपने में उसे वह युद्ध आँखों के सामने होते दिख रहा था, जिसके बारे में उसने कीरत की डायरी में पढ़ा था। कीरत ने लिखा था कि नागा साधुओं ने कई छोटे-छोटे युद्ध लड़े थे, जिनके बारे में कोई नहीं जानता। नागा साधुओं ने मुगलों के खिलाफ जंग लड़कर खाटू श्याम मंदिर को भी तो बचाया था।

"हम मुगलों ने भारत के विभिन्न राज्यों में खूब खून की होली खेली है, अब जयपुर, जोधपुर की ओर कूच करते हैं। वहाँ के राजाओं के पास तो खूब धन-संपदा है ही, साथ ही मंदिरों की शान भी लाजवाब है। मेरे सैनिकों, निर्भीक होकर आगे बढ़ो, हमें भारतवासियों को अपने पैरों तले रौंदना है," घोड़े पर सवार बादशाह शाह आलम द्वितीय का सूबेदार मुर्तजा अली खाँ ने अपने पचास हजार सैनिकों का हौसला बढ़ाते हुए कहा।

लगातार जीतने के कारण सैनिकों के हौसले बुलंद थे। समय था वर्ष 1779।

"हम शेखावाटी होते हुए जयपुर जाएँगे। श्रीमाधोपुर को हम लूट चुके हैं मेरे बहादुर सैनिको! अब खाटू श्यामजी मंदिर को लूट उसे ध्वस्त करेंगे।"

"जहाँ हो, वहीं ठहर जाओ और वापस चले जाओ। वरना तुम्हारा एक भी सैनिक नहीं बचेगा," बहुत सारे स्वरों की ललकार सुन चौंक उठा मुर्तजा अली खाँ।

अपनी समाधि और ध्यान को छोड़ बहुत से नागा साधु त्रिशूल और तलवार उठाए उसके सामने आँखों में दहकती आग लिए खड़े थे। उनका नेतृत्व कर रहे थे राजस्थान के कबार कहे जाने वाले दादू पंत के संस्थापक संत दादूदयाल मंगलदास महाराज।

"हम बेशक संख्या में कम हैं, लेकिन तुमसे दुगुना कड़ा युद्ध करने की क्षमता रखते हैं। तुम जैसे आक्रांताओं से निपटना हमें आता है।

“हम अपने ढूँढ़ाड़ क्षेत्र और श्याम खाटू के मंदिर को बचाने के लिए कुछ भी कर सकते हैं। तुम कुछ नहीं कर पाओगे,” संत दादूदयाल की गरजती आवाज सुन पल भर को तो सूबेदार मुर्तजा अली खाँ ने अपना हाथी पीछे किया, लेकिन अगले ही पल भयानक हँसी गूँजी उसकी।

“तुम जैसा फकीर और नग्न साधु मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। मेरी पचास हजार सैनिकों की फौज तुम सबको पल भर में ही कुचल डालेगी। क्यों मौत का आिलंगन करना चाहते हो? हमें अपना काम करने दो, हम चले जाएँगे,” सूबेदार मुर्तजा अली खाँ अहंकार में चूर था। उसकी सेना उसे गर्व से देख रही थी और हमला करने के लिए उसके आदेश का इंतजार कर रही थी।

“वैसे भी तुम तो पहले ही डरे हुए हो, तभी तो अपने साथ नाथावत, कच्छावत व शेखावतों को भी लाए हो। तुम सब मिलकर भी मुगल सेना से मोरचा नहीं ले सकते। हमला!”

घमासान युद्ध शुरू हो गया। नागा साधु अपने त्रिशूल और तलवारों से मुगलों की सेना का सिर काट रहे थे। एक-एक नागा साधु दस-दस सैनिकों पर भारी पड़ रहा था। सेना आगे नहीं बढ़ पा रही थी कि तभी सूबेदार मुर्तजा अली खाँ ने धोखे से पीछे से संत दादूदयाल मंगलदास महाराज पर वार किया। उनका सिर कट गया था, लेकिन सिर कटने के बावजूद वह जुझारू योद्धा की तरह तलवार चलाते रहे। दादूपंथियों की सात बटालियनें हर ओर से मुगल सेना पर वार कर रही थीं। लँगोट पहने और तलवार, ढाल, तीर, भाला और कटार जैसे पाँच शस्त्र थामे वे नागा साधुओं के साथ युद्ध करते रहे।

“मारो, काटो इन साधुओं को। वह सामने देखो डूँगरी का चूहड़ सिंह नाथावत अपने दो पुत्रों के साथ चला आ रहा है। वार करो मेरे वीर सैनिकों,” मुर्तजा खाँ चिल्लाया, लेकिन उससे पहले ही चूहड़ सिंह और उसके पुत्रों ने एक साथ कई सैनिकों के सिर धड़ से अलग कर दिए। उनके खुद के शरीर पर घाव ही घाव थे, अंततः वे भी युद्ध में शहीद हो गए।

मुगल सैनिकों के शवों से बहते खून की वजह से जमीन बहुत फिसलन भरी हो गई थी, जिसकी वजह से पैदल युद्ध कर रहे नागा साधुओं के पैर फिसल रहे थे और धरती में धँस रहे थे। पर उनका हौसला कम नहीं हुआ।

“आगे बढ़ो। चाहे जान चली जाए, पर इन काफिरों को मंदिर के पास भी नहीं पहुँचने देंगे,” सेवा के दलेल सिंह, दूजोद के सलेदी सिंह शेखावत, बलारा के हनुवंत सिंह, बखतसिंह खूड़ व सूरजमल बिसाऊ, नृसिंहदास नवलगढ़ और अमर सिंह दांता की आवाजें चारों ओर से उठीं। मुगल सैनिकों के हथियारों से संघर्ष करते-करते वे भी एक-एक कर शहीद हो गए। कायमखानी मिश्री खाँ, कायस्थ अर्जुन व भीम के अलावा स्वरूप बड़वा, महादान चारण, मौजी राणा ने भी खाटू श्याम मंदिर को बचाने के लिए प्राण न्योछावर किए। लेकिन जान गँवाने से पहले इन सब वीरों ने मुर्तजा खाँ को उसके हाथी सहित मार दिया। यह देख मुगल सेना भाग गई।

“संत महाराज,” कहते हुए सारे नागा साधु उनके इर्द-गिर्द एकत्र हो गए।

“सँभालकर उठाना उनकी निष्प्राण देह को,” एक नागा साधु ने रोते-रोते कहा। उसकी

जटाएँ खुल गई थीं और बालों की लंबी-लंबी लटें गालों पर झूल रही थीं, जिन्हें उसके आँसू भिगो रहे थे।

"श्याम खाटू के मंदिर ले चलो। उसी की रक्षा में प्राण दिए हैं महाराज ने," नागा साधुओं का जनसमूह किसी सैलाब की तरह मंदिर की ओर बढ़ रहा था।

"संत महाराज की जय, संत महाराज की जय," के नारे जयघोष कर रहे थे।

"हमने अपने मंदिर को तो बचा लिया, पर इन्हें नहीं बचा पाए उन दुष्ट मुगलों से। कोई तो बचा पाता संत महाराज को।" शोर उठ रहा था।

"बचा लो इन्हें मुगलों से, कोई तो बचा लो..." रूमी सपने में चिल्ला रही थी। वह बुरी तरह से काँप रही थी।

जब उसकी नींद खुली तो देखा माँ उसे झिंझोड़ रही हैं।

"रूमी, उठो। लगता है तुमने कोई बुरा सपना देखा है। कितनी बार कहा है कि काम को लेकर इतनी पजेसिव न हो जाया करो कि वह तुम्हारे दिलो-दिमाग पर ही छा जाए।"

रूमी समझ नहीं पा रही थी कि अभी-अभी जो उसने सपने में खून बहते देखा, क्या ऐसा सचमुच हुआ था नागा साधुओं के साथ!

o

14

विश्वनाथ मंदिर की रक्षा

"तुम आज घर पर ही रहो," शाम को जब मनोहर दवे घर लौटे और उन्हें कीर्ति से पता चला कि कैसे रूमी सपने में डर गई थी, उन्होंने कहा।

"पर पापा, सब मेरा प्रो. वाचस्पति के घर पर इंतजार करेंगे और वैसे भी एक-एक दिन कीमती है। रोजलीना और डॉ. देशमुख ने कहा था कि वे आज काशी के विश्वनाथ मंदिर के संबंध में बताएँगे। नागा साधुओं की उसे बचाने में बड़ी भूमिका रही है। कीरत ने भी अपनी डायरी में विस्तृत ढंग से इस बारे में लिखा है। मेरा जाना जरूरी है," रूमी तैयार होने के लिए अपने कमरे में जाने लगी।

"मैं समझता हूँ, लेकिन दिमाग पर इतना दबाव डालना सही नहीं है। आज फिल्म देखने चलते हैं। बहुत दिनों से कोई अच्छी फिल्म नहीं देखी," मनोहर दवे ने समझाते हुए कहा।

"यकीन मानिए पापा, मैं आपके साथ फिल्म देखने चली भी जाती हूँ तो मेरा मन नहीं लगेगा। आप और माँ जाइए, मैं तो चली।"

"जब तक इसकी रिसर्च पूरी नहीं हो जाती, यह किसी की नहीं सुनेगी। लेकिन सच कहूँ आज जब रूमी के साथ चर्चा हो रही थी तो आनंद बहुत आया," कीर्ति मुसकराते हुए बोली।

"शुक्र है, अब कम-से-कम मेरी बेटी को तुम्हारी नाराजगी नहीं सहनी पड़ेगी। हम चलते हैं फिल्म देखने। लौटते हुए प्रो. वाचस्पति के घर चलेंगे और रूमी को साथ ले आएँगे।"

रूमी जब प्रो. वाचस्पति के घर पहुँची तो देखा सब वहाँ मौजूद हैं और उसी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यहाँ तक कि शेखर भी आ चुका था। उसे शर्मिंदगी महसूस हुई।

"सॉरी मैं लेट हो गई," कहते हुए वह कुरसी पर बैठ गई। फोन बैग से निकाला तो देखा उसमें शेखर की पाँच मिस्ड कॉल थीं। शेखर ने आँखों-ही-आँखों में उससे पूछा कि क्या बात है तो उसने इशारों में ही बताया कहा कुछ नहीं। लेकिन शेखर साफ देख पा रहा था रूमी के चेहरे पर फैली थकान और अजीब सी बेचैनी को।

रूमी ने बैग में से कीरत की डायरी निकालकर मेज पर रख दी।

"और कुछ पढ़ा तुमने रूमी?" रोजलीना ने उत्सुकता से पूछा।

"हाँ," रूमी ने संक्षिप्त उत्तर दिया। वह खाटू श्याम मंदिर का जिक्र नहीं करना चाहती थी इस समय। उस भयानक घटना से वह अभी तक आक्रांत थी।

"एनीथिंग इंटरेस्टिंग?" रोजलीना ने फिर सवाल किया।

"विल टॉक अबाउट लेटर। आज डॉ. देशमुख की सुनते हैं और तुम भी तो लेकर आई हो अपने नोट्स, आई बिलीव," रूमी ने बात बदली।

शेखर ने फिर उसे देखा। रूमी का व्यवहार आज सामान्य नहीं लग रहा था। लेकिन सबके सामने पूछना उसे ठीक नहीं लगा।

"आज मैं औरंगजेब की दरिंदगी के बारे में बताने वाला हूँ। मुगलों ने लालच की वजह से हमेशा ही भारत के मंदिरों को अपना निशाना बनाया। समय-समय पर मुगल आक्रमणकारियों ने कई धार्मिक संरचनाओं और साधुओं पर हमला किया। जिसने सत्ता सँभाली उसने अपनी क्रूरता का प्रदर्शन किया और जो लुटेरे बनकर आए, उन्होंने भी कम उत्पात नहीं मचाया। लेकिन जब-जब ऐसा हुआ, नागा साधुओं ने एक छतरी के नीचे लड़ने के लिए अखाड़ों का गठन करके विद्रोह किया। वे एक ठोस ताकत बन गए और उन्होंने हिंदू वैदिक परंपरा के प्रतीक भगवा झंडे लहराए। नागा साधुओं को वैदिक विरोधी आक्रमणकारियों से लड़ने के लिए प्रशिक्षित किया गया था। यही कारण है कि हिंदू अब भी नागा साधुओं का सम्मान करते हैं और उन्हें भगवान् का प्रतिनिधि मानते हैं," डॉ. देशमुख ने अपनी बात कहनी आरंभ की। इस बीच वह लगातार अपनी अँगूठियों को घुमाते रहे थे। आज उन्होंने नेवी ब्लू कलर का सफारी सूट पहना हुआ था और उसमें उनका व्यक्तित्व और ज्यादा खिल रहा था।

दीपशिखाजी घर पर नहीं थीं, इसलिए प्रो. वाचस्पति एक-दो बार बीच में उठे थे सेवकों को निर्देश देने के लिए।

"आज डिनर रहने दीजिए प्लीज। मैम भी घर पर नहीं हैं। एवरीडे वी कांट गिव यू ट्रबल," रोजलीना बोली तो प्रो. वाचस्पति मुसकराते हुए बोले, "नो ट्रबल, इट्स माई प्लैजर।"

रूमी जानती है कि वह मानेंगे नहीं, इसलिए वह भी उनके पीछे-पीछे किचन की ओर जाने लगी।

"तुम बैठो। मैं बस एक मिनट में आया। डोंट वेस्ट युअर टाइम," प्रो. वाचस्पति के स्वर में आदेश था।

"हाँ रूमी, मैं आज देर तक नहीं रुक पाऊँगा। मेरी एक बजे की फ्लाइट है न्यूयॉर्क की। सिर्फ तुम्हारे लिए ही आया हूँ। मेरे पास जो जानकारी है, वह शेयर करता हूँ," डॉ. देशमुख ने अपनी अँगूठियाँ इस बार तेजी से घुमाते हुए कहा। वह सीधे यहाँ से एयरपोर्ट ही जाने वाले थे। "काशी विश्वनाथ मंदिर का इतिहास बहुत दुःखद है, यह कहा जा सकता है, क्योंकि कई बार उसे तोड़ा गया और कई बार उसका निर्माण करवाया गया है। लेकिन खुशी की बात यह है कि आज वह शान से खड़ा है और नई पीढ़ी उसके वैभव की साक्षी बन रही है। अतीत दुःखद था, पर वर्तमान सुखद हो तो थोड़े-बहुत घाव भरने में मदद मिलती है," वह भावुक हो उठे थे।

'सच में इतिहासकारों और पुरातत्त्ववेत्ताओं के लिए इमारतों के अतीत से रू-ब-रू होना, जहाँ एक तरफ रोमांचकारी होता है, वहीं पीड़ित भी करता है,' रूमी ने सोचा।

"कहते हैं कि गंगा किनारे बसी काशी नगरी भगवान् शिव के त्रिशूल की नोक पर बसी है, जहाँ बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक काशी विश्वनाथ विराजमान हैं। पतित-पावनी भागीरथी गंगा के तट पर धनुषाकारी बसी हुई यह काशी नगरी वास्तव में पाप-नाशिनी है। भगवान् शंकर को यह स्थान अत्यंत प्रिय है, इसलिए उन्होंने इसे अपनी राजधानी एवं अपना नाम

दिया और काशी के नाथ काशी विश्वनाथ हुए हैं। काशी विश्वनाथ मंदिर 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक है और कम-से-कम महाभारत युग जितना पुराना है," रोजलीना बोली।

"मुगल शासकों ने कई बार विश्ववाथ मंदिर को नष्ट करने का प्रयास किया। सबसे पहले कुतुब-उद-दीन ऐबक ने 1194 ई. में इसे अपवित्र किया था। वह तब मोहम्मद गौरी की सेना के अधीन एक सेनापति था। नष्ट हुए खँडहर कुछ वर्षों तक उपेक्षित रहे। अन्य मंदिरों की तरह इस मंदिर का भी पुनर्निर्माण किया गया। तेरहवीं शताब्दी के मध्य से एक गुजराती व्यापारी के संरक्षण में इसका पुनर्निर्माण किया गया था। फिर जौनपुर सल्तनत के शर्की शासकों द्वारा काशी को फिर से लूट लिया गया और उसके बाद सिकंदर लोधी की मुसलिम सेना ने पंद्रहवीं शताब्दी में इसे लूटा जिसके बाद राजा टोडरमल ने इसे सोलहवीं सदी के आखिरी हिस्से में यानी 1585 में दोबारा बनवाया।

"चीनी यात्री ह्वेनसांग के अनुसार, उसके समय में काशी में सौ मंदिर थे, पर मुसलिम आक्रमणकारियों ने सभी मंदिर ध्वस्त कर मसजिदों का निर्माण किया। ईसा पूर्व ग्यारहवीं सदी में राजा हिरशचंद्र ने जिस विश्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था, उसका सम्राट् विक्रमादित्य ने निर्माण करवाया था। इस मंदिर को 1194 में मोहम्मद गौरी ने लूटने के बाद तुड़वा दिया था। इसे फिर से बनाया गया, लेकिन एक बार फिर इसे सन् 1447 में जौनपुर के सुल्तान महमूदशाह द्वारा तोड़ दिया गया। पुन: सन् 1585 ई. में राजा टोडरमल की सहायता से पं. नारायण भट्ट द्वारा इस स्थान पर फिर से एक भव्य मंदिर का निर्माण करवाया गया।"

"मैंने सुना है कि औरंगजेब के शासन में एक बार मंदिर के निहत्थे पुजारियों पर हमला भी किया गया था, तब मंदिर का मुख्य पुजारी शिवलिंग को बचाने के लिए उसे लेकर कुएँ में कूद गया। पुजारी की मृत्यु हो गई और शिवलिंग कुएँ में ही रह गया। फिर औरंगजेब ने मंदिर के स्थान पर ज्ञानवापी मसजिद बनवा दी," रोजलीना बोली।

"सही सुना है तुमने," डॉ. देशमुख ने गंभीर स्वर में कहा। वह कुरसी पर पीठ टिकाकर इस तरह बैठ गए, मानो किसी गहरी सोच में हों। सबकी निगाहें उन पर टिकी हुई थीं। उन्होंने पानी का गिलास उठाया और सारा पानी पी गए। जैसे भीतर उमड़ आए किसी आक्रोश को शांत करने की कोशिश कर रहे हों। फिर बोले, "इस भव्य मंदिर को तोड़ने के लिए, सन् 1632 में शाहजहाँ ने आदेश पारित कर सेना भेज दी। सेना हिंदुओं के प्रबल प्रतिरोध के कारण विश्वनाथ मंदिर के केंद्रीय मंदिर को तो तोड़ नहीं सकी, लेकिन काशी के 63 अन्य मंदिर तोड़ दिए गए।

"इतिहासकार एल.पी. शर्मा ने अपनी पुस्तक 'मध्यकालीन भारत' में लिखा है, '18 अप्रैल, 1669 को औरंगजेब ने एक फरमान जारी कर काशी विश्वनाथ मंदिर ध्वस्त करने का आदेश दिया था। यह फरमान एशियाटिक लाइब्रेरी, कोलकाता में आज भी सुरक्षित है। उस समय के लेखक साकी मुस्तइद खाँ द्वारा लिखित 'मासीदे आलमगीरी' में इस विध्वंस का वर्णन है। औरंगजेब के आदेश पर मंदिर तोड़कर एक ज्ञानवापी मसजिद बनाई गई। 2 सितंबर, 1669 को औरंगजेब को मंदिर तोड़ने का कार्य पूरा होने की सूचना दी गई थी।

'यही नहीं, 1669 में सभी सूबेदारों और मुसाहिबों को हिंदू मंदिरों और पाठशालाओं को

तोड़ देने की आज्ञा दी गई थी। इसके लिए एक पृथक् विभाग भी खोला गया। यह तो संभव नहीं था कि हिंदुओं की सभी पाठशालाएँ और मंदिर नष्ट कर दिए जाते, परंतु मथुरा का केशवदेव मंदिर, पाटन का सोमनाथ मंदिर और प्राय: सभी बड़े मंदिर, खासतौर पर उत्तर भारत के मंदिर इसी समय तोड़े गए।'

"विश्वनाथ मंदिर तोड़ने और फिर मसजिद बनवाने के बारे में कुछ अन्य इतिहासकारों ने भी तथ्य लिखे हैं, जैसे—मशहूर इतिहासकार डॉ. विश्वंभर नाथ पांडेय अपनी पुस्तक 'भारतीय संस्कृति, मुगल विरासत : औरंगजेब के फरमान' में गांधीवाद के प्रख्यात आचार्य एवं व्याख्याता पट्टाभि सीतारमैया की पुस्तक 'फेदर्स एंड स्टोंस' के हवाले से विश्वनाथ मंदिर को तोड़े जाने संबंधी औरंगजेब के आदेश और उसकी वजह के बारे में बताते हुए लिखते हैं, 'एक बार औरंगजेब बनारस के निकट के प्रदेश से गुजर रहा था। सभी हिंदू दरबारी अपने परिवार के साथ गंगा स्नान और विश्वनाथ दर्शन के लिए काशी आए। विश्वनाथ दर्शन कर जब लोग बाहर आए तो पता चला कि कच्छ के राजा की एक रानी गायब हैं। खोज की गई तो मंदिर के नीचे तहखाने में वस्त्राभूषणविहीन, भय से त्रस्त रानी दिखाई पड़ीं। जब औरंगजेब को पंडों की यह काली करतूत पता चली तो वह बहुत क्रुद्ध हुआ और बोला कि जहाँ मंदिर के गर्भगृह के नीचे इस प्रकार की डकैती और बलात्कार हो, वह निस्संदेह ईश्वर का घर नहीं हो सकता। उसने मंदिर को तुरंत ध्वस्त करने का आदेश जारी कर दिया।'

"विश्वंभर नाथ पांडेय लिखते हैं, 'औरंगजेब के आदेश का तत्काल पालन हुआ। लेकिन जब यह बात कच्छ की रानी ने सुनी तो उन्होंने उसके पास संदेश भिजवाया कि इसमें मंदिर का क्या दोष है, दोषी तो वहाँ के पंडे हैं। रानी ने इच्छा प्रकट की कि मंदिर को दोबारा बनवा दिया जाए। औरंगजेब के लिए अपने धार्मिक विश्वास के कारण, फिर से नया मंदिर बनवाना संभव नहीं था, इसलिए उसने मंदिर की जगह मसजिद खड़ी करके रानी की इच्छा पूरी की।"

"इट्स रियली सैड," प्रो. वाचस्पति, जो लौट आए थे, ने डॉ. देशमुख की बात सुनकर कहा, "मुझे लगता है कि नई पीढ़ी को इस सच के बारे में पता होना चाहिए, क्योंकि उसे तो पाठ्यपुस्तकों में यही पढ़ाया जा रहा है कि मुगल कितने पराक्रमी थे और भारतीयों को लूटना कितना आसान था।"

"सच में प्रोफेसर बहुत अन्याय हुआ है हमारी संस्कृति के साथ," डॉ. देशमुख ने फिर से अँगूठियाँ घुमाते हुए कहा।

प्रो. वाचस्पति बोले, "यू नो रोजलीना, औरंगजेब और उसकी मुगल सेना ने जब 1664 में काशी विश्वनाथ मंदिर पर पुनः हमला किया था, तब नागा साधुओं ने तंग आकर पहली बार इसका विरोध किया था और मंदिर को बचाया। उन्होंने औरंगजेब और उसकी सेना को बुरी तरह पराजित किया। मुगलों की इस हार का उल्लेख जेम्स जी. लोचटेफेल्ड की पुस्तक 'द इलस्ट्रेटेड इनसाइक्लोपीडिया ऑफ हिंदुइज्म', खंड 1 में मिलता है। उन्होंने इस घटना को अपनी पुस्तक में 'ज्ञानवापी की लड़ाई' के रूप में वर्णित किया। ध्यान देने वाली बात है कि औरंगजेब और उसकी सेना के खिलाफ नागा साधुओं की 'जीत' को इस विवरण में उन्होंने

‘महान्’ कहा है। भले ही इस युद्ध का ठीक से वर्णन न किया गया हो, पर आप कल्पना कर सकते हैं कि कैसे नागा साधुओं ने विशाल और सशस्त्र मुगल सेना पर ऐसा कहर ढाया कि फिर चार वर्षों तक काशी की ओर आँख उठाकर देखने की उनकी हिम्मत नहीं हुई।”

डॉ. देशमुख बार-बार घड़ी देख रहे थे।

“सर, कीरत ने भी डायरी में इसका उल्लेख किया है,” रूमी ने हरे रंग की स्याही से लिखे अंश को दिखाते हुए कहा, “वह लिखता है कि जेम्स जी. लोचटेफेल्ड ने अपनी पुस्तक में लिखा, ‘महान निर्वाणी अखाड़े के नागा तपस्वी योद्धाओं द्वारा कथित तौर पर बनारस में लड़ाई लड़ी गई। अखाड़े के अभिलेखागार में एक हस्तलिखित पुस्तक के अनुसार, 1664 में अखाड़े के सैनिकों ने ज्ञानवापी कुएँ के पास एक बड़ी जीत हासिल की। यह दस्तावेज केवल यह बताता है कि संन्यासी ‘सुल्तान’ की ताकतों के खिलाफ विजयी थे। हालाँकि, इतिहासकारों ने अनुमान लगाया है कि यह आँकड़ा मुगल सम्राट् औरंगजेब का था। अगर कहानी सच है, तो यह लड़ाई 1669 में विश्वनाथ मंदिर को तोड़ने के औरंगजेब के फैसले में एक महत्त्वपूर्ण कारक हो सकती है। नागा साधुओं ने अपनी आखिरी साँस तक जवाबी काररवाई की होगी। स्थानीय लोककथाओं और मौखिक कथाओं के अनुसार, लगभग 40,000 नागा साधुओं ने काशी विश्वनाथ ज्योतिर्लिंग की रक्षा करते हुए, लाखों की मुगल सेना से लड़ते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दी। इस्लामी लुटेरों ने हमेशा युद्ध में छल और छल की रणनीति का पालन किया है और हम हिंदुओं ने अपने लिए लड़नेवालों का साथ नहीं दिया, अन्यथा 40,000 नागा भारत के इतिहास में अंकित होना तो छोड़िए, उसकी धारा ही मोड़ देते। अगर थोड़ी भी सहायता मिलती तो वे मुगलिया सल्तनत को वहीं नरक भेज देते।’”

“औरंगजेब ने जब 1669 में वाराणसी पर फिर से हमला किया था तो वह समझ गया था कि मंदिर हिंदुओं की आस्था और भावनाओं से जुड़ा है, इसलिए उसने यह सुनिश्चित किया कि इसे फिर से नहीं बनाया जाएगा और इसकी जगह ज्ञानवापी मसजिद का निर्माण किया गया। मुझे अब निकलना होगा,” घड़ी देखते हुए डॉ. देशमुख उठ खड़े हुए। सबके हाथ उनके सम्मान में जुड़ गए।

“इट वॉज प्लैशर मीटिंग यू,” रोजलीना बोली। रूमी ने उनके पाँव छुए और शेखर व प्रो. वाचस्पति उन्हें बाहर छोड़ने चले गए। उनकी कार घर के बाहर ही खड़ी थी।

o

15

कम नहीं किए संघर्ष

साढ़े आठ बज रहे थे। रूमी जानती थी कि एक घंटे तक उसके माँ-पापा भी उसे लेने आ जाएँगे। "वे भी हमारे साथ ही डिनर करें, उन्हें तुम मैसेज कर दो," यह प्रो. वाचस्पति ने पहले ही रूमी से कह दिया था। "तब तक दीपशिखा भी लौट आएगी।" उन्हें 'न' कहना नामुमकिन है, यह बात अब तक रूमी जान चुकी थी। उनके जैसे सहृदय इनसान के अनुरोध या आदेश का उल्लंघन वह कर नहीं सकती।

शेखर स्टडी में आया और हँसते हुए बोला, "कुछ मैं भी बता सकता हूँ क्या? हालाँकि मेरे सामने बैठीं दो विद्वान् लड़कियों के सामने मेरा ज्ञान तो न के बराबर ही है।"

"ज्यादा स्टाइल मत मारो," रूमी उसके कंधे पर हाथ मारते हुए बोली।

"यू आर मोस्ट वेलकम शेखर। प्लीज शेयर," रोजलीना ने बहुत शालीनता से कहा।

"अगर आज हम भारत के इतिहास को देखते हैं कि हमें पता चलता है कि इस्लामी आक्रांताओं से लड़ने में जहाँ हमारे योद्धाओं ने अहम भूमिका निभाई, साधु-संन्यासियों ने भी मंदिरों और धर्म की रक्षा के लिए जान दाँव पर लगा दी। सोचा जाए तो इस्लामी शक्तियों के पास सब कुछ था, यानी अत्याधुनिक हथियार, धर्मांतरण के लिए प्रलोभन और सत्ता का संरक्षण। इन सबके बावजूद अगर आज हिंदू धर्म मजबूती से बचा हुआ है तो इसके पीछे आम जनमानस में राम-कृष्ण के प्रति आस्था जगाने वाले भक्तियोग के संतों के अलावा साधुओं के संघर्ष का भी योगदान है।

"बंगाल में ईस्ट इंडिया कंपनी के खिलाफ भी संन्यासी उठ खड़े हुए थे, जिसे 'संन्यासी रिबेलियन' के रूप में जाना जाता है। यह 1770 में ही शुरू हो गया था, जब बक्सर युद्ध के बाद ब्रिटिश लोगों से टैक्स वसूलने लगे थे। संन्यासियों ने जलपाईगुड़ी के मुर्शिदाबाद और वैकुंठपुर के जंगलों में सशस्त्र युद्ध किए। बंकिम चंद्र चटर्जी ने अपनी पुस्तक 'आनंद मठ' में जहाँ इसे हिंदुओं का आंदोलन कहा है, वामपंथी इतिहासकारों ने इसे साम्राज्यवाद और सामंतवाद के खिलाफ लड़ाई बताया। अवध व बंगाल के नवाबों और महाराष्ट्र के राजपूत राजाओं की सेना में भी संन्यासियों को शामिल किया गया था। यह आंदोलन लगभग पाँच दशक तक चलता रहा था।

"इन नागा साधुओं का वर्णन जदुनाथ सरकार, जो मुगल वंश के बारे में लिखने वाले अग्रणी इतिहासकार थे, की पुस्तक 'ए हिस्टरी ऑफ दशनामी नागा संन्यासी' में भी मिलता है। उनके मुताबिक, 'नागा साधुओं ने महान् गौरव प्राप्त किया था। सूर्योदय से सूर्यास्त तक युद्ध छिड़ गया था और दशनामी नागाओं ने खुद को नायक साबित कर दिया। उन्होंने विश्वनाथ के सम्मान की रक्षा की।"

“ये तो वे युद्ध हैं, जिनके बारे में फिर भी हमें कहीं-कहीं थोड़ी जानकारी मिल जाती है, लेकिन इनके अलावा भी नागा साधुओं ने कई युद्ध लड़े और समाज व धर्म की रक्षा की,” प्रो. वाचस्पति तब तक आ गए थे। उनके साथ दीपशिखाजी ने भी स्टडी में प्रवेश किया तो सबके चेहरे उन्हें देख खिल उठे। उनके गरिमामय व्यक्तित्व से सभी प्रभावित रहते थे।

“ओह हो, अब कोई क्यों सुनेगा मेरी,” प्रो. वाचस्पति ने हँसते हुए कहा।

“जा रही हूँ मैं यहाँ से। दस मिनट में डिनर टेबल पर मिलते हैं,” शरारत भरी नजरों से पति को देखती दीपशिखाजी बाहर चली गईं।

“सर, आप मैडम को बहुत परेशान करते हैं,” शेखर ने चुहल की।

“रूमी से शादी के बाद तुम्हारे सामने सारे राज खुल जाएँगे शेखर और पुरुष की मजबूरी भी समझ आ जाएगी,” प्रो. वाचस्पति ने भी उसे छेड़ा, “खैर, दस मिनट हैं हमारे पास तो मैं उन युद्धों के बारे में बता रहा था, जिनका उल्लेख कम ही मिलता है। गुजरात के कच्छ और भुज में भी इन्होंने रण लड़े। मठ इनके गढ़ हुआ करते थे और ये हाथियों और घोड़ों पर चला करते थे। भाला और त्रिशूल तब भी इनका मुख्य हथियार होता था और आज भी है। मध्य प्रदेश में नागौद राज्य की नींव नागा संन्यासियों ने डाली। वहाँ के शासक इनके उपासक थे।

“झाँसी की रानी को भी नागा साधुओं ने सहयोग दिया था। रानी लक्ष्मीबाई के गुरु पूरनविराठी पीठाधीश स्वामी गंगादासजी महाराज थे। जब अंग्रेजों के विरुद्ध पहला संगठित संग्राम 1857 में आरंभ हुआ तब रानी लक्ष्मीबाई दतिया से ग्वालियर सिंधिया से मदद माँगने आई थीं, लेकिन वह उनसे नहीं मिले। वहाँ से लौटते समय उनका घोड़ा ग्वालियर की स्वर्णरेखा नदी को पार नहीं कर सका और गिर गया। इसी वक्त उनकी बाईं जाँघ में गोली लगी। इसके बावजूद उन्होंने बाएँ हाथ से तलवार चलाकर शत्रु सैनिक को मार गिराया। अंग्रेजी की आठवीं हुसार्स सेना के एक सैनिक ने रानी के माथे पर तलवार मारी, इससे उनका सिर नेत्र तक चिर गया। तेजी से खून बहने लगा। लेकिन रानी ने गिरते-गिरते एक बार फिर अपने पराक्रम का परिचय देकर उस सैनिक का कंधा काट डाला। इस वक्त रानी के पठान सरदार गुल मोहम्मद ने उस हुसार्स सैनिक का वध कर दिया।

“रानी के अन्य सरदार रामचंद्र देशमुख व दीवान रघुनाथ सिंह, हुसार्स सैनिकों पर टूट पड़े। ऐसे में हुसार्स सैनिक भाग खड़े हुए। इसके बाद घायल रानी को उनके सरदार समीप में साधु गंगादास की कुटी में ले गए। साधु गंगादास ने उनके मुँह में पवित्र गंगाजल दिया। रघुनाथ सिंह से उन्होंने पूछा कि मैं कहा हूँ। गंगादास की बड़ीशाला का नाम सुनते ही रानी ने उनसे शाला जाने को कहा। जब वे गुरु के पास आईं तो उन्होंने कहा कि ‘मैं अब नहीं जी सकूँगी, लेकिन मेरे शरीर और मेरे बेटे को अंग्रेजों के हाथों में नहीं पड़ने देना।’ इसके बाद जब अंग्रेजों ने शाला को बाहर से घेर लिया। तब शाला में मौजूद लगभग दो हजार साधुओं ने रानी के साथ लड़ने को कहा, क्योंकि नागा साधु अस्त्र-शस्त्र और तोप चलाने में सक्षम थे, इसलिए उन्होंने रानी की मदद की। इस युद्ध में 745 नागा साधु शहीद हुए और रानी के पुत्र को लेकर दो साधुओं को शाला से भगा दिया। इसके बाद अंग्रेजों ने मठ को उजाड़ दिया और संपत्ति को लूटा।”

"एक तरफ भारत की वीरांगनाओं और वीरों पर गर्व होता है, वहीं दूसरी ओर उनके त्याग और देश व धर्म की रक्षा के लिए लहुलूहान होने और वीरगति प्राप्त करने के बारे में सोचते ही मैं काँप उठती हूँ। मैं भारतीय वीरों को सैल्यूट करती हूँ," रोजलीना ने खड़े होकर सचमुच सैल्यूट किया तो उसकी आँखें नम थीं।

'विदेशी धरती की लड़की को भारतीय इतिहास और संस्कृति पर गर्व करते देखने से बड़ा सुखद अहसास क्या हो सकता है,' रूमी ने सोचा और प्रशंसात्मक नजरों से रोजलीना को देखने लगी।

"1857 की ही एक और घटना है। पूरे देश में अंग्रेजों के खिलाफ बिगुल बज चुका था। रूमी कीरत की डायरी में मैंने यह अंश रेखांकित किया है, तुम पढ़कर सुनाओ तब तक मैं जाकर दीपशिखा की मदद करता हूँ," प्रो. वाचस्पति ने टेबल पर रखी कीरत की डायरी की ओर इशारा करते हुए कहा और बाहर निकल गए।

रूमी ने डायरी उठाकर देखा, एक पृष्ठ पर बुकमार्क लगा था। लगता है यहीं बैठे-बैठे उन्होंने इसे पढ़ा होगा और बुकमार्क लगा दिया। वह पढ़ने लगी, "उत्तर प्रदेश के मऊ जिले में तो क्रांति की ज्वाला की पहली लपट 1857 के तेरह साल पहले 6 जून को मऊ कस्बे में छह अंग्रेज अफसरों के खून से आहुति ले चुकी थी। 1 अप्रैल, 1858 को म.प्र. के रीवा जिले की मनकेहरी रियासत के जागीरदार ठाकुर रामत सिंह बाघेल ने लगभग तीन सौ साथियों को लेकर नागौद में अंग्रेजों की छावनी पर आक्रमण कर दिया। मेजर केलिस को मारने के साथ वहाँ पर कब्जा जमा लिया। इसके बाद 23 मई को सीधे अंग्रेजों की तत्कालीन बड़ी छावनी नौगाँव का रुख किया। पर मेजर कर्क की तगड़ी व्यूह रचना के कारण यहाँ पर वे सफल न हो सके। वे रानी लक्ष्मीबाई की सहायता करने के लिए झाँसी जाना चाहते थे, पर उन्हें चित्रकूट का रुख करना पड़ा। यहाँ पर पिंडरा के जागीरदार ठाकुर दलगंजन सिंह ने भी अपनी 1500 सिपाहियों की सेना को लेकर 11 जून, 1858 को दो अधिकारियों की हत्या कर उनका सामान लूटकर चित्रकूट का रुख किया।

"यहाँ के हनुमान धारा के पहाड़ पर उन्होंने डेरा डाल रखा था, जहाँ उनकी सहायता नागा साधु-संत कर रहे थे। लगभग तीन सौ से ज्यादा नागा साधु क्रांतिकारियों के साथ अगली रणनीति पर काम कर रहे थे। तभी नौगाँव से वापसी करते ठाकुर रणमत सिंह वाघेल भी अपनी सेना लेकर आ गए। इसी समय पन्ना और अजयगढ़ के नरेशों ने अंग्रेजों की फौज के साथ हनुमान धारा पर आक्रमण कर दिया। तत्कालीन रियासतदारों ने भी अंग्रेजों की मदद की। सैकड़ों साधुओं ने क्रांतिकारियों के साथ अंग्रेजों से लोहा लिया। तीन दिनों तक चले इस युद्ध में क्रांतिकारियों को मुँह की खानी पड़ी। ठाकुर दलगंजन सिंह यहाँ पर वीरगति को प्राप्त हुए, जबकि ठाकुर रणमत सिंह गंभीर रूप से घायल हो गए। करीब तीन सौ साधुओं के साथ क्रांतिकारियों के खून से हनुमान धारा का पहाड़ लाल हो गया। आखिर नागा साधुओं का यह त्याग और बलिदान क्यों नहीं दिखाई देता है किसी को?" अंश खत्म करते हुए रूमी भावुक हो गई थी।

"यह सवाल तो सभी के मन में उठ रहा है इन दिनों," शेखर बोला, "लेकिन मुझे यकीन है कि जब तुम्हारा यह रिसर्च पेपर लोग पढ़ेंगे तो न सिर्फ नागा साधुओं को लेकर उनके मन में

उठने वाली शंकाएँ दूर हो जाएँगी, बल्कि उनको देखने का नजरिया भी बदल जाएगी। उनके नग्न व भयानक रूप को देख जो डर लोगों के अंदर पैदा होता है, वह भी दूर हो जाएगा।”

“तुम दोनों जब पहली बार नागा साधुओं से और वह भी बहुत सारे साधुओं से गुफा में मिले थे तो क्या डर नहीं लगा था?” शेखर की बात सुन रोजलीना ने पूछा।

“झूठ नहीं कहूँगा, डर लगा तो था। लेकिन उनसे बात करने के बाद धीरे-धीरे भय की जगह कौतूहल ने ले ली थी और फिर रूमी की खातिर मैं कुछ भी सह सकता हूँ,” थोड़े नाटकीय अंदाज में शेखर बोला तो रूमी मुसकराई।

“मुझे तो बहुत डर लगा था और शेखर ने डरकर झूठ ही बोल दिया था कि हम वहाँ नागा साधु बनने आए हैं। यानी मैं नागा साध्वी, कुछ भी बोल देते हो तुम शेखर। यह तो शुक्र है उन्होंने हमारी बात धैर्य से सुनी और हमें खदेड़कर गुफा से बाहर नहीं किया वरना उनका क्रोध तो जग-प्रसिद्ध है।” रूमी को नागा साधुओं से हुई मुलाकात याद आते ही हँसी आ गई।

यह सुन शेखर झेंप गया, क्योंकि रोजलीना उसे हैरानी से देख रही थी। अपनी झेंप मिटाने व बात का रुख बदलने के खयाल से वह बोला, “नागा साधु बेवजह क्रोध नहीं करते हैं। यही धारणा तो दूर करनी है लोगों की। कुंभ के मेले में उन्हें देख लोग न जाने क्या-क्या सोचने लगते हैं! उनके पराक्रम के बजाय उनके बाहरी रूप से उनका आकलन करते हैं। नागा साधु की बात सुनते ही हमारा परिष्कृत समाज राख में लिपटे असभ्य और विचित्र संतों के बारे में सोचता है। हालाँकि, शिक्षा और सभ्यता के नाम पर अंग्रेजों ने यह गलतफहमी पैदा की है। इन अंग्रेजों का मुख्य उद्देश्य हमें हमारे गौरवशाली इतिहास से दूर रखना था। सच तो यही है न कि इन तपस्वी योद्धाओं या नागा साधुओं ने मुगलों, तुर्कों, फारसियों, अफगानों, गोरी और अंग्रेजों सहित विदेशी आक्रमणकारियों के खिलाफ लगातार लड़ाई लड़ी। वे भारत की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा को बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध थे।”

“तुमने अभी नागा साध्वियों का जिक्र किया रूमी। मुझे उनके बारे में भी जानना है,” अचानक ही अपनी सोच में डूबी रोजलीना बोली, “रियली आई वाज नॉट अवेयर अबाउट नागा साध्वीज।”

“अवश्य बताऊँगी, लेकिन कल। आज शेखर को अपनी बात पूरी करने दो वरना कहेगा हमने उसे बोलने का मौका नहीं दिया। वैसे भी देर हो गई है।” रूमी ने शेखर की ओर ऐसे देखा मानो जताना रही हो कि देखो तुम्हें भी बोलने का पूरा दिया जा रहा है।

शेखर का मन उस समय इतिहास के पन्ने पलट रहा था, इसलिए उसे कोई जवाब दिए बिना बताने लगा, “पृथ्वीराज चौहान के समय में जब मोहम्मद गौरी ने उस पर आक्रमण किया था तो पृथ्वीराज की सेना के पहुँचने से पहले ही नागा साधुओं ने कुरुक्षेत्र में गौरी की सेना को घेर लिया था। इतिहासकार तराइन के दूसरे युद्ध की बात करते हैं, जिसमें पृथ्वीराज चौहान की हार हुई थी, लेकिन तराइन का पहला युद्ध जो 1191 में हुआ था, उसका उल्लेख नहीं करते जब गौरी की सेना कुरुक्षेत्र और पेहोवा के मंदिरों को नुकसान पहुँचाने की कोशिश कर रही थी तब कैसे नागा साधुओं ने पृथ्वीराज की सेना के साथ

मिलकर गौरी की सेना को तराइन में काट दिया था। इस युद्ध के बाद, पृथ्वीराज चौहान ने सम्मान दिखाने के लिए कुंभ में नागा साधु योद्धा भिक्षुओं को हिंदू धर्म का ध्वज दिया, क्योंकि उन्हें पता था कि उनका शासन जल्द ही समाप्त हो जाएगा और उनसे बेहतर इस ध्वज की रक्षा कोई नहीं कर सकता। वह जानते थे कि ये नागा साधु हमेशा हिंदू धर्म की रक्षा में खड़े रहे हैं।

"यही नहीं, इस युद्ध के बाद जो कुंभ हुआ, उसमें नागा योद्धाओं को सम्मान देने के लिए पृथ्वीराज चौहान ने कुंभ में सबसे पहले स्नान करने का अधिकार उन्हें दिया था। तब से यह परंपरा चली आ रही है कि कुंभ का पहला स्नान नागा साधु करेंगे," शेखर बोलते-बोलते प्रो. वाचस्पति की बुकशेल्फ में लगी पुस्तकें देखने लगा था। बेशक वह विज्ञान का पक्षधर था, लेकिन इतिहास इस समय उसे व्यथित कर गया था। इसीलिए अपना ध्यान बँटाने के लिए वह पुस्तकें पलटने लगा था। फिर अचानक बोला, "संसार-प्रसिद्ध महाराणा प्रताप ने जब मुगलों के खिलाफ युद्ध छेड़ा था तो नागा संन्यासियों ने उनकी मदद की थी जिसके बाद मुगलों के छक्के छूट गए थे। राजस्थान में पंचमहुआ इलाके में छापली तालाब व राणाकड़ा घाट के बीच में हुए युद्ध में वहाँ मारे गए नागा साधुओं की समाधियाँ आज भी देखी जा सकती हैं। युद्ध में साधुओं की महारत का प्रमाण 'अकबरनामा' की एक पेंटिंग में मिलता है, जिसमें साधुओं के दो समूह तलवारों से युद्ध कर रहे हैं।

"युद्ध और अहिंसा के हथियार एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते हैं। फिर भी, इतिहास मुगल और ब्रिटिश भारत में ऋषि-योद्धाओं का गवाह है, जिन्होंने प्राचीन हिंदू धर्मग्रंथों में वर्णित युद्ध हथियारों के उपयोग का प्रशिक्षण देकर 'अहिंसा' की अवधारणा को एक नया आयाम दिया। और तो और जब तैमूर लंग भारत आया था तो..."

"रूमी," माँ की आवाज आई तो वह बोली, "चलो बाहर चलते हैं। माँ-पापा भी आ गए हैं। फिर बात करेंगे। वैसे भी प्रो. वाचस्पति और दीपशिखाजी को ज्यादा इंतजार कराना ठीक नहीं है।"

o

16

नागा साध्वी

‘नागा साधुओं का जीवन साहस, स्वतंत्रता और असाधारण अनुशासन का है।’ कीरत ने जगह-जगह अपनी डायरी में इस तरह की कई पंक्तियाँ लिखी हुई थीं। रूमी जब भी उन्हें पढ़ती तो उसके मन में नागा साधुओं के प्रति और श्रद्धा भर जाती।

“मैं सारे अखाड़े देखना चाहती हूँ,” दो दिन बाद रूमी ने फोन पर शेखर से कहा तो वह चौंक गया। वह उस समय ऑफिस में लैपटॉप पर आँख गड़ाए बैठा था और किसी सॉफ्टवेयर से जूझ रहा था।

“अचानक यह खयाल तुम्हारे मन में कैसे आया?”

“खयाल मतलब क्या? अखाड़ों के बारे में भी मेरे रिसर्च पेपर में विस्तृत जानकारी देना जरूरी है। तुम इतने हैरान क्यों हो रहे हो? तुम नहीं चलना चाहो तो मैं अकेली चली जाऊँगी। वैसे मैं रोजलीना के साथ भी जा सकती हूँ,” जैसे रूमी को कुछ याद आया और उसने फोन रख दिया।

“वैरी गुड आइडिया रूमी! मैं तुम्हारे साथ चलना चाहूँगी,” फोन पर रूमी की बात सुन उत्साहित हो रोजलीना ने कहा। “बट वेन?”

“गिव मी सम टाइम। मैं देखती हूँ अरेंजमेंट्स। अखाड़े अलग-अलग जगहों पर स्थित हैं तो कहाँ-कहाँ जाना संभव होगा, यह पता लगाना होगा।”

“कल सब बिजी थे, इसलिए हम मिल नहीं पाए। मैं तैमूर से जुड़ी घटना को जानना चाहती हूँ। शेखर उस दिन कुछ कह रहा था न?”

“आज शाम कनॉट प्लेस में कॉफी हाउस में मिल सकते हैं। मैं कीरत की डायरी भी ले आऊँगी। प्रो. वाचस्पति दो दिन के लिए एक सिमनार में भाग लेने चंडीगढ़ गए हैं।”

“सेंड मी द लोकेशन। मैं पहुँच जाऊँगी शाम को।”

रोजलीना को साड़ी में देख रूमी बोली, “यू लुक ब्यूटीफुल इन साड़ी।”

“आई लव इंडियन ड्रेसेस,” रोजलीना मुसकराई।

तब तक शेखर भी आ गया था। कॉफी पीते हुए रोजलीना ने कहा, “उस दिन तुम तैमूर के बारे में कुछ बता रहे थे शेखर?”

“बहुत कुछ तो नहीं, थोड़ी बहुत जानकारी ही है,” शेखर बोला। उसे यह सोचकर हिचक भी लग रही थी कि पता नहीं वह ठीक से पूरी बात कह भी पाएगा या नहीं।

“प्लीज शेयर,” रोजलीना ने पेस्ट्री का टुकड़ा खाते हुए कहा।

“तैमूर लंग चौदहवीं शताब्दी का एक शासक था, जिसने तैमूरी राजवंश की स्थापना की थी। बात 1398 की है। समरकंद का शासक तैमूर लंग मध्य एशिया से होते हुए ईरान और

इराक तक आक्रमण कर लूटमार कर चुका था। वापस लौटते समय जब वह अफगानिस्तान पहुँचा, तभी काबुल में एक गुप्तचर उससे मिलने आया। वह गुप्तचर दिल्ली से आ रहा था। उसने बादशाह को बताया कि 'दिल्ली की स्थिति ठीक नहीं है। दिल्ली के बादशाह फिरोजशाह तुगलक की 1388 में मौत होने बाद से वहाँ की सल्तनत कमजोर पड़ गई है। फिरोजशाह की मौत के बाद से दस सालों में कई शासक बदल चुके हैं। गद्दी के लिए हत्याएँ हो रही हैं। दिल्ली के तुगलक वंश की आंतरिक कलह का फायदा उठाते हुए वहाँ हमला किया जा सकता है। कामयाब हुए तो इतना माल मिलेगा, जो अब तक देखा न होगा।'

"तैमूर लंग दिल्ली पहुँचा और केवल पंद्रह दिनों में उसके वजीरों और सैनिकों ने दिल्ली को बड़ी बेरहमी से लूटा, फसल तबाह कर दीं। कहते हैं कि ऐसा हाल किया कि दिल्ली को उभरने में सौ साल लग गए। लेकिन दिल्ली उजड़े या बरबाद हो, तैमूर लंग को इससे मतलब नहीं था, क्योंकि उसे दिल्ली पर शासन तो करना नहीं था। वह तो दिल्ली केवल उसे लूटने के मकसद से आया था, जिसके पूरा होते ही वह तुरंत समरकंद के लिए निकल गया।

"लेकिन लौटते समय वह जब मेरठ, बिजनौर से गंगा के किनारे-किनारे लूटपाट करता हुआ हरिद्वार पहुँचा तो वहाँ भी उसने विध्वंस करना शुरू कर दिया। सन् 1393 ईस्वी के बाद पड़े सन् 1398 के हरिद्वार कुंभ मेले के अवसर पर तैमूर लंग हरिद्वार आया था, उसने यात्रियों को लूटा। हजारों को मौत के घाट उतारा। उसने मंदिरों और मूर्तियों को खंडित किया। हर की पौड़ी के समीप डाटवाली हवेली में एक विशाल विष्णु मंदिर था। तैमूर लंग ने उसको भी तोड़ा। कई मंदिर तोड़ डाले। उस दौरान तैमूर लंग की हरिद्वार के पास हुई ज्वालापुर की लड़ाई में नागा साधुओं से मुठभेड़ हुई, जिसमें उन्होंने उसके साथ ऐसा युद्ध किया कि वह भागने पर मजबूर हो गया। तैमूर के हमले के समय जब ज्यादातर राजा डरकर छुप गए थे, राजा जगदेव परमार के वंशज व परमार खाप के मुखिया दादा मानसिंह परमार के वीर पुत्र महाबली जोगराज सिंह, गुर्जर हरवीर जाट, महिला सेना की कप्तान राम प्यारी, धूलाधाडी, आदि के साथ-साथ नागा योद्धाओं ने तैमूर लंग को भारत से भागने पर मजबूर किया था।

"कहते हैं जब वह मायादेवी मंदिर के निकट स्थित भैरव मंदिर पहुँचा और भैरवजी की प्रतिमा पर प्रहार किया तो वहाँ अचानक साँप-बिच्छुओं के झुंड निकल आए। तैमूर लंग की सेना इतने सारे साँप और बिच्छुओं को एक साथ देकर भयभीत हो गई और सेना में भगदड़ मच गई। स्वयं तैमूर भी अचानक साँप-बिच्छुओं की सेना को देखकर भयग्रस्त हो गया था।"

"यह सब सुनकर मेरा मन बहुत दुःखी हो जाता है," रोजलीना बोली, "तुम लोगों को तो कितना गुस्सा आता होगा? भारत तुम्हारा देश है तो ये सब बातें चुभती ही होंगी।"

"इतिहास को तो हम नहीं बदल सकते, लेकिन वर्तमान व भविष्य को बचाने की कोशिश तो कर ही सकते हैं," रूमी ने शेखर की ओर देखते हुए कहा।

"सही कह रही हो। चलें क्या?"

शेखर के पूछने पर वे दोनों उठ खड़ी हुईं।

"रोजलीना, तुम चाहो तो आज रात मेरे घर रुक सकती हो। हम बहुत सारी बातों पर चर्चा

कर सकते हैं और अखाड़े देखने जाने की योजना पर विचार भी कर सकते हैं।”

“श्योर,” रूमी का प्रस्ताव सुन रोजलीना के चेहरे पर चमक आ गई थी। “मुझे भी कीरत की डायरी और तुम्हारे नोट्स पढ़ने का अवसर मिल जाएगा।”

“तो फिर ठीक है, मैं तुम दोनों को घर छोड़ देता हूँ। आज कार लाया हूँ। इतने दिनों से तो वह भाई के कब्जे में थी।”

“उससे पहले होटल जाना होगा। मुझे कपड़े भी तो चाहिए।”

रोजलीना प्रो. वाचस्पति के घर रूमी के माँ-पापा से मिल चुकी थी। उनके साथ बात और डिनर करने के बाद दोनों रूमी के कमरे में जाकर बैठ गई। रोजलीना के लिए गेस्ट रूम में सोने का इंतजाम कर दिया गया था। उसे नारंगी रंग की ढीली नाइटी पहन देख रूमी ने मजाक किया, “क्या तुम भी नागा साध्वी बनना चाहती हो? उन्हीं तरह का गेरुआ रंग का वस्त्र धारण किए हैं तुमने बालिका!”

“नो, नो। लाइक यू आई ऑलसो हैव ए ब्यॉय फ्रेंड। सो नो चांस ऑफ बिकमिंग साध्वी।”

इस मजाक पर दोनों ही काफी देर तक हँसती रहीं।

“इस बात से याद आया। रूमी तुम, नागा साध्वियों के बारे में उस दिन कुछ बताना चाह रही थीं। क्या कीरत ने भी कुछ लिखा है उनके बारे में? या तुम्हारी उनसे कभी भेंट हुई है?”

“कीरत ने लिखा तो है, लेकिन बहुत कम। मैं नागा साध्वियों से कभी मिली तो नहीं, लेकिन यूट्यूब पर उनके वीडियो जरूर देखे हैं और उसी के आधार पर कुछ लिखा है। लेकिन कुंभ के मेले में जाने पर अवश्य उनसे भेंट करूँगी।”

“नागा साधु की तरह तो उनको कड़े नियमों का पालन नहीं करना होता होगा या साध्वी बनने के लिए उतनी जटिल व कड़ी प्रक्रिया नहीं होगी, जितनी नागा साधु बनने के लिए सहनी होती है?”

“ऐसा बिल्कुल नहीं है रोजलीना। किसी महिला को नागा साध्वी बनने के लिए पुरुष के समान ही कठोर प्रक्रियाओं का पालन करना पड़ता है। हर वह प्रक्रिया जो पुरुष अपनाते हैं, महिलाओं को भी अपनानी पड़ती है। फर्क सिर्फ इतना है कि महिला नागा अपने शरीर पर नारंगी या लाल रंग का कपड़ा पहन सकती हैं। वे माथे पर टीका लगाती हैं। उन्हें सालों तक कठिन तपस्या करनी पड़ती है, जीते जी अपना पिंडदान करना पड़ता है, सिर मुँड़वाना पड़ता है और तब कहीं जाकर महिला नागा साधु बनती हैं। नागा साध्वियाँ उठने और सोने से पहले भगवान् का नाम जपती हैं। कुंभ मेले के दौरान नागा साध्वियाँ भी कपड़े पहनकर पवित्र जल में डुबकी लगाती हैं।

“ये महिला नागा साधु दुनिया से दूर जंगलों, गुफाओं और पहाड़ों पर रहती हैं और भगवान् की भक्ति में लीन रहती हैं। पूरी कड़ी परीक्षा प्रक्रिया पूरी करने पर महिला नागा को ‘माँ’ का पद मिलता है। इसके अलावा इनके कई नाम हैं, जैसे—नागिन, अवधुतानी आदि। माई बाड़ा में महिला नागा साधु होती हैं, जिसे अब विस्तृत रूप देने के बाद दशनाम संन्यासिनी अखाड़ा का नाम दिया गया है। उन्हें किसी खास इलाके के प्रमुख के तौर पर ‘श्रीमहंत’ का पद भी दिया जाता है। श्रीमहंत के पद पर चुनी जाने वाली महिलाएँ शाही स्नान के दौरान पालकी में चलती हैं। साथ ही उन्हें अखाड़े का ध्वज, डंका और दाना

अपने धार्मिक ध्वज के नीचे लगाने की छूट होती है।”

“अमेजिंग,” रोजलीना की आँखें आश्चर्य से फैल गई थीं। “क्या ये साध्वियाँ भी जटाएँ रखती हैं, शरीर पर भस्म लपेटती हैं? वे तो कपड़े पहनकर रहती हैं तो भस्म नहीं लगाती होंगी न?”

“महिला नागा जटाएँ नहीं रखती हैं, बल्कि इन्हें अपने हाथों से अपने बाल तोड़ने होते हैं। ये माथे पर तिलक लगाती हैं और शरीर पर भस्म लपेटती हैं, बस गेरुए रंग का एक वस्त्र धारण करती हैं। उनका यह वस्त्र बिना सिला हुआ होता है। इस वस्त्र को ‘गंती’ कहा जाता है। वे भी कुंभ-महाकुंभ जैसे खास मौकों पर ही दुनिया के सामने आती हैं। पवित्र नदियों में स्नान के बाद वे जल्दी ही गायब हो जाती हैं। यही वजह है कि बहुत कम लोग ही महिला नागा साधुओं के दर्शन कर पाते हैं। यहाँ तक कि इंटरनेट पर महिला नागा साधु के फोटो भी बहुत कम हैं।

“नागा संन्यासिन बनने से पहले महिला के घर, परिवार और उनके पिछले जन्म की कुंडली भी खँगाली जाती है। संन्यासिन बनने से पहले महिला साधु को साबित करना पड़ता है कि उसका अपने परिवार और समाज से अब कोई रिश्ता-नाता नहीं रह गया है। इसके बाद ही आचार्य महिला को दीक्षा देते हैं। इसके बाद वह अपने सांसारिक वस्त्र उतारकर पीला वस्त्र धारण कर लेती हैं। महिला साधु भी अपने केश उतारकर खुद ही अपना पिंडदान करती हैं। इसके बाद नदी स्नान और तब शुद्ध होकर महिला नागा संन्यासिनों की साधना शुरू होती है। महिला नागा साधु पूरा दिन भगवान् का जाप करती हैं और सुबह ब्रह्म मुहूर्त में उठकर शिवजी का जाप करती हैं। शाम को दत्तात्रेय भगवान् की पूजा करती हैं। दोपहर में भोजन के बाद वह शिवजी का जाप करती हैं।”

“तो क्या जो नागा साधु या साध्वी बनने की इच्छा दिखाते हैं, उनसे बहुत कुछ पूछा जाता है? आई मीन क्या प्रॉपर इंटरव्यू होता है?” रोजलीना का सवाल सुनकर रूमी को हँसी आ गई।

“ऐसा ही समझ लो। उनसे कई तरह के सवाल किए जाते हैं। कुछ मैं बताती हूँ। मैंने एक पुस्तक में इनके बारे में पढ़ा था। रुको शायद मेरे पास इनकी रिकॉर्डिंग भी है।” रूमी अपना फोन देखने लगी। उसने एक ऑडियो चलाया।

कौन तुम्हारे बहिन भांजी, कौन तुम्हारी माता
कौन तुम्हारे संग चलेगी, कौन करेगी बाता?
धूनी हमारी बहिन भानजी
धरती हमारी माता
विभूति हमारे संग चलेगी
रैन करेगी बाता।
कौन तुम्हारी झोंपड़ी क्या तुम्हारे गाँव
किसके तुम बालक/बालिका क्या है तुम्हारा नाम?
आकाश हमारी झोंपड़ी
पाताल हमारा गाँव

अलख पुरुष के हम बालक/बालिका
सत्य हमारा नाम।
आसन खोलूँ कड़ासन बाँधूँ सुंदर काया
तुझे बाँधूँ तेरे गुरु को बाँधूँ ये योग कहाँ से पाया?
आसन खोलूँ कड़ासन खोलूँ
खोलूँ सुंदर काया
खुद को खोलूँ
अपने गुरु को खोलूँ
योग अगम से पाया।
कौन दीनों दंड कमंडल कौन दीनों झोल
कौन दीनों भगवा वस्त्र कौन पुरुष/स्त्री ब्रहाचारी?
ब्रह्मा दीनों दंड कमंडल
विष्णु दीनों झोली
महादेव दीनों भगवा वस्त्र
अलख पुरुष/स्त्री ब्रहाचारी।
तुम भी नागे हम भी नागे करे कुंभ के मेले
बिना छाल का पेड़ बताओ तुम गुरु हम चेले?
हम भी नागे तुम भी नागे
करे कुंभ के मेले
बिना छाल के पेड़ केशों को जानो
तुम हमारे चेले।

रोजलीना को कितना समझ आया है, यह तो रूमी नहीं जान सकी, पर उसके चेहरे पर फैली हैरानी देख लग रहा था कि वह हतप्रभ है। "क्या महिला अखाड़ा भी हैं?"

रोजलीना की बात सुन रूमी ने कीरत की डायरी खोली और पढ़ने लगी, "'2013 में अखाड़ों और शंकराचार्यों के भारी विरोध के बावजूद देश का चौदहवाँ और पहला महिला अखाड़ा गठित किया गया। महिला शंकराचार्य त्रिकाल भवंता ने 'श्रीसर्वेश्वर महादेव बैकुंठ धाम मुक्ति द्वार अखाड़ा' नामक महिला अखाड़ा स्थापित किया था। अखाड़े के घोषणा-पत्र के मुताबिक आदिशक्ति वेदमाता गायत्री को अखाड़े की देवी और भगवान् दत्तात्रेय को अखाड़े का आचार्य घोषित किया गया। तब नागा महिला अखाड़े की नेता दिव्या गिरि थीं, जिन्होंने साधु बनने से पहले इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक हेल्थ एंड हाइजीन, नई दिल्ली से मेडिकल टेक्नीशियन की पढ़ाई पूरी की थी। वर्ष 2004 में वह विधिवत् तौर पर महिला नागा साधु बन गईं। तब उन्होंने कहा था कि हम कुछ चीजें अलग से करना चाहती हैं।

"'जूना अखाड़े के इष्टदेव भगवान् दत्तात्रेय हैं, हम अपना इष्टदेव दत्तात्रेय की माँ अनसूया को बनाना चाहती हैं। ऋषि अत्रि और भगवान् दत्तात्रेय की माता का नाम अनसूया है। वह अपने पतिव्रता धर्म के लिए पूरी दुनिया में प्रसिद्ध थीं। जबकि ब्रह्मा, महेश और विष्णु की पत्नियों को लगता था कि वे सबसे ज्यादा पतिव्रता हैं, लेकिन जब महर्षि नारद ने तीनों को

बताया कि धरती पर अनसूया उनसे ज्यादा पतिव्रता हैं तो तीनों को यह बात बहुत चुभ गई। तीनों ने अपने पतियों से कहा कि अनसूया की परीक्षा लेनी चाहिए। आखिरकार ब्रह्मा, विष्णु और महेश को उनकी परीक्षा लेने जाना ही पड़ा। ये परीक्षा ऐसी हुई कि माता अनसूया का दर्जा देवी के तौर पर बहुत ऊपर हो गया। तीनों ने ऋषि-मुनि का वेश रखा, जा पहुँचे अनसूया के पास। जब माता अनसूया भोजन परोसने लगीं तो तीनों देवों ने कहा कि हम साधु हैं, हम जो कहेंगे मानना होगा। ऋषि-मुनियों ने कहा कि तुझे, 'भोजन निर्वस्त्र होकर कराना होगा।' उनकी बात सुनकर वह बोलीं कि अगर मैंने पतिव्रता का धर्म निभाया है तो इन तीनों देवों को बालक बना दो। वे तीनों ही छह महीने के बच्चे बन गए। अनसूया ने तीनों को दूध पिलाया और साथ ही पतिव्रता धर्म भी निभाया। इसी वजह से ज्यादातर नागा महिला साधुओं के लिए शिव और दत्तात्रेय के बाद माता अनसूया केवल आराध्य ही नहीं हैं, बल्कि वे उनको देवी रूप में पूजती हैं।'"

"'जब मैंने यह जानने के लिए कि महिला अखाड़ा की जरूरत क्यों महसूस हुई महिला अखाड़े की प्रमुख त्रिकाल भवंता से यह सवाल किया तो उन्होंने बताया, 'इस अखाड़े को बनाने की आवश्यकता कई कारणों से पड़ी। अब तक बने 13 अखाड़े भले ही महिलाओं को सम्मान और स्थान देते रहे हैं, लेकिन इनमें भी समाज की अन्य संस्थाओं की तरह महिलाओं का शोषण होता है, उन्हें वह स्थान नहीं मिल पाता, जो उन्हें मिलना चाहिए। आदि शंकराचार्य ने तो चार अखाड़ों का ही गठन किया था, लेकिन आपसी मतभेद और विचारों में भिन्नता के कारण आज देश में 13 अखाड़े बन चुके हैं। उनका कहना था कि जब 4 से 13 अखाड़े बन सकते हैं तो चौदहवाँ बनाने में क्या दिक्कत है।'"

"मैं जितना इन नागा साधु और साध्वियों के बारे में जान रही हूँ, मुझे लग रहा जैसे मैं किसी रहस्यमयी दुनिया में प्रवेश कर रही हूँ। अब समझ में आया कि क्यों विदेशी भी नागा साधु-साध्वी परंपरा की ओर आकर्षित हो रहे हैं। महिला नागाओं में यूरोपीय महिलाओं की बड़ी संख्या है," रोजलीना उबासी लेते हुए बोली।

"हमें सो जाना चाहिए।"

"गुड नाइट," कहकर रोजलीना गेस्ट रूम में चली गई।

o

17

महंत से भेंट

अगले दिन सुबह रूमी के साथ हरिद्वार के लिए निकलने से पहले रोजलीना ने अपने होटल जाकर एक बैग में जरूरी सामान रखा, कैमरा, ट्राईपोड और लैपटॉप लिया।

"हम रात तक तो लौट आएँगे न?" रोजलीना ने पूछा।

रूमी ने मुसकराते हुए सिर हिलाया और आश्वस्त करने के लिए उसके हाथ पर हाथ रख दिया। कल जब से हरिद्वार जाने का प्रोग्राम बना था, वह यह सवाल दो-तीन बार पूछ चुकी थी।

"टेंशन मत लो। कल तुम अपने बाकी काम कर सकती हो।"

"इट इज सो सडन यू नो। अदरवाइज मेरा इंडिया रुकने का प्लान अभी एक हफ्ते और तक था। बट मॉम वांट्स मी टू कम बैक इमिडिएटली। आई एम वरिड फॉर हर। मस्ट बी सम रीजन, अदरवाइज शी वुड हैव नेवर कॉल्ड मी," रोजलीना की आवाज में घबराहट थी।

"रोजलीना सब ठीक ही होगा। बी पॉिजटिव।" रूमी भी रोजलीना के वापस जाने की बात से उदास थी।

तभी फोन बजा। शेखर था। "क्या हुआ? अचानक हरिद्वार जाने का प्रोग्राम कैसे बन गया? माना मैंने कहा था कि अखाड़े देखने क्यों जाना, पर क्या तुमको लगता है कि मैं तुम्हें अकेले जाने देता? शनिवार-इतवार ही मेरे लिए जाना मुमकिन था। दो दिन और नहीं रुक सकतीं क्या?"

"ओह हो, नाराज मत हो। असल में रोजलीना को परसों ही कैलीफोर्निया के लिए निकलना है। इसलिए उसने कहा कि क्या वह कम-से-कम एक अखाड़ा तो देख सकती है। इसीलिए हम हरिद्वार जा रहे हैं। वहीं प्रमुख जूना अखाड़ा है। आई होप हमारी वहाँ महामंडलेश्वर या किसी महंत से मुलाकात हो जाए। मैंने प्रो. वाचस्पति को भी मैसेज कर दिया है।"

"ओके टेक केयर।" कहकर शेखर ने फोन काट दिया।

कैब में ही रूमी कीरत की डायरी निकालकर पढ़ने लगी। रोजलीना बड़े ध्यान से उसे सुन रही थी। 'जब मैं अखाड़ों में गया तो मुझे बहुत ही रोचक बातें पता चलीं। तब मैं नहीं जानता था कि नागा साधुओं की वेशभूषा, क्रियाकलाप, साधना-विधि आदि सब उनके अखाड़े के अनुसार होती हैं, जिनसे वे जुड़े होते हैं। प्रमुख तौर पर 13 अखाड़ों को मान्यता प्राप्त है, जिसमें 7 शैव, 3 वैष्णव और 3 उदासीन अखाड़े हैं। हालाँकि फिर किन्नर अखाड़े का भी गठन किया गया। ये अखाड़े देखने में एक जैसे लगते हैं, लेकिन इनकी परंपराएँ-पद्धति सब भिन्न-भिन्न हैं।'

“किन्नर मींस वॉट?” रोजलीना ने पूछा।
“थर्ड जेंडर,” रूमी बोली और आगे पढ़ने लगी, ‘इन अखाड़ों के नाम हैं— श्री जूना अखाड़ा, श्री अटल अखाड़ा, श्री आह्वान अखाड़ा, श्री निरंजनी अखाड़ा, श्री पंचाग्नि अखाड़ा, श्री नागपंथी गोरखनाथ अखाड़ा, श्री वैष्णव अखाड़ा, श्री महानिर्वाणी अखाड़ा, श्री निर्मोही अखाड़ा, श्री पंचायती बड़ा उदासीन अखाड़ा, श्री पंचायती नया उदासीन अखाड़ा, श्री निर्मल अखाड़ा और श्री पंच दिगंबर अणि अखाड़ा।

‘जूना का अर्थ होता है, पुराना। इसे सबसे पुराना अखाड़ा माना जाता है। वर्तमान में सबसे ज्यादा महामंडलेश्वर इसी अखाड़े के हैं, जिनमें विदेशी और महिला महामंडलेश्वर भी शामिल हैं। इसे भैरव अखाड़ा भी कहते हैं। रुद्रावतार दत्तात्रेय इनके इष्टदेव हैं। मैं हरिद्वार के माया मंदिर के पास इनके आश्रम में जब गया तो जूना अखाड़े की स्थापना सन् 1145 में उत्तराखंड राज्य के कर्णप्रयाग में हुई थी। इस अखाड़े को भैरव अखाड़ा भी कहते हैं। इसका केंद्र वाराणसी के हनुमान घाट पर माना जाता है। इस अखाड़े में करीब पाँच लाख से अधिक नागा साधु और महामंडलेश्वर संन्यासीगण हैं। इस अखाड़े में अलग-अलग क्षेत्र के अनुसार महंतगण होते हैं, जो अपने-अपने क्षेत्र के अनुसार कार्य देखते हैं।’

हरिद्वार पहुँचकर पहले दोनों ने एक ढाबे के आगे कैब रुकवाई और गरम-गरम तंदूर की रोटी और दाल खाई। रोजलीना बेहद स्वाद लेकर खा रही थी। उसे मिर्च और गाजर का अचार बहुत अच्छा लगा। हालाँकि मिर्ची खाने से उसकी आँखों में आँसू आ गए थे, लेकिन वह बहुत मजे से खा रही थी।

जब वे जूना अखाड़ा के आश्रम में पहुँचे तो दोपहर हो चुकी थी। बहुत अनुरोध करने पर उन्हें जूना अखाड़ा के महंत शिव गिरि से मिलने का अवसर मिला। उनके सामने नीचे जमीन पर ही रूमी और रोजलीना बैठ गए।

“आप चाहें तो कुरसी पर बैठ सकती हैं।” रूमी ने सिर हिलाकर मना कर दिया और वे दोनों फर्श पर बिछी दरी पर ही बैठ गईं।

“आपने बताया कि नागा साधुओं पर आप शोध कर रही हैं? ठीक है, किंतु क्यों?” महंत शिव गिरि के स्वर में रुक्षता थी। “हमारे बारे में सभ्य समाज की राय कोई बहुत अच्छी नहीं है तो फिर हमारे बारे में जानने की इतनी इच्छा क्यों? आजकल यह चलन-सा बनता जा रहा है। बहुत सारे लेखक और पत्रकार चले आते हैं हमसे मिलने।”

“आप लोगों के बारे में समाज में बनी राय को बदलने की एक कोशिश ही होगा मेरा रिसर्च पेपर,” रूमी ने बहुत शालीनता से कहा। “रोजलीना भी अपने देश एक सकारात्मक संदेश लेकर जाना चाहती है।”

कुछ देर मौन रहने के बाद उन्होंने कहा, “पूछो जो जानना चाहती हो?” इस बार उनका स्वर सपाट था। निर्विकार, तटस्थ जैसे वे होते हैं।

“जूना अखाड़ा की कोई प्रणाली होती है? आई मीन अखाड़ों की?” रोजलीना ने अपना रिकॉर्डर ऑन कर दिया था।

“अखाड़ा एक खास प्रणाली से जुड़ा होता है। भारत की आजादी के बाद इन अखाड़ों ने अपना सैन्य चरित्र त्याग दिया। इन अखाड़ों के प्रमुख ने जोर दिया कि उनके अनुयायी

भारतीय संस्कृति और दर्शन के सनातनी मूल्यों का अध्ययन और अनुपालन करते हुए संयमित जीवन व्यतीत करें। देखा जाए तो अखाड़े साधु-संन्यासियों के लिए एक तरह से बोर्डिंग, लॉजिंग और ट्रेनिंग की जगह होते हैं। यहाँ साधु ठहरते हैं, खाने-पीने का इंतजाम होता है और वे संन्यास की अलग-अलग क्रियाओं का प्रशिक्षण लेते हैं। इन अखाड़ों में गुरु-शिष्य की परंपरा का पूरा ध्यान रखा जाता है। शिष्य साधु या संन्यासी अपने गुरु को भगवान् का दर्जा देते हैं और उनका निर्देश किसी 'हुक्म' से कम नहीं होता।

"13 प्रमुख अखाड़ों में प्रत्येक के शीर्ष पर महंत आसीन होते हैं। समझो यह श्री पंच दशनाम जूना अखाड़ा एक पूरा समाज है, जहाँ साधुओं के 52 परिवारों के सभी मुखियों की एक कमेटी बनाई जाती है। ये सभी अखाड़े के लिए सभापति का चुनाव करते हैं। एक बार चुने गए सभापति का पद जीवन भर के लिए उसी का हो जाता है। यह चुनाव कुंभ मेले के दौरान ही होता है। अखाड़े की चार मढ़ियाँ हैं, जिनमें महंत से लेकर कष्ट कौशल महंत और कोतवाल तक नियुक्त किए जाते हैं। वर्तमान महामंडलेश्वर आचार्य अवधेशानंदजी महाराज का चुनाव सन् 1998 के कुंभ के दौरान किया गया था। वह जीवनपर्यंत इसी पद पर आसीन रहेंगे। एक आध्यात्मिक गुरु होने के साथ-साथ वे हिंदू धर्म के महान् संत और लेखक भी हैं। स्वामीजी ने अखाड़े में करीब 10 लाख से अधिक संन्यासियों को दीक्षा दी है।"

"दस लाख? ओह माई गॉड!" रोजलीना एकदम से बोली। उसकी बात सुन कोई प्रतिक्रिया किए बिना शिव गिरि महंत ने आगे बताना शुरू किया, "इस अखाड़े में रमता पंच के सदस्यों का भी चुनाव किया जाता है। इनका कार्य अपने इष्ट देवता की पूजा-अर्चना और अखाड़े की रक्षा करना होता है। इन्हें चल सदस्य भी कहते हैं। तेरह अखाड़ों में सात संन्यासी अखाड़े ही नागा साधु बनाते हैं यानी कि जूना, महानिर्वाणी, निरंजनी, अटल, अणि, आनंद और तेरह अखाड़ों में सात संन्यासी अखाड़े ही नागा साधु बनाते हैं—ये हैं जूना, महानिर्वाणी, निरंजनी, अटल, अणि, आनंद और आह्वान अखाड़ा।

"जूना अखाड़ा समाज सुधार का भी काफी काम करता है। अखाड़े ने उच्चतम न्यायालय की ओर से थर्ड जेंडर के रूप में किन्नरों को मान्यता दिए जाने के बाद उन्हें समाज की मुख्यधारा में लाने के उद्देश्य से किन्नर अखाड़ा को अपने अखाड़े में न सिर्फ जगह दी, बल्कि उन्हें अपने साथ धर्म ध्वजा लगाने और शाही स्नान करने का भी मौका दिया।

"जूना अखाड़ा के संतों ने जंग के दौरान अपने युद्ध-कौशल से राजस्थान के जूनागढ़ के निजाम को घुटने टेकने पर मजबूर दिया था। संन्यासियों के पराक्रम के आगे मुगल सेना के पैर उखड़ गए। इसके बाद निजाम ने संन्यासियों को संधि के लिए बुलाया और धोखे से भोजन में जहर दे दिया, लेकिन नियमानुसार पुजारी, कोठारी सहित निगरानी में जुटे संन्यासियों ने भोजन नहीं किया। वे बच गए और उन्होंने ही बाद में श्री पंचदशनाम जूना अखाड़े का गठन किया।

"यह तो तुम लोग भी जानती होंगी कि अखाड़े का संन्यासी बनने के लिए 12 वर्षों का संकल्प पूरा करना पड़ता है। संकल्प लेने वाला 12 वर्षों तक ब्रह्मचारी कहलाता है। इस दौरान उसको अखाड़े के नियम और परंपराएँ सिखाई जाती हैं। जब ब्रह्मचारी 12 वर्ष का संकल्प पूरा कर लेता है तब उसे कुंभ के दौरान नागा साधु के रूप में दीक्षा दी जाती है।

नागा संन्यासी खान-पान और विचार दोनों पर संयम रखते हैं। नागा संन्यासी त्रिशूल, तलवार, शंख और रुद्राक्ष आदि धारण कर अपने दर्जे को दरशाते हैं।

"जूना अखाड़े के अधिकांश आश्रम दुर्गम क्षेत्रों में हैं। यहाँ रहना बेहद मुश्किल है, लेकिन अखाड़े के संन्यासी कठोर अनुशासन के बीच इन स्थानों पर रहते हैं। महिला नागा संन्यासियों को अखाड़े में पूरा सम्मान मिलता है।"

"मैं आपसे कुछ सवाल करना चाहती हूँ?" रोजलीना ने कहा।

"मुझे लगता है कि मैंने काफी जानकारी दे दी है।"

"दरअसल मैं एक वीडियो बनाना चाहती हूँ सवाल पूछते हुए अगर आपको कोई प्रॉब्लम न हो तो? आपको लगेगा कि मैं कोई सवाल दुबारा पूछ रही हूँ, लेकिन वीडियो के लिए वे जरूरी होंगे," रोजलीना ने हिचकते हुए पूछा।

"ठीक है।"

रोजलीना वीडियो बनाने के लिए कैमरा सेट करने लगी।

"जूना अखाड़े में कितने महामंडलेश्वर हैं?"

"देश भर में जूना अखाड़े के 800 महामंडलेश्वर हैं। वर्तमान में अखाड़े का सबसे ऊँचा पद आचार्य महामंडलेश्वर स्वामी अवधेशानंद गिरि महाराज के पास है।"

"महामंडलेश्वर का मतलब क्या होता है?"

"महामंडलेश्वर प्राचीन राजाओं की एक उपाधि होती है, जो कि एक महान् राजा को समर्पित होती है। ऐसा राजा जो अजेय हो महामंडलेश्वर कहलाता है। वर्तमान में संतों के द्वारा संतों को दी जाने वाली उपाधि है, जो उन्हें सामान्य संत की अपेक्षा उच्च श्रेणी में स्थापित करती है। ऐसी उपाधि महामंडलेश्वर कहलाती है।"

"अखाड़े कितने प्रकार के होते हैं?"

"अखाड़े 13 प्रकार के हैं। इन 13 अखाड़ों में अलग-अलग परंपरा के साधु जुड़े हैं, जिनमें सात अखाड़े शैव संप्रदाय के हैं। तीन अखाड़े वैरागी संप्रदाय के और तीन अखाड़े उदासीन संप्रदाय के साधुओं के हैं। कुंभ और अर्धकुंभ के आयोजन में इन अखाड़ों की प्रमुख भूमिका रहती है। वर्तमान में शैव, वैरागी और उदासीन संप्रदाय के ही अखाड़े हैं।"

"महामंडलेश्वर कैसे बनाए जाते हैं?"

"महामंडलेश्वर बनने के लिए बहुत-सी योग्यताओं का होना अत्यंत आवश्यक है। सबसे पहले संस्कृत व वेद-पुराणों का ज्ञान होना, संन्यासी होना चाहिए, घर-परिवार न हो, न ही पारिवारिक संबंध हों। आयु का कोई बंधन नहीं है, पर वेद का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। व्यक्ति में वैराग्य होना जरूरी है।"

"नागा साधुओं की पोजीशन, मेरा मतलब उनके पद कौन-कौन से होते हैं?"

"मैं अनुक्रम में यानी ऊपर से नीचे तक के पद बताता हूँ। सबसे बड़ा पद होता है आचार्य महामंडलेश्वर, फिर महामंडलेश्वर, दिगंबरश्री, पीर महंत, थानापति महंत, जमपतिया महंत, श्री महंत और महंत, यानी कि जो मैं हूँ।"

"किन्नर अखाड़ा के बारे में कुछ बताइए।"

"मुझे खुशी है कि तुमने यह सवाल पूछा। यह नवनिर्मित अखाड़ा है, जिसे पहले कुंभ के

शाही स्नान में पेशवाई का अधिकार नहीं था। लेकिन 2019 में पहली बार हरिद्वार के कुंभ में किन्नर अखाड़ा की महामंडलेश्वर श्री लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के आह्वान पर इस अखाड़े का जूना अखाड़ा के साथ शाही स्नान किया गया। संस्कृति और समाज से दूर अस्तित्व के दोराहे पर खड़े किन्नर समुदाय का धर्म के मेले में ही राजतिलक हुआ। वह एक अद्भुत दृश्य था। शंखनाद के साथ किन्नर संन्यासी जैसे ही संगम में उतरे, मानो संस्कृति पर लिखे सदियों पुराने पन्ने पलट गए। गंगा के आँचल में वात्सल्य के इन पलों की साक्षी बनीं चारों दिशाएँ, प्रकृति और ऋचाएँ। युगों-युगों से उपेक्षित इन लोगों को धर्म ने मानो माँ की तरह बाँहें बढ़ाकर अपनी गोद में बिठा लिया।

"किन्नर अखाड़ा के स्नान के बाद जो नई संस्कृति का अध्याय लिखा गया, वह सदियों तक चर्चा में रहेगा। देवी मंदिरों में श्रृंगार से लेकर बधाई गीतों में किन्नर रहे हैं। हालाँकि, सालों पहले इनकी भूमिका तुलसीदासजी ने 'देव दनुज किन्नर नर श्रेणी, सादर मज्जहिं सकल त्रिवेणी' के माध्यम से स्पष्ट कर ही दी थी। फिर भी चर्चा में उलझे इनके अधिकारों पर संस्कृति और अध्यात्म के मेले में मुहर लगी। सुबह छह बजे से अखाड़ों के आने का क्रम शुरू हुआ। नागा साधुओं के साथ संत-संन्यासियों का रेला बारी-बारी से तट पर उतरा और मंत्रोच्चारण के साथ गंगा स्नान किया। इसके बाद जूना अखाड़े के साथ माईबाड़ा फिर अपने निशान और पहचान के साथ किन्नर अखाड़ा संगम की ओर चला। जैसे-जैसे वह आगे बढ़ रहे थे, वहाँ से गुजरने वाले हर भक्त के कदम उन्हें देखने को थम रहे थे। इन ऐतिहासिक क्षणों को आँखों के साथ दिल में कैद करने के लिए सूरज और ठिठुरन के बीच करीब पाँच घंटे के मुकाबले के बाद आस्था जीतती नजर आई। लाल साड़ी पहने किन्नर अखाड़े की महामंडलेश्वर लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी के साथ भवानी और गुरु माता के साथ श्रद्धालुओं का बड़ा हुजूम तट किनारे तक पहुँचा। गंगा में उतरते ही बम-बम भोले...जय-जय शिव...ध्वनि के साथ मुख्यधारा के लिए सालों तक चले संघर्ष ने डुबकी लगाई और इस तरह धर्म की लहरों के बीच एक उपेक्षित समाज का तिलक वंदन हुआ। गंगा भी कुछ ऊपर तैरती लगीं और उनकी चरण रज के जरिए यह पल कुंभ के इतिहास में कैद हुआ।"

रूमी और रोजलीना टकटकी बाँधे महंत शिव गिरि को देख रही थीं। "मेरे ध्यान का समय हो गया है।" वह अपनी कुटिया से बाहर चले गए।

"क्या इस समय और कोई मिल सकता है?" रूमी ने बाहर आकर पूछा।

"आसपास घूमकर देख लें, कोई मिल जाए तो," वहाँ बैठे एक साधु ने कहा।

शाम हो गई थी। उन्होंने आसपास नजरें घुमाईं। माया मंदिर खुला हुआ था। समझ नहीं आ रहा था कि किससे पूछें।

"हमें चलना चाहिए।" रोजलीना बोली।

"मंदिर चलते हैं। हो सकता है वहाँ कोई कुछ और बता सके," रूमी के मन में उम्मीद जागी। "यू नो रोजलीना, ऐसा माना जाता है कि देवी सती, यानी भगवान् शिव की पत्नी पार्वती का हृदय और नाभि उस क्षेत्र में गिरी थी, जहाँ आज मंदिर है और इसलिए इसे कभी-कभी शक्तिपीठ भी कहा जाता है। देवी माया हरिद्वार की अधिष्ठात्री देवी हैं। वह तीन सिरोंवाली और चार भुजाओंवाली देवी हैं, जिन्हें शक्ति का अवतार माना जाता है। मंदिर

एक सिद्धपीठ है, जो पूजा का स्थान है जहाँ मनोकामनाएँ पूरी होती हैं। यह हरिद्वार में स्थित तीन ऐसे पीठों में से एक है, अन्य दो चंडी देवी मंदिर और मनसा देवी मंदिर हैं। हिंदू पौराणिक कथाओं के अनुसार, सती ने अपने पति के प्रति अपने पिता के अपमानजनक व्यवहार का बदला लेने के लिए खुद को आग लगा ली थी। जब भगवान् शिव को पता चला कि सती ने उनका सम्मान बनाए रखने के लिए खुद को मार डाला, तो वे क्रोधित हो गए। क्रोधित शिव ने सती के मृत शरीर को लेकर पूरे ब्रह्मांड का भ्रमण किया। इस भ्रमण के दौरान सती के शरीर के विभिन्न अंग अलग-अलग स्थानों पर गिरे। हिंदुओं का मानना है कि सती की नाभि और हृदय उसी स्थान पर पाए गए थे, जहाँ आज हरिद्वार में माया देवी मंदिर है।"

मंदिर में उस समय भीड़ नहीं थी। एक पुजारी था, जो आने वालों को चरणामृत व प्रसाद दे रहा था। "आप क्या अखाड़ों या नागा साधुओं के बारे में कुछ बता सकते हैं?" रूमी ने पूछा तो वह रुखाई से बोला, "हम क्या जानें! सामने जूना अखाड़ा का आश्रम है, वहाँ जाओ। लेकिन इस समय कोई नहीं मिलेगा।"

वापस लौटते समय रोजलीना को कैब में झपकी आ गई तो रूमी कीरत की डायरी पढ़ने लगी। बहुत ही संक्षिप्त रूप में उसमें बाकी अखाड़ों के बारे में लिखा हुआ था। वह पढ़ने लगी, "अटल अखाड़े को सन् 569 ईस्वी में गोंडवाना क्षेत्र में स्थापित किया गया। भगवान् गणेश इनके इष्टदेव हैं। इसकी मुख्य पीठ पाटन में है। इस अखाड़े में केवल ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों को ही दीक्षा मिलती है, अन्य वर्णों को इस अखाड़े में नहीं लिया जाता है। आह्वान अखाड़े की स्थापना 646 ई. में मानी जाती है, जिसे 1603 में पुनः संयोजित किया गया। इस अखाड़े का केंद्र काशी में है। इसके इष्टदेव श्री दत्तात्रेय और श्री गजानन दोनों हैं। ऋषिकेश में इस अखाड़े का प्रधान आश्रम स्थापित किया गया है। यह अखाड़ा साध्वियों की दीक्षा को निषेध करता है।

"निरंजनी अखाड़े के 50 महामंडलेश्वर हैं। 14 अखाड़ों में निरंजनी अखाड़ा सबसे शिक्षित अखाड़ा माना जाता है। 826 ई. में गुजरात के मांडवी में स्थापित निरंजनी अखाड़े के इष्टदेव भगवान् शंकर के पुत्र कार्तिकेय को माना जाता है। निरंजनी अखाड़े में दिगंबर, साधु, महंत व महामंडलेश्वर पद होते हैं। भारत में इलाहाबाद, उज्जैन, हरिद्वार, त्र्यंबकेश्वर और उदयपुर में इसकी शाखाएँ हैं। पंचाग्नि अखाड़े की स्थापना 1136 में हुई थी। गायत्री इसके इष्टदेव हैं। काशी इनका प्रधान केंद्र है। चारों पीठ के शंकराचार्य इनके सदस्यों में शामिल हैं। इस अखाड़े में सिर्फ ब्राह्मणों को ही दीक्षा दी जाती है। ब्राह्मण के साथ उनका ब्रह्मचारी होना भी आवश्यक है।

"नग्न रहने और युद्ध-कला में माहिर होने तथा हठयोग की परंपरा में पारंगत होने के लिए प्रसिद्ध नाग परंपरा के गोरखनाथ अखाड़े में 12 पंथ शामिल हैं। अहिल्या गोदावरी संगम पर स्थापित गोरखनाथ अखाड़े की स्थापना 866 साल में हुई। इस अखाड़े की प्रसिद्धि योगिनी कौल संप्रदाय नाम से है। वैष्णव अखाड़े की स्थापना 1595 में दारागंज में श्री मध्य मुरारी द्वारा स्थापित की गई। वर्ष 1839 तक इस अखाड़े का शाही स्नान त्र्यंबकेश्वर में हुआ करता था, लेकिन 1848 के बाद से वैष्णव साधुओं की विवाद के चलते इन्होंने त्र्यंबकेश्वर के

नजदीक चक्रतीर्थ पर स्नान किया।”

रोजलीना ने आँखें खोलीं तो रूमी को डायरी पढ़ते देख बोली, “प्लीज मुझे भी पढ़कर सुना दो। यू नो मैं हिंदी ठीक से पढ़ नहीं सकती।”

रूमी मुसकराई और पढ़ने लगी, “महानिर्वाणी अखाड़ा 671 ई. में स्थापित किया गया था। कुछ लोगों का मत है कि इसका जन्म बिहार-झारखंड के बैजनाथ धाम में हुआ था, जबकि कुछ इसका जन्मस्थान हरिद्वार में नील धारा के पास मानते हैं। इसके इष्टदेव कपिल महामुनि हैं। महानिर्वाणी अखाड़ा प्राचीन काल से चली आ रही महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग की पूजा करता है।

“1720 में श्रीरामानंदाचार्य द्वारा स्थापित निर्मोही अखाड़े के साधु बड़े रहस्यमयी होते हैं। इस अखाड़े के मठ और मंदिर उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात और बिहार में हैं। पुराने समय में इसके अनुयायियों को तीरंदाजी और तलवारबाजी की शिक्षा भी दिलाई जाती थी। बड़ा उदासीन अखाड़ा के संस्थापक श्री चंद्राचार्य उदासीन हैं। इस अखाड़े का उद्देश्य सेवा करना है। इस अखाड़े में 4 महंत होते हैं, जो कभी सेवानिवृत्त नहीं होते हैं।

“श्री पंचायती नया उदासीन अखाड़ा श्री पंचायती बड़ा उदासीन अखाड़े के कुछ साधुओं ने विभक्त होकर स्थापित किया। इस अखाड़े में उन्हीं को नागा बनाया जाता है, जो 8 से 12 साल की उम्र के होते हैं यानी जिनकी दाढ़ी-मूँछ न निकली हो। मध्य प्रदेश के बेरार में 855 में स्थापित आनंद अखाड़े का मुख्य केंद्र वाराणसी में माना जाता है। इस अखाड़े का शाही स्नान आह्वान अखाड़े के साथ होता है। आकर्षक ढंग से सजे और भगवान् शंकर का तांडव करने के साथ-साथ इस अखाड़े के साधु धन-बल, जन-बल और समृद्धि का प्रतीक माने जाते हैं।

“श्री पंच दिगंबर अणि अखाड़े में सबसे ज्यादा खालसा हैं। वैष्णव संप्रदाय के अखाड़ों में इसे राजा कहा जाता है।”

रूमी को झपकी आने लगी तो उसने डायरी रोजलीना को दे दी और सीट पर सिर टिकाकर आँखें बंद कर लीं। वह सोच रही थी वास्तव में कितनी रहस्यमयी और गूढ़ दुनिया है इन नागा साधुओं की। कठिन जीवन है, लेकिन वे प्रसन्नता से उसे जीते हैं, क्योंकि उसे उन्होंने बिना किसी बाध्यता के सहर्ष जो स्वीकारा है।

o

18

श्मशान की राख

रोजलीना वापस चली गई थी। इतने दिनों तक उसका साथ था, इसलिए रूमी को बहुत खालीपन लग रहा था। दोस्ती से बढ़कर दोनों में एक आत्मीयता व्याप्त हो गई थी। जाते समय दोनों इस तरह गले मिलकर रोई थीं, मानो बरसों से एक-दूसरे से जानती हों। प्रो. वाचस्पति लौट आए थे, लेकिन रोजलीना से मिल नहीं पाए। रिसर्च पेपर पर काम भी लगभग खत्म ही हो गया था, लेकिन फिर भी रूमी कुछ न कुछ नया पहलू ढूँढ़ने में लगी रहती। अखाड़ों के बारे में प्रो. वाचस्पति ने एक पुस्तक के कुछ अंश दिए थे। उन्हें वह पुस्तक लाइब्रेरी में मिली थी, लेकिन दुःखद बात यह थी कि उसके अखाड़े वाले अध्याय के कुछ पृष्ठ फटे हुए थे।

"लगातार हिदायतें देने के बावजूद छात्र पुस्तकें फाड़ना नहीं छोड़ते हैं। मेहनत करने के बजाय शॉर्टकट अपनाना चाहते हैं बस," उन्होंने गुस्से से कहा था।

जितना भी अंश था, रूमी उसे ही पढ़ने लगी, 'अखाड़ों ने केवल धर्मरक्षक की ही नहीं, बल्कि धर्म-प्रचारक की भूमिका भी बखूबी निभाई। शैव, वैष्णव, उदासी तथा निर्मल सभी संप्रदायों के अखाड़ों ने अपने-अपने संप्रदाय के धर्म और दर्शन के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अठारहवीं शताब्दी के अंत तक देश में ब्रिटिश शासन की जड़ें मजबूती से जमने लगी थीं और उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में उन्होंने भारत पर पूरी तरह से अपना अधिकार कर लिया। अंग्रेजों के कठिन प्रतिरोध के कारण शैव व वैष्णव नागा साधुओं की राजनीतिक तथा आर्थिक भूमिका धीरे-धीरे समाप्त हो गई तथा वे पूरी तरह से धर्म-प्रचार और समाज-सेवा के कार्य में लग गए। दशनामी अखाड़ों में उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मंडलेश्वरों की परंपरा आरंभ होने के उपरांत धर्म-प्रचार के काम में तीव्रता आई। ईसाई मिशनरियों तथा स्वतंत्र भारतीय चिंतकों द्वारा हिंदू धर्म पर किए जा रहे आक्रमणों से सुरक्षा हेतु यह आवश्यक माना गया कि हिंदू धर्म के ऐसे विद्वान् व्याख्याता उत्पन्न किए जाएँ, जो उनके आक्रमणों का उत्तर दे सकें। हिंदू अधिक समय तक तटस्थ रहकर दूसरे संप्रदाय के आक्रमण को मूक दर्शक बनकर नहीं देख सकते थे, ज्ञान व दर्शन द्वारा हिंदू धर्म की उचित रूप से रक्षा करना आवश्यक था। अस्त्रधारी तथा शस्त्रधारी संन्यासियों के लिए आवश्यक हो गया था कि वे अपने मठों में रहते हुए एवं पर्यटन करते हुए इस नवीन कार्य की सफलता हेतु अध्यापकों और प्रचारकों की भूमिका निभाए।

'इसलिए, यह निश्चय किया गया कि इस संप्रदाय के प्रकांडतम विद्वानों की देख-रेख में संस्कृत विद्या और धार्मिक शिक्षा के केंद्र स्थापित किए जाएँ तथा जनता के बीच में धर्म-प्रचार के लिए योग्य संन्यासियों के दल तैयार किए जाएँ। अन्य संप्रदायों के विवाद पर

जवाब देने का यह सही ढंग था। स्वामी सदानंद गिरि मंडलेश्वरों के उदय के विषय में एक अन्य विवरण प्रस्तुत करते हैं जिसके अनुसार—मंडलेश्वरों की उत्पत्ति उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में कैलाश आश्रम ऋषिकेश के सम्मानित स्वामी धनराज गिरि के सुझाव के अनुसार आचार्य गुरुओं के रूप में हुई, जिनका कार्य संन्यास की दीक्षा हेतु मार्ग तथा साधन की व्याख्या करना था। फिलहाल, यह विवाद का विषय है कि मंडलेश्वरों की उत्पत्ति का मूल कारण क्या था, किंतु इसमें संदेह नहीं कि ये मंडलेश्वर, जो कि आधुनिक समय में महामंडलेश्वर कहे जाते हैं, बड़े विद्वान् होते आए हैं एवं दशनामी संप्रदाय के योग्यतम संन्यासियों में से चुने जाते रहे हैं।'

इतना अंश भी उसके लिए महत्त्वपूर्ण था।

शाम को वह टीवी देख रही थी कि अचानक सीरियल में नागा साधु की भूमिका निभाता किरदार नजर आया, जिसका शृंगार देख वह स्तब्ध रह गई। उसने सुना तो था कि नागा साधुओं को भी सजना-सँवरना अच्छा लगता है। फर्क सिर्फ इतना है कि नागाओं की शृंगार सामग्री महिलाओं के सौंदर्य प्रसाधनों से बिल्कुल अलग होती है। उन्हें भी अपने लुक और अपनी स्टाइल की उतनी ही फिक्र होती है, जितनी आम आदमी को। अपने शृंगार से महिलाओं को भी ये मात देते हैं।

रूमी लैपटॉप खोलकर गूगल सर्च करने लगी। एक जगह किसी नागा साधु प्रेमानंद गिरि ने जो कहा था, वह वर्णित था कि 'नागाओं के भी अपने विशेष शृंगार साधन हैं। ये आम दुनिया से अलग हैं, लेकिन नागाओं को शृंगार करना बेहद प्रिय है।'

"क्या सर्च कर रही है?" मनोहर दवे ने उसके कमरे में आते हुए पूछा।

"पापा, अभी टीवी में देखा कि नागा साधु बहुत तरह से स्वयं को सजाते हैं। ऐसा वे केवल कुंभ के मेले के दौरान ही करते हैं, हालाँकि सारे साधु ऐसा नहीं करते। वही सर्च कर रही हूँ।"

"बहुत दिलचस्प बात बताई। चल आज मुझे भी बता इस बारे में।"

"सच पापा, आप सुनेंगे?"

"पापा ही क्यों इसके बारे में तो मैं भी जानना चाहती हूँ," माँ कॉफी के प्याले उन दोनों को पकड़ाती हुई बोलीं और रूमी के पास ही कुरसी खींचकर बैठ गईं।

रूमी पढ़ने लगी, "हर नागा साधु का अपना खास अंदाज और टीका होता है। कई लोग आचरण से उग्र भी होते हैं, लेकिन 17 प्रकार के शृंगार किसी भी नागा साधु का अभिन्न अंग होते हैं। यह एक ऐसी चीज है, जिसका शाही स्नान के लिए जाने से पहले धार्मिक रूप से पालन किया जाता है। नागा पहले खुद को सजाते हैं, फिर वे अपने संबंधित देवताओं और गुरुओं से प्रार्थना करते हैं और फिर वे शाही स्नान के लिए जाते हैं। 17 शृंगारों में से एक लँगोट, राख, चंदन, लोहे या चाँदी की चूड़ियाँ जिन्हें कड़ा भी कहा जाता है, फूलों की माला और रुद्राक्ष की माला जिसे एक शुभ इकाई माना जाता है, पहनते हैं। वे अन्य आभूषणों के रूप में एक डमरू, चिमटा और एक बरतन या कमंडल भी रखते हैं।

"नागाओं का दावा है, लोग शुद्धीकरण के लिए पवित्र गंगा में डुबकी लगाते हैं, लेकिन उनके लिए डुबकी लगाने से पहले यह शुद्धीकरण है। विद्वानों का दावा है, नागा दिल के शुद्ध

होते हैं और स्वभाव से काफी सरल होते हैं। वे अपने अखाड़े में खेलते रहते हैं और यह उनकी माँद की तरह है, जहाँ वे पर्यावरण को जीवंत बनाते हैं।

"खुद को सजाने और शाही स्नान के लिए जाने से पहले नागा पूरी रात जागते हैं और भगवान् शिव से प्रार्थना करते हैं। वे संबंधित अखाड़े के देवता से भी प्रार्थना करते हैं। उनके अनुसार शृंगार के प्रत्येक तत्त्व की शारीरिक, ज्योतिषीय और यौगिक व्याख्या होती है।

"तिलक विशिष्ट अखाड़े के आधिकारिक देवता का प्रतिनिधित्व करता है। यदि आह्वान अखाड़े के लिए यह गणेश का प्रतीक है, तो जूना के लिए यह महाराज दत्तात्रेय का है। टीका और उसकी स्थिति भी प्रतीकात्मक है। ऐसा दावा किया जाता है कि इसका माथे के मध्य में, भौंहों के बीच में होना प्रासंगिक है, क्योंकि यह शरीर के आज्ञा चक्र का बिंदु है। ऐसा माना जाता है कि तिलक लगाने से एकाग्रता बढ़ती है। टीका, डमरू, त्रिशूल, तिलक, जड़ बाल, ये सभी यह दरशाने वाले प्रतीक हैं कि कोई व्यक्ति शिव का अनुयायी है।

"शृंगार परंपरा की शुरुआत उस समय से हुई, जब यह संप्रदाय एक लड़ाकू शक्ति था। नागा योद्धा थे, जिनका पालन-पोषण सनातन धर्म की रक्षा के लिए किया गया था। हर सेना की तरह उनके पास तैयार होने और अपनी ताकत प्रदर्शित करने की अपनी अनूठी शैली है। 'दंडेश्वर विधानम्' आदि शंकराचार्य द्वारा तैयार किए गए नियम हैं, जो नागा संन्यासी द्वारा किए जाने वाले शृंगार को निर्धारित करता है।

"दिलचस्प बात यह है कि नागा साधुओं की शृंगार सूची में सत्रहवीं वस्तु है भस्म, जिसके बारे में उनका दावा है कि यह उन्हें बाकी दुनिया से अलग करती है। इससे उन्हें एक अनोखी पहचान मिलती है। उनका मानना है कि भस्म या भभूत सर्वोच्च देवता के साथ उनका एकीकरण स्थापित करती है। शृंगार करना उनके लिए एक अनुष्ठान है जो न केवल गर्व और शक्ति का प्रदर्शन करता है, बल्कि सदियों से चली आ रही परंपरा को भी जीवित रखता है।

"श्मशान से ये राख लेकर आते हैं या स्वयं तैयार करते हैं। लेकिन यह भभूत बहुत लंबी प्रक्रिया के बाद तैयार होती है। हवन कुंड में पीपल, पाकड़, रसाला, बेलपत्र, केला तथा गऊ के गोबर को भस्म करते हैं। इस भस्म की हुई सामग्री की राख को कपड़े से छानकर कच्चे दूध में इसका लड्डू बनाया जाता है। इसे सात बार अग्नि में तपाया जाता है और फिर कच्चे दूध से बुझाया जाता है। यही भस्म नागा साधुओं का वस्त्र होती है। यह भभूत उन्हें बहुत सारी आपदाओं से भी बचाती है।"

"वास्तव में आम आदमी के लिए यह समझना कठिन है कि कैसे कुछ सबसे सरल लोगों में भी जटिलता छिपी होती है। मुझे तो लगता है नागा साधुओं में सरल और जटिल दोनों रंग होते हैं। उनके आसपास कई रहस्य बने हुए हैं और हम चाहे उन्हें कितना ही जानने की कोशिश करें, वे रहस्य हमेशा बने रहेंगे," पापा बोले।

"थोड़ा विस्तार से उनकी शृंगार सामग्री के बारे में बता, बेटा," माँ की जिज्ञासा देख रूमी और पापा दोनों ही हँसने लगे।

"तेरी माँ भी इसमें दिलचस्पी ले रही है। अब कम-से-कम डाँट तो नहीं पड़ेगी कि क्या काम कर रही है, जल्दी शादी कर ले।"

“आपको मेरा मजाक उड़ाने के सिवाय और कुछ आता है? ठीक है, मैं बाहर चली जाती हूँ।”

“माँ, बैठो न। मैं बताती हूँ आपको विस्तार से।”

रूमी ने फिर सर्च करना शुरू किया और बोली, “भस्म नागा साधुओं को सबसे ज्यादा प्रिय होती है। भगवान् शिव के औघड़ रूप में भस्म लगाने से सभी परिचित हैं। ऐसे ही शैव संप्रदाय के साधु भी अपने आराध्य की प्रिय भस्म को अपने शरीर पर लगाते हैं। रोजाना सुबह स्नान के बाद नागा साधु सबसे पहले अपने शरीर पर भस्म रमाते हैं, जो ताजी होती है।”

“भस्म ही तो उनके शरीर पर कपड़ों का काम करती है। लेकिन उन्हें इस रूप में देख मजाक उड़ाने वाले यह नहीं सोचते कि वे कैसे सर्दी-गरमी, बरसात या किसी भी स्थिति को अपने शरीर पर सहन करते होंगे। आखिर अपने तप और यौगिक क्रियाओं के बल पर ही तो वे ऐसा कर पाते हैं। तो वे साधारण मनुष्य या साधु तो नहीं हुए न?” माँ ने जितनी गूढ़ बात कही थीं, उसे सुन रूमी बोली, “सही कह रही हो माँ आप, लेकिन आम जन का नजरिया बदलना आसान नहीं है। फिर भी मैं कोशिश करती रहूँगी। इन नागा साधुओं के योगदान के बारे में हर किसी को जानना चाहिए।”

“इनके शृंगार की अन्य वस्तुएँ क्या हैं?” पापा ने पूछा।

रूमी बोली, “कई नागा साधु नियमित रूप से फूलों की मालाएँ धारण करते हैं। गेंदे के फूल वे सबसे ज्यादा पसंद करते हैं। वजह है गेंदे के फूलों का अधिक समय तक ताजे बना रहना। नागा साधु गले में, हाथों पर और विशेष तौर से अपनी जटाओं में फूल लगाते हैं। तिलक चूँकि उनकी पहचान और शक्ति दोनों का प्रतीक है, इसलिए नागा साधु सबसे ज्यादा ध्यान अपने तिलक पर देते हैं। प्रतिदिन तिलक एक जैसा लगे, इस बात को लेकर नागा साधु बहुत सतर्क रहते हैं। वे कभी अपने तिलक लगाने की शैली को बदलते नहीं हैं। तिलक लगाने में वे इतनी मेहनत और बारीकी बरतते हैं कि अच्छे-अच्छे मेकअप आर्टिस्ट उनके सामने मात खा जाएँ। तिलक लगाने के पीछे कारण यह है कि हमारे मस्तिष्क के बीच में एक आज्ञाचक्र होता है, जिसे गुरुचक्र भी कहते हैं। गुरुचक्र इसलिए कहते हैं क्योंकि यह देवताओं के गुरु बृहस्पति का स्थान होता है। गुरु एकाग्रता लाने और ज्ञान जाग्रत् करने में सहायक होते हैं। साधु लोग जो तपस्वी भी होते हैं और कड़ी साधना करके दैवी ज्ञान पाना चाहते हैं, गुरुचक्र को जाग्रत् रखने के लिए उस जगह तिलक लगाते हैं। ये उनके लिए गुरु के प्रति सम्मान प्रकट करने का भी भाव है।

“भस्म ही की तरह उन्हें रुद्राक्ष भी बहुत प्रिय है। कहा जाता है रुद्राक्ष भगवान् शिव के आँसुओं से उत्पन्न हुए हैं। यह साक्षात् भगवान् शिव का प्रतीक है। इस कारण लगभग सभी शैव साधु रुद्राक्ष की माला पहनते हैं। ये मालाएँ साधारण नहीं होतीं। इन्हें बरसों तक सिद्ध किया जाता है और ऐसा उनकी ध्यान-साधना से होता है। तब इनमें शक्ति आ जाती है और ये मालाएँ नागा साधुओं के लिए आभामंडल जैसा वातावरण पैदा करती हैं। रुद्राक्ष एक्यूप्रेशर का काम भी करता है। यह गरदन की नसों पर दबाव डालता है, जिससे रक्तचाप नियंत्रण में मदद मिलती है। इसके द्वारा साधु किसी भी तरह के तापमान में अपने को

अनुकूलित कर लेते हैं। इसलिए कई बार जब साधु बहुत प्रसन्न होते हैं तो भक्त को रुद्राक्ष आशीर्वाद के रूप में भी देते हैं।

"कहते हैं कि अगर कोई नागा साधु किसी पर खुश होकर अपनी माला उसे दे दे तो वह व्यक्ति स्वयं को धन्य समझता है।

"आमतौर पर नागा साधु निर्वस्त्र ही होते हैं, लेकिन कई नागा साधु लँगोट धारण भी करते हैं। भक्तों के उनके पास आने में कोई झिझक न हो, यही मुख्य उद्देश्य होता है। कई साधु हठयोग के तहत भी लँगोट धारण करते हैं, जैसे—लोहे की लँगोट, चाँदी की लँगोट, लकड़ी की लँगोट। यह भी एक तप की तरह होता है। नागा साधु अपने साथ तलवार, फरसा या त्रिशूल लेकर चलते हैं। ये हथियार इनके योद्धा होने के प्रमाण तो हैं ही, साथ ही इनके शृंगार का भी हिस्सा हैं। इनके लिए चिमटा रखना भी अनिवार्य होता है। धूनी रमाने में सबसे ज्यादा काम चिमटे का ही पड़ता है। चिमटा हथियार भी है और औजार भी। यह इनके व्यक्तित्व का एक अहम हिस्सा होता है। कई नागा साधु रत्नों की मालाएँ भी धारण करते हैं, लेकिन ऐसे नागा कम ही हैं, क्योंकि उन्हें धन से मोह नहीं होता, लेकिन ये रत्न उनके शृंगार का आवश्यक हिस्सा होते हैं।"

"वाह! लगता है कोई इंटरेसिटंग सेशन चल रहा है? मेरे बिना?" शेखर था।

"देखो, मैं किसे अपने साथ लाया हूँ?" तीनों ने मुड़कर देखा। शेखर के साथ एक लंबे कद का व्यक्ति खड़ा था। उसकी दाढ़ी थी और पतली-पतली मूँछें भी। कुरता-पाजामा पहना हुआ था और गले में कैमरा लटक रहा था।

"चलो बाहर ड्रांइगरूम में चलकर बैठते हैं," मनोहर दवे उठते हुए बोले। वहाँ सब नहीं बैठ सकते थे।

उस व्यक्ति के साथ सोफे पर बैठते हुए शेखर बोला, "यह श्रीधर है। हमारी चेन्नई ब्रांच में काम करता है। इंजीनियर है, पर फोटोग्राफी का शौक रखता है और ट्रैवलर भी है। कुछ समय पहले जब यह त्र्यंबकेश्वर गया था तो वहाँ नागा साधुओं से मिला था। इसने उन पर एक डॉक्यूमेंट्री फिल्म भी बनाई है। श्रीधर काफी कुछ बता पाएगा, इसलिए साथ ले आया।"

"हैलो श्रीधर," रूमी बोली। "आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई।"

"रात का खाना हमारे साथ ही करना," माँ तुरंत बोलीं।

"थैंक्यू। मुझे नॉर्थ इंडियन फूड बहुत पसंद है।" श्रीधर की हिंदी में दक्षिण भाषा का पुट समाहित था, लेकिन उच्चारण स्पष्ट था। "आप जो बता रही थीं, उसे जारी रखिए प्लीज।"

"आप पहली बार हमारे घर आए हैं। आप क्यों मेरे साथ बोर होना चाहते हैं। माँ-पापा को मैं बाद में बता दूँगी। अभी कुछ और बात करते हैं।"

"नहीं, मैं बिल्कुल बोर नहीं होऊँगा। शेखर ने आपको बताया न कि मैंने नागा साधुओं पर एक डॉक्यूमेंट्री बनाई है। आप जो बताओगे उससे मेरी नॉलेज बढ़ेगी ही।"

रूमी ने बोलना शुरू किया, "साधुओं की एक पहचान होती है उनकी जटा। उलझे हुए लंबे बाल को लपेटकर बाँध लेते हैं या फिर खुला रखते हैं। दरअसल इसके पीछे कई कारण हैं, लेकिन जो सबसे तार्किक कारण है वह यह कि जटा भौतिक शरीर से अलग होने की

मंशा की पहचान है। नागा साधु मोक्ष पाना चाहते हैं और इसीलिए वह तपस्या और साधना करते हैं। ऐसे में वे ऐसे कार्य में ज्यादा समय नहीं देते, जिससे साधना का समय कम पड़ जाए। बाल को सँवारना और कंघी करना इन्हें पसंद नहीं, क्योंकि ये प्रकृति में विश्वास रखते हैं और बाल की प्रकृति है बढ़ना सो बढ़ने देते हैं। मोटी-मोटी जटाओं की देख-रेख बहुत जतन से करनी पड़ती है। काली मिट्टी से उन्हें धोया जाता है। सूरज की रोशनी में सुखाया जाता है। अपनी जटाओं को नागा सजाते भी हैं। कुछ फूलों से, कुछ रुद्राक्ष से तो कुछ मोतियों की मालाओं से जटाओं का शृंगार करते हैं और जटा की तरह दाढ़ी भी नागा साधुओं की पहचान होती है। इसकी देख-रेख भी जटाओं की तरह करनी होती है।

"नागा साधुओं के कुछ नियम भी हैं कुछ। जैसे दीक्षा के बाद गुरु से मिले गुरुमंत्र में ही उन्हें संपूर्ण आस्था रखनी होती है। उनके भविष्य की सारी तपस्या इसी गुरुमंत्र पर आधारित होती है। ये किसी को प्रणाम नहीं करते, बल्कि इनका अभिवादन मंत्र है 'ॐ नमो नारायण।'"

रूमी ने लैपटॉप बंद कर दिया। असल में वह भी काफी थक गई थी। दिन-रात नागा साधुओं की छवि जिस तरह से उस पर हावी रहने लगी थी, उससे बेशक एक तरफ उसके मन में उनके बारे में और जानने की जिज्ञासा बढ़ती तो दूसरी ओर रिसर्च पेपर सबमिट करने की टेंशन भी उसे परेशान कर रही थी। वह और विलंब नहीं कर सकती थी।

"जब मैं नागा साधुओं से मिला था तो मैंने जो बात सबसे पहले नोटिस की, वह थी कि कुछ नरम दिल तो कुछ अक्खड़ स्वभाव के होते हैं। कुछ नागा संतों के तो रूप-रंग इतने डरावने थे कि उनके पास जाने से ही डर लगा। आई एम सॉरी, मैंने ऐसा उनका उपहास उड़ाने के इरादे से नहीं कहा, लेकिन क्षण भर को ऐसा महसूस होता है। लेकिन इन नागा संन्यासियों का मन बच्चों के समान निर्मल होता है। मैंने देखा ये अपने अखाड़ों में हमेशा धमाचौकड़ी मचाते रहते हैं। इनका मठ इनकी अठखेलियों से गूँजता रहता है," श्रीधर बोला।

"श्रीधर, जब हमने पहली बार उन नागा साधुओं को देखा था, तो हमें भी डर लगा था। हमारी भेंट उनसे गुफा में हुई थी, जहाँ रोशनी भी न के बराबर थी। सो डोंट फील सॉरी," शेखर ने उसकी बात पर सहमति जताते हुए कहा।

वह पल याद आते ही रूमी के रोंगटे खड़े हो गए। लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके जीवन का सफर कितना असहनीय, श्रमसाध्य, कठोर और कठिन है। आज के समय में जब सब एक आरामदायक और सुख-सुविधाओं से युक्त जिंदगी जीना चाहते हैं, किसी भी सांसारिक व्यक्ति के लिए भौतिक सुखों को त्यागकर नागा साधु बनना लगभग असंभव है। नागा साधुओं का प्रशिक्षण और यौगिक प्रक्रिया से प्रेरित है, लेकिन फिर भी इसकी तुलना उन असहनीय परिस्थितियों से नहीं की जा सकती, जिनसे नागा साधु को गुजरना पड़ता है।

उसे गहन सोच में देख शेखर ने उसके कंधे पर हाथ रख दिया। वह समझ सकता है कि जो विषय उसने लिखने के लिए चुना है, उसे लिखते समय वह कई बार ऊहापोह से गुजरती है, उसके मन में कई सवाल उठते हैं, जिनसे वह परेशान हो जाती है। लेकिन वह

जानता है कि उसका यह रिसर्च पेपर नागा साधुओं के प्रति एक नए दृष्टिकोण को जन्म देगा।

o

19

मोक्ष प्राप्ति लक्ष्य

“आप कब गए थे कुंभ में?” खाना खाने के बाद रूमी ने श्रीधर से पूछा। साढ़े नौ बज चुके थे। माँ-पापा सोने के लिए चले गए थे। श्रीधर की बातें रूमी को प्रभावित कर रही थीं। इंजीनियर होने के बावजूद वह एक स्कॉलर की दृष्टि रखता था।

“काफी पहले गया था मैं नासिक-त्र्यंबकेश्वर। तब कोई इरादा नहीं था कि मैं डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाऊँगा। बस घूमने के उद्देश्य से निकला था, लेकिन वहाँ के वातावरण ने मुझे इतना आकर्षित किया कि मैंने फिल्म बनाने का फैसला किया। आपको पता ही होगा कि देश के चार शहरों में लगने वाले कुंभ और सिंहस्थ मेले में से त्र्यंबकेश्वर-नासिक कुंभ कई मायनों में अलग, अनूठा और अद्भुत है। यहाँ दो शहरों में शाही स्नान होते हैं। यानी शैव संन्यासी ज्योतिर्लिंग त्र्यंबकेश्वर शिव की नगरी में गोदावरी के प्रकट स्थल कुशावर्त कुंड में शाही स्नान करते हैं, वहीं वैष्णव वैरागी संत भगवान् राम की वनवास स्थली पंचवटी के शहर नासिक के राम घाट पर गोदावरी की पवित्र धारा में शाही स्नान की डुबकी लगाते हैं।

“इतिहास के पन्नों में दर्ज है कि 18वीं सदी में महाराष्ट्र में पेशवाओं के राज में पहले शाही स्नान करने के सवाल पर शैव संन्यासियों और वैष्णव वैरागियों के बीच हिंसक संघर्ष हुआ। पेशवाओं ने दशकों तक सिंहस्थ का शाही आयोजन ही बंद कर दिया था। फिर पेशवा शासकों ने साधु-संतों के समझौते के बाद शिव की नगरी त्र्यंबकेश्वर में शैव संन्यासियों के और भगवान् राम की वनवास स्थली पंचवटी में वैष्णव वैरागियों के शाही स्नान का इंतजाम तय किया और सिंहस्थ फिर से अपनी गरिमा और महिमा के साथ शुरू हुआ।

“मुझे वहीं जाकर पता चला कि भारतीय ज्योतिष के अनुसार, नासिक कुंभ तब आयोजित होता है, जब बृहस्पति और सूर्य दोनों सिंह राशि में स्थित होते हैं, इसलिए इसे सिंहस्थ कुंभ भी कहा जाता है। वहाँ रोशनी और वातावरण विचित्र ध्वनियों वाला था। पल भर को लगा जैसे मैं हिप्पियों की नगरी में पहुँच गया हूँ। मोहन बाबा से मेरी मुलाकात हुई। मैंने उन्हें भस्म लगाते देखा। उन्होंने बताया, ‘पाँच वर्ष से ही मैं भगवान् भोलेनाथ की भक्ति कर रहा हूँ। मेरा ऐसा कोई लक्ष्य नहीं था कि मैं साधु या नागा साधु बनूँगा। मेरा लक्ष्य था केवल भोले बाबा को प्राप्त करना। मैं जाप और भक्ति में लीन रहने लगा। अलग-अलग जगह तपस्या की और स्वयं को पूरी तरह से भगवान् भोलेनाथ में लीन कर दिया। बारह साल मौन व्रत रखा। वह मेरा साधना काल था। मेरा उद्देश्य था किसी से न अच्छा बोलूँ, न बुरा। केवल साधना करूँ। मौन में ही इस किलयुग में हर बात को कहने की ताकत होती है। मौनं सर्वार्थ साधनम्। बस अपने धर्म को समझो, माता-पिता की सेवा करो और जनकल्याण में जीवन बिताओ।’

"जब मैंने उनसे पूछा कि इतनी कड़ी तपस्या क्यों करते हैं? स्वयं को इतना कष्ट देने का औचित्य क्या है तो वह बोले, 'इसका एकमात्र कारण है मोक्ष की प्राप्ति। इनसान संसार के मोह में पड़कर कर्म करता है, तो जला डालो सारे कर्मों को। जो कुछ भी शरीर को सुख दे उसे त्याग दो। कुछ ऐसा मत करो जिससे शरीर के लिए या किसी भी चीज के लिए मोह जनमे।'

"सच कहूँ तो सिंहस्थ कुंभ मेले में पहुँचने और फिल्म बनाने का विचार आ जाने के बावजूद मैं नहीं जानता था कि यह फिल्म मैं किस बारे में बनाऊँगा। उस दौरान मुझे तरह-तरह के नागा साधुओं के अनोखे गुण और विशेषताएँ देखने को मिलीं। कुछ के बाल लंबे थे, दूसरों के नाखून। मैंने देखा कि वे बहुत अलग तरह के करतब दिखा रहे हैं। शाही स्नान के लिए जाने से पहले वे ऐसा करते हैं। कुछ मौत को मात देने वाले कृत्य और करतब भी दिखा रहे थे। नागा साधुओं का मानना है कि ये कृत्य साबित करेंगे कि वे भगवान् शिव के प्रति समर्पित हैं। वे मानते हैं कि ऐसे कार्यों से उनकी आत्मा और मन मजबूत होंगे। कुछ क्रियाओं में उनके संवेदनशील हिस्सों में नुकीली वस्तुएँ डालना और घंटों तक सीधे खड़े रहना भी शामिल था। कुछ साधु खुद को कई दिनों तक जमीन के नीचे दफन कर देते हैं। बड़ी विलक्षण है इनकी दुनिया। अपने करतब दिखाकर उन्होंने सांसारिक लोगों को भौचक कर दिया था।"

रूमी और शेखर बहुत ध्यान से श्रीधर की बातें सुन रहे थे। वे मानो किसी और दुनिया में पहुँच गए थे।

शेखर बोला, "कुंभ की कल्पना करना तब तक असंभव है जब तक इसे स्वयं आँखों से न देखा जाए।"

"सही कह रहे हो शेखर," श्रीधर बोला, "वहाँ ऐसे दृश्य देखने को मिले, जो पहले कभी नहीं देखे थे, ऐसी दिव्य आत्माओं का दर्शन करने का अवसर मिला हो, जिनके बारे में मैंने कभी सोचा तक नहीं था। भावनाओं के सागर का जैसे मैं साक्षी बना। यह पृथ्वी पर होने वाला सबसे बड़ा आयोजन है। यह भारत के हृदय में झाँकने का झरोखा है। कुंभ मेला आनंद उत्सव है। विभिन्न संप्रदायों की वेशभूषा, भाषा, संस्कृति और असंख्य विभिन्नताओं के बीच भी एक आधारभूत सत्य की खोज है यह। मुझे लगा कि मैं किसी आध्यात्मिक जगत् में पहुँच गया हूँ। ऐसे पल जिनकी कभी अनुभूति नहीं हुई थी, वे मैंने महसूस किए। बहुत मुश्किल है उस अनुभूति का वर्णन करना, पर मेरी फिल्म देखकर शायद आप लोग उन्हें जी पाएँ।"

"कुंभ मेले में जाना चाहिए शेखर हमें भी," रूमी अचानक बोली, "सब जानते हैं कि भारत के कोने से कोने से यहाँ पाँच करोड़ से भी ज्यादा लोग पहुँचते हैं। वहाँ पहुँचकर हर तरह का भेदभाव खत्म हो जाता है। समस्त चिंताओं से मुक्त होकर जीवन की मधुरता को पाने का एक अवसर है कुंभ। दिव्यता का अनुभव करवाने वाला यह मेला मानव जीवन का बहु-उत्सव है। कितनी दिलचस्प बात है न कि संतों, संन्यासियों और साधुओं की टोलियाँ यहाँ पहुँचती हैं और अपने-अपने संप्रदायों के ध्वजों के नीचे अपना-अपना डेरा जमाती हैं।"

यह सुन श्रीधर बोला, "मैंने अपनी फिल्म में भी कुछ ऐसा ही दिखाने की कोशिश की है।

जंगलों, गुफाओं, कंदराओं और पर्वतों में रहने वाले या चरैवेति-चरैवेति का संकल्प लिए भ्रमण करने वाले आश्रम, अखाड़ों को सँभालने वाले सभी प्रकार के साधु-संत बिना किसी आमंत्रण के कुंभ पर्व का उत्सव मनाने एकत्र होते हैं। यहाँ आए गृहस्थों के बीच एकत्रित होते हैं, डेरा जमाते हैं। मैंने अनुभव किया कि इन संत-महात्माओं की साधना, ज्ञान-चर्चा व सत्संग से अमृत बरसता है। परंपरागत रूप से देखा जाए तो मेले का उद्देश्य साधुओं का समागम है। एक जमाने में जब सेलफोन नहीं होते थे तो ये आपस में संपर्क नहीं कर पाते थे, तब वे मेले में ही मिलते थे।

"कुंभ अपनी विविधता की वजह से भी आश्चर्यचकित करता है। उत्तर से लेकर पूर्व तक, पश्चिम से लेकर दक्षिण तक, गंगा से लेकर कावेरी तक, हिमालय से लेकर सह्याद्रि तक ज्ञान की धाराएँ, चेतना की धाराएँ कुंभ में समा जाती हैं। इस अमृत महाकुंभ में सनातन परंपरा के प्राण हैं। कुंभ एक राष्ट्रीय भावना है। मैं अकसर कहता हूँ कि जिन्हें भारत को जानना है, कुंभ के माध्यम से समझा जा सकता है। भारत को समझने के लिए सनातन धर्म को समझना आवश्यक है और सनातन धर्म को समझने के लिए कुंभ मेले से श्रेष्ठ कोई अवसर नहीं।

"आम धारणा है कि कुंभ का अर्थ केवल नदी में स्नान करना है, लेकिन ऐसा नहीं है। वहाँ तो एक जीवंत माहौल देखने को मिला, एक हलचल सी थी हर तरफ। सारे दिन कोई-न-कोई गतिविधि चलती। किसी पंडाल में हजारों लोग भोजन कर रहे होते तो किसी पंडाल में दो हजार लोगों को भोजन खिलाया जा रहा होता। पंडाल भी अत्यंत भव्य थे। कोई पंडाल एकदम सादा भी था। इतनी विविधता और गहन ऊर्जा का समावेश मुझे लगता है कहीं नहीं देखने को मिल सकता। मेरी दृष्टि में कुंभ मेला पृथ्वी का सबसे ज्यादा गहराई तक छू लेने वाला अनुभव है। यह एक आध्यात्मिक वातावरण का निर्माण करता है, जो असंख्य संतों के पवित्र स्पंदन से सतत पवित्र होता रहता है। कुंभ सामूहिक चेतना की जागरण का प्रतीक है। कुंभ एक महायज्ञ है जीव और जगत् के कल्याण का।" कहते-कहते श्रीधर भावुक हो गया था।

रूमी और शेखर सुनते हुए जैसे किसी आध्यात्मिक दुनिया में प्रवेश करता महसूस कर रहे थे।

"श्रीधर, तुम्हें लेट हो रहा हो तो तुम चले जाओ," शेखर ने कहा।

"कुछ देर और बैठता हूँ। रूमी ने खाना खाते हुए कहा था कि वह कुंभ मेले के बारे में काफी कुछ जानती है, जिसे उसने एक पूरे अध्याय के रूप में अपने रिसर्च पेपर में लिखा है। मैं वह सुनना चाहूँगा।"

"श्रीधर, जो आपने अभी बताया उसे भी मैं उस अध्याय में शामिल कर लूँगी अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो।"

"बिल्कुल," श्रीधर उत्साहित हो बोला।

रूमी ने लैपटॉप खोला और कुंभ मेलेवाला अध्याय पढ़ने लगी, 'कुंभ मेला चार पवित्र नदियों के तट पर होता है। पूर्व दिशा में गंगा नदी के तट पर प्रयाग में। पश्चिम में शिप्रा नदी के तट पर उज्जैन में, उत्तर में गंगा नदी के तट पर हरिद्वार में और दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर नासिक में। यह तीन वर्षों में एक बार होता है और चार अलग-अलग स्थानों पर

आयोजित होने के कारण एक स्थान पर बारह वर्षों में एक बार आयोजित होता है। हर तीन वर्ष में पूर्ण वैभव के साथ एक अस्थायी नगर बसता है और एक महीने बाद अगले स्थान की यात्रा पर निकल पड़ता है। बारह वर्षों का भ्रमण कर यह अस्थायी नगर उसी स्थान पर आ बसता है। इसलिए कुंभ मेले को एक यायावर भ्रमण नगर भी कह सकते हैं। परंपरा से इस कुंभ का आयोजन अखाड़ों द्वारा होता रहा है।

'कुंभ मेला अनादि है। इतिहास में कोई एक घटना नहीं है, जहाँ से कुंभ मेला आरंभ हुआ हो। वैसे इतिहास में कुंभ के मेले का सबसे पुराना उल्लेख सम्राट् हर्षवर्धन (सन् 612-647 ई.) के समय का मिलता है, जिसको चीन के प्रसिद्ध बौद्ध भिक्षु ह्वेनसांग ने सातवीं शताब्दी में अपने यात्रा वर्णन में लिखा है—'पाँच साल तक संग्रह की हुई अपनी सारी संपत्ति को सम्राट् हर्षवर्धन अपने पूर्वजों की तरह प्रयाग की पुण्यभूमि में, सर्वप्रथम भगवान् बुद्ध की प्रतिमा के सामने समर्पित करता था। फिर उस संपत्ति को स्थानीय पंडों-पुजारियों, फिर बाहर के पंडों-पुजारियों, फिर प्रमुख विद्वानों, फिर विधर्मियों को और अंत में विधवा, असहाय, भिखारियों, अपंगों, गरीबों और साधुओं में बाँट देता था। इस तरह सम्राट् अपना सारा कोष और भोजन-भंडार बाँटने के बाद अपना कीमती राजमुकुट, जड़ाऊ कंठहार और यहाँ तक कि पहने हुए कपड़े भी दान कर देता था। अंत में सबकुछ दे चुकने के बाद राजा प्रसन्नतापूर्वक कहता था, मैंने अपना सबकुछ ऐसे कोष में दे दिया है जो कभी खाली नहीं होगा।'

"इस वर्णन से पता चलता है कि सम्राट् हर्षवर्धन अपने पूर्वजों की तरह छठे वर्ष प्रयाग में यह महादान महोत्सव त्रिवेणी (प्रयाग) के किनारे आयोजित करता था। परंतु कहीं यह सिद्ध नहीं होता है कि इस आयोजन को कुंभ कहते थे या फिर इसे हर्षवर्धन ने प्रारंभ किया था। क्योंकि इस विवरण में हर्षवर्धन को अपने पूर्वजों का ही अनुकरणकर्ता बताया गया है। इन सारे तथ्यों से ज्ञात होता है कि बौद्धकाल में कुंभ का प्रचलित रूप बदलकर महादान पर्व के रूप में आ गया होगा जिसे बाद में वैदिक सनातन धर्म के आचार्यों ने पुनः व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करके कुंभ पर्व घोषित किया होगा।

"कहा जाता है सन् 1621 में कुंभ पर्व पर प्रथम स्नान को लेकर उदासी और वैरागी साधुओं में भयंकर लड़ाई हुई। उस समय तत्कालीन मुगल सम्राट् जहाँगीर स्वयं घटनास्थल पर गया था। परंतु साधुओं की लड़ाई देखने की इच्छा से शाही सैनिकों को लड़ाई में हस्तक्षेप करने से उसने मना कर दिया। सन् 1666 के हरिद्वार कुंभ मेले के अवसर पर सम्राट् और औरंगजेब के सैनिकों ने आक्रमण किया जिनका मुकाबला नागा संन्यासियों के साथ मिलकर साधु-संतों ने किया। इस लड़ाई में संतों की धर्म-ध्वजाएँ देखकर मुगल सेना के मराठे भी संतों के साथ दल में मिल गए। औरंगजेब को भारी पराजय का मुँह देखना पड़ा। सन् 1690 के त्र्यंबकेश्वर कुंभ में संन्यासियों और वैरागियों के बीच युद्ध के प्रमाण मिलते हैं। सन् 1760 में हरिद्वार के कुंभ मेले का जिक्र करते हुए अंग्रेज लेखक विल्सन ने अपने संस्मरण में लिखा है, 'संन्यासियों और वैरागियों में भयंकर मार-काट हुई। इसी कुंभ मेले से वैष्णव महात्माओं ने कुंभ में जाना बंद कर दिया। यह लोग अपना कुंभ पर्व वृंदावन में मनाने लगे थे। बाद में हरिद्वार में अंग्रेजों का आधिपत्य हो जाने पर वैरागियों ने पुनः हरिद्वार

कुंभ में आना प्रारंभ किया था, किंतु आज भी उस परंपरा के अनुसार वैष्णव अणि अखाड़े प्रथम स्नान हरिद्वार कुंभ में न करके वृंदावन में ही करते हैं। दूसरे तथा तीसरे स्नान के समय अन्य अखाड़ों के साथ अणि अखाड़ों के लोग साथ शाही स्नान करते हैं। वैष्णव संत शिवरात्रि के स्नान के बजाय तीसरा स्नान अकेले ही करते हैं। सन् 1796 के हरिद्वार कुंभ के अवसर पर वैष्णव और सिख साधुओं के बीच लड़ाई का मुख्य कारण यह था कि पटियाला के राजा के संरक्षण में निर्मल संप्रदाय के साधु भी कुंभ में शाही स्नान करना चाहते थे। किंतु अन्य संप्रदायों ने इन्हें अखाड़े के साथ शाही स्नान करने की अनुमति नहीं दी। नतीजतन क्षुब्ध निर्मल संप्रदाय के संतों ने अन्य संतों से समझौतों के तहत निर्मल अखाड़ा स्थापित किया, उसे मान्यता देते हुए अपने साथ शाही स्नान में शामिल होने की अनुमति प्रदान की।'

"इतिहासकार यदुनाथ सरकार ने 13वीं शताब्दी के आसपास कुंभ पर्वों का आरंभ माना है। उन्होंने 1253 के नागा संन्यासियों द्वारा वैष्णव और वैरागियों पर विजय प्राप्त करने की घटना उल्लेख करते हुए कुंभ की बात कही है। इतिहासकारों ने 1514 ईसवी में प्रयाग के कुंभ में चैतन्य महाप्रभु के उपस्थित होने का भी जिक्र किया है।"

"कुंभ पर्व शताब्दियों से भारत के चार नगरों, जो कि चार दिशाओं में विभिन्न नदियों के किनारे बसे हैं, में मनाया जाता है। किंतु लिखित रूप में वेद, पुराण आदि धार्मिक ग्रंथों को छोड़कर ऐतिहासिक और प्रामाणिक दस्तावेज उपलब्ध नहीं हैं। महंत लालपुरीजी ने अपनी पुस्तक 'दशनाम नागा संन्यासी और श्री पंचायत अखाड़ा महानिर्वाणी' में 'कुंभ पर्व का विकास' नामक अध्याय में लिखा है, 'कुंभ मेले के वर्तमान रूप में विकास के विषय में एक मत यह भी है कि भारतीय इतिहास के स्वर्णिम युग गुप्त साम्राज्य (320-600 ई.) के समय जैसे पौराणिक साहित्य पुनः संपादित वर्तमान रूप में आए, उसी प्रकार पुराण एवं ज्योतिष साहित्य के आधार पर कुंभ पर्वों के स्थान तथा काल स्थायी रूप से निर्णीत होकर वर्तमान रूप में विकसित हुए।' किंतु इसे केवल एक विचार ही माना जाएगा। कोई तथ्यपूर्ण या प्रामाणिक इतिहास वचन नहीं। कारण कि स्थान एवं काल का निर्णय गुप्त साम्राज्य के बहुत पहले से ही इसी रूप में चला आ रहा है, अतः इस संबंध में कुछ कहना व्यर्थ है। बल्कि इस विषय में गहन ऐतिहासिक खोज की आवश्यकता है। किंतु खेद का विषय तो यह है कि इतिहासकारों ने इसे मात्र साधु-संतों का मेला या पर्व मानकर दुर्लक्ष्य किया है।"

"कुंभ मेला कब और कहाँ आयोजित होंगे, इसका निर्धारण कैसे लिया जाता है?" शेखर ने पूछा।

"इसका निर्धारण खगोलीय घटनाओं के आधार पर होता है। इन अवधियों में ऊर्जा आध्यात्मिक प्रमाण में केंद्रित होती है, इसलिए इस आयोजन को दैवी आयोजन भी कहा जाता है। सूरज, चंद्र एवं बृहस्पति के विभिन्न राशियों में प्रवेश के सहयोग से कुंभ मेले के स्थान व तिथि का निर्धारण होता है। इन खगोलीय घटनाओं के यहाँ सांकेतिक अर्थ भी हैं। सनातन धर्म में सूर्य को आत्मा, चंद्रमा को मन व बृहस्पति को धर्म का देवता माना गया है। जब धर्म का आचरण होता है तो मन की शुद्धि होती है और मन की शुद्धि से आत्म दर्शन का द्वार खुलता है। इसीलिए कुंभ मेला साधकों के लिए एक विशेष महत्त्व रखता है," रूमी

बोली।

श्रीधर को बाहर तक छोड़कर आने के बाद रूमी ने कहा, “शेखर, मेरी वजह से तुम क्यों अपनी नींद खराब करते हो। तुम भी चले जाओ।”

“तुम्हारे लिए कुछ भी,” शेखर मुसकराया और रूमी के गालों को चूम लिया। वह मुसकराने लगी।

“मैं असल में समुद्र मंथन की कहानी सुनना चाहता हूँ। वह सुनकर चला जाऊँगा,” शेखर सोफे पर लेटता हुआ बोला तो रूमी ने उसके आगे मेवे की प्लेट रखते हुए कहा, “इन्हें खा लो। थोड़ी ऊर्जा मिलेगी।”

“मेरा एनर्जी लेवल तो तुम्हें देखकर ही बढ़ जाता है।”

“तुम रोमांटिक होने लगो उससे पहले तुम्हें कहानी सुनाना ही ठीक रहेगा,” रूमी ने उसके बालों को सहलाते हुए कहा।

“देवताओं एवं राक्षसों ने समुद्र के मंथन और उससे निकले सभी रत्नों को आपस में बाँटने का फैसला। समुद्र के मंथन में जो सबसे मूल्यवान रत्न निकला वह था अमृत। उसे पाने के लिए देवताओं और राक्षसों के बीच लड़ाई हुई तो असुरों से अमृत को बचाने के लिए भगवान् विष्णु ने वह पात्र या घट अपने वाहन गरुड़ को दे दिया। असुरों ने जब गरुड़ से वह पात्र छीनने का प्रयास किया तो उस पात्र में से अमृत की कुछ बूंदें छलककर इलाहाबाद, नासिक, हरिद्वार और उज्जैन में गिरीं। तभी से हर 12 साल के अंतराल पर इन स्थानों पर कुंभ मेला आयोजित किया जाता है। अमृत घट की रक्षा के समय सूर्य, चंद्र और गुरु जिन राशियों में स्थित थे, उसी राशि पर इन तीनों के होने पर उक्त चारों पुण्य क्षेत्रों में कुंभ महापर्व का स्नान होता है। गुरु बृहस्पति ने राक्षसों से अमृत कुंभ की रक्षा की, सूर्य ने घड़े को फूटने से बचाया और चंद्रमा ने घट के अमृत को गिरने से बचाया, इसी कारण इन तीनों का कुंभ मेले से गहरा संबंध है।”

शेखर को शायद सुनते-सुनते झपकी आ गई थी। उसे जगाए कि सोने दे...इसी उलझन में रूमी थी कि तभी माँ आ गईं। वह शायद वॉशरूम जाने के लिए उठी थीं। उन्होंने धीमे स्वर में कहा, “सोने दे इसे। चादर लाकर उढ़ा दे।”

रूमी ने सोते हुए शेखर पर एक नजर डाली और अपने कमरे में चली गई।

o

20

कुंभ की महिमा

आज भले ही कुंभ मेले की परंपरा प्रतीकात्मक अधिक होती जा रही हो, किंतु किसी समय में निश्चय ही साधु-संतों का इस प्रकार एकत्र होना, देश-विदेश से आए गृहस्थ समाज के साथ मिलकर बैठना, धर्मशास्त्रों से संबद्ध विविध विषयों की समालोचना और दार्शनिक प्रश्नों पर विचार-विमर्श करना तथा अन्न-वस्त्रादि का मुक्तहस्त दान करना, साथ ही यज्ञादि अनुष्ठान संपन्न कराना, सारे समाज के लिए जहाँ अत्यंत प्रभावोत्पादक था वहीं कल्याणकारी भी। कतिपय लोगों का कथन यह भी है कि वर्तमान कुंभ पर्वों का स्वरूप आदि शंकराचार्य द्वारा स्थापित है। यह लोग अपनी दलील प्रस्तुत करते हुए निम्न तथ्य देते हैं—

'झाँसी गजेटियर' में लिखा है कि सन् 1751 में अहमद खाँ बंगस ने दिल्ली के वजीर और अवध के नवाब सफदरजंग को परास्त करके इलाहाबाद के किले को घेर लिया था। वह नगर पर अधिकार करने वाला ही था कि प्रयाग का कुंभ आ गया। उसमें सम्मिलित होने के लिए देश के विभिन्न भागों से धर्मानुरागी लोगों का महान् जन सम्मेलन हुआ। उसमें नागा संन्यासियों का एक विशाल जनसमूह भी राजेंद्र गिरि के नेतृत्व में आया। इन संन्यासियों की संख्या विभिन्न विवरणों के अनुसार छह हजार से पचास हजार तक थी। उन लोगों ने पहले कुंभ पर्व में किए जाने वाले अपने धार्मिक अनुष्ठानों को पूर्ण किया तत्पश्चात् शस्त्र धारण किए। फरवरी से अप्रैल तक अहमद खाँ बंगस की सेना के साथ युद्ध किया। उसको पराजित करके प्रयाग (इलाहाबाद) नगर की रक्षा की। इस विवरण से कहीं यह सिद्ध नहीं होता है कि आदि शंकराचार्य ने कुंभ पर्वों का वर्तमान स्वरूप विकसित किया है। फिर आदि शंकराचार्य के काल में नागा संन्यासियों के अतिरिक्त श्री संप्रदाय (वैष्णव) और उदासीन संप्रदाय भी थे। उनके आचार्यगण अपने अनुयायियों और संतों के साथ कुंभ स्नान के लिए आते थे। इसलिए यह कहना कि कुंभ पर्व का वर्तमान स्वरूप आदि शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित है, ऐतिहासिक नहीं जान पड़ता है। हाँ, यह अलग बात है कि आदि शंकराचार्य द्वारा किए गए वैदिक सनातन धर्मोद्धारक कार्यों का अपना विशिष्ट महत्त्व है। कोई भी सनातनधर्मी उनके कार्यों की अवहेलना नहीं कर सकता है। सन् 1050 ईसवी के ग्रंथ 'दाबिस्तान' में लिखा है कि '1050 ईसवी में हरिद्वार के कुंभ मेले में वैरागियों और संन्यासियों में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें हजारों वैरागी-संन्यासी मारे गए। शेष बचे हुए वैरागी-संन्यासियों ने प्राण रक्षा हेतु तिलक, तुलसी माला त्यागकर कनकटे जोगियों का छद्म भेस बना लिया था।'

यह माना जाता है कि कुंभ के दौरान स्नान करना सभी पापों और बुराइयों का इलाज

करता है और बाघ, मोक्ष प्रदान करता है। यह भी माना जाता है कि कुंभ योग के समय गंगा का पानी सकारात्मक ऊर्जा से भरा होता है और कुंभ के समय जल सूर्य, चंद्रमा और बृहस्पति की सकारात्मक विद्युत् चुंबकीय विकिरणों से भरा होता है।

रूमी बैठी हुई लिख रही थी, जब प्रो. वाचस्पति ने अपनी स्टडी में प्रवेश किया। उन्होंने एक नजर उसके नोट्स पर डाली और बोले, "जरूरी है कि तुम कुंभ मेले के बारे में भी अपने रिसर्च पेपर में विस्तृत रूप से लिखो, क्योंकि अखाड़ों और नागा साधुओं का कुंभ मेले से गहरा नाता है।"

"जी सर।"

वह लिखने लगी, 'कुंभ शब्द कुंभक से बना है, जिसका अर्थ है अमरता के अमृत से भरा एक पवित्र पात्र। यह शब्द पवित्र जल में स्नान से जुड़ा है इसीलिए उस दौरान स्नान का इतना महत्त्व है। कुंभ मेले के दौरान स्नान के लिए कुल पाँच महत्त्वपूर्ण दिन होते हैं, जिनमें से तीन शाही स्नान की श्रेणी में आते हैं। शाही स्नान के दिन सभी तेरह अखाड़े एक निर्धारित आदेश का पालन करते हुए पवित्र स्नान करते हैं। पानी में जाने का जुलूस अपने आपमें एक शानदार दृश्य होता है, क्योंकि साधुओं के समूह का मुखिया हाथी, घोड़े और रथों पर बैठा होता है जिन्हें खूबसूरती से सजाया जाता है। मेले में अखाड़ों के शाही स्नान का एक विशेष क्रम होता है। शाही स्नान में सबसे पहले जूना, आह्वान और अणि अखाड़ा स्नान करते हैं। उसके बाद निरंजनी और आनंद अखाड़ा गंगा में आस्था की डुबकी लगाते हैं। इसके बाद महानिर्वाणी और अटल अखाड़े के साधु-संत हर की पैड़ी के ब्रह्मकुंड पर कुंभ स्नान करते हैं।

'कुंभ में सबसे पहले नगर प्रवेश होता है जिसमें हाथी, घोड़े, बग्घियाँ, ट्रॉली आदि पर साधुओं का नगर आगमन होता है। वह एक प्रकार से शक्ति को दिखाना भी होता है। नगर प्रवेश के बाद धर्म-ध्वजा लगाई जाती है। धर्म-ध्वजा बनाने के लिए जंगल से 52 गज के पेड़ की पूरी लकड़ी लाई जाती है। पेड़ का चुनाव करने की शर्त है कि वह कहीं से कटा नहीं होना चाहिए और न ही उसमें कहीं कील होनी चाहिए। जंगल से लाकर उसमें झंडा लगाया जाता है। इसके बाद मंत्रोच्चारण के साथ धर्म-ध्वजा खड़ी की जाती है।

'इस कार्यक्रम के बाद ही साधु टेंट में आ सकते हैं। धर्म-ध्वजा खड़ा करने का मतलब है कि कुंभ का आगाज हो गया है। फिर अगले दिन पेशवाई निकलती है। पेशवाई में ये लोग अपने देवता, भाले, तलवार लेकर चलते हैं। सबसे आगे इनके सभापति महामंडलेश्वर होते हैं, पद के क्रम अनुसार बाकी साधु होते हैं। पेशवाई एक प्रकार से सैनिक बल दिखाने की प्रथा है।

'कुंभ स्नान में नागा साधुओं का वैभव राजाओं जैसा होता था, इस वजह से इसे शाही स्नान कहा गया है। जब महानिर्वाणी अखाड़े की पेशवाई निकाली जाती है तो सबसे आगे अखाड़े का ध्वज होता है। उसके पीछे नागा संन्यासियों का समूह करतब दिखाते आगे-आगे बढ़ता है। रथ पर आरूढ़ आराध्य कपिल मुनि की मूर्ति थी, जिसपर महात्मा चँवर डुलाते हैं। बीच-बीच में रथ पर सवार साधु-महात्मा दर्शन के लिए कतार में खड़े श्रद्धालुओं पर जल में डुबोकर फूल बरसाते हैं। नागा साधु अपने अस्त्र-शस्त्र के साथ जगह-जगह

रुककर युद्ध-कौशल का भी प्रदर्शन करते हैं। सड़क के दोनों किनारों पर दो घोड़ों पर सवार दो नागा संन्यासी नगाड़ा बजाते हुए चलते हैं। इसके बीच में साधु, महात्मा, संन्यासी, नागा चलते हैं।

'प्रत्येक अखाड़े का एक निश्चित तथा आवंटित समय होता है। समय 30 मिनट से लेकर लगभग एक घंटे तक होता है। समय संबंधित जुलूस के आकार पर निर्भर करता है। यहाँ तक कि शाही स्नान के लिए जाने के लिए अपनाए गए रास्तों का भी यहाँ ध्यान रखा जाता है। यह इसलिए ताकि प्रतिद्वंद्वी अखाड़ों के सदस्यों को एक-दूसरे से अलग रखा जाए, ताकि टकराव से बचा जा सके।'

"सर, कुंभ की राशियों से संबंध के बारे में आप कुछ बताएँ।"

प्रो. वाचस्पति ने अपना चश्मा सरकाया और बोले, "हिंदू धर्म की मान्यताओं के अनुसार, जब बृहस्पति कुंभ राशि में और सूर्य मेष राशि में प्रवेश करता है तो कुंभ मेले का आयोजन होता है। प्रयाग का कुंभ मेला सभी मेलों में अधिक महत्त्व रखता है। कुंभ का अर्थ है—कलश, ज्योतिष शास्त्र में कुंभ राशि का भी यही चिह्न है। कुंभ मेले की पौराणिक मान्यता अमृत मंथन से जुड़ी हुई है जिसके बारे में तुम लिख ही चुकी हो। कुंभ मेले की ज्योतिष शास्त्रीय व्याख्या भी की गई है, जिसके अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि कुंभ मेला कुंभ-योग के समय धार्मिक स्थान से संबंधित है। कुंभ योग की सही तिथि व समय को निश्चित करने के लिए सूर्य, चंद्रमा बृहस्पति तथा शनि आदि ग्रहों की स्थिति व उनके मेल को ध्यान में रखा जाता है। जब सूर्य और चंद्रमा मकर राशि में तथा गुरु वृष राशि में आते हैं, तो प्रयाग में कुंभ होता है। जब कुंभ राशि में गुरु हो और सूर्य मेष राशि में तथा चंद्रमा धनु राशि में, तब हरिद्वार में कुंभ का आयोजन होता है। सिंह राशि में गुरु और सूर्य व चंद्र कर्क राशि में भ्रमण करते हैं, तब नासिक में कुंभ मेले का आयोजन होता है। जब सिंह राशि में गुरु तथा सूर्य व चंद्रमा मेष राशि में भ्रमण करते हैं, तब उज्जैन में कुंभ मनाया जाता है।

"कुंभ मेला देश में एक केंद्रीय आध्यात्मिक भूमिका निभाता है, जो आम भारतीयों पर मंत्रमुग्ध कर देने वाला प्रभाव डालता है। यह आयोजन खगोल विज्ञान, ज्योतिष, आध्यात्मिकता, आनुष्ठानिक परंपराओं और सामाजिक और सांस्कृतिक रीति-रिवाजों और प्रथाओं के विज्ञान को समाहित करता है, जो इसे ज्ञान में बेहद समृद्ध बनाता है। चूँकि यह भारत के चार अलग-अलग शहरों में आयोजित किया जाता है, इसमें विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियाँ शामिल होती हैं, जो इसे सांस्कृतिक रूप से विविध त्योहार बनाती हैं। परंपरा से संबंधित ज्ञान और कौशल प्राचीन धार्मिक पांडुलिपियों, मौखिक परंपराओं, ऐतिहासिक यात्रा-वृत्तांतों और प्रख्यात इतिहासकारों द्वारा निर्मित ग्रंथों के माध्यम से प्रसारित होते हैं। हालाँकि, आश्रमों और अखाड़ों में साधुओं का शिक्षक-छात्र संबंध कुंभ मेले से संबंधित ज्ञान एवं कौशल प्रदान करने और सुरक्षित रखने का सबसे महत्त्वपूर्ण तरीका है।"

रूमी सब रिकॉर्ड करती जा रही थी। प्रो. वाचस्पति की व्यस्तता को समझ वह घर चली गई। उसे कीरत की डायरी भी पढ़नी थी, जिसके कई पृष्ठ उसने खोले तक भी नहीं थे। कुंभ मेले के विषय में जो लिखा था कीरत ने उसे ढूँढ़ने लगी। ज्यादा नहीं कुछ ही पन्ने थे उस

बारे में। रूमी वही पढ़ने लगी। 'ऐसा प्रतीत होता है कि कुंभ मेला सर्वप्रथम हरिद्वार में प्रारंभ हुआ होगा, जब बारह वर्ष बाद बृहस्पति कुंभ राशि में स्थित होता है तथा सूर्य मेष राशि में स्थित होता है। इस तरह के खगोलीय संयोग की बात नारदीय पुराण में कही गई है, जिसके अनुसार यह गंगा स्नान हेतु एक पवित्र समय होता है। आगे चलकर प्रयाग, उज्जैन तथा नासिक में भी यह पर्व मनाया जाने लगा। प्रयाग में माघ महीने में गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम पर स्नान करने की परंपरा बड़ी पुरानी है। कुंभ मेलों के अवसर पर साधुओं व गृहस्थों के बीच सर्वाधिक घनिष्ठ स्तर की सामाजिक-धार्मिक अंतर्क्रिया होती है। एक सामूहिक कर्मकांड के रूप में कुंभ मेला भारतीय संस्कृति में जाति आधारित समाज और धार्मिक संस्थाओं के मध्य स्थित मूलभूत अनुबंध की शांति सांकेतिक अभिव्यक्ति है। अखाड़े की रंग-बिरंगी शोभायात्रा और शाही स्नान की परंपरा सामान्य जन के मध्य सामाजिक चेतना को उत्पन्न करने के लिए एक शक्तिशाली उत्प्रेरक का कार्य करती है और इस प्रकार समाज के मनोबल को बढ़ाती है।

'शताब्दियों से चली आ रही महाकुंभ पर्व की अक्षुण्ण परंपरा भारतीय संस्कृति में निहित विराट् ऐक्य भावना का प्रतीक रही है। समस्त धर्म के मतावलंबी संत साधु-संन्यासी, दर्शनशास्त्र के महान् अध्येता विद्वान्, बड़े-बड़े मठों के महंत और पीठाधीश्वर जहाँ एकत्र होते हैं, वहीं जनता के सभी वर्गों के धनी-निर्धन, छोटे-बड़े, राजा-रंक बड़े उत्साह के साथ उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम से एकत्र होते हैं। कुंभ पर्व ऐसा विराट् महापर्व बन जाता है, जिसमें भाषागत भिन्नता और प्रादेशिक धार्मिक या संप्रदायगत संकीर्णता स्वतः मिट जाती है।

'जहाँ तक अखाड़ों का संबंध है, कुंभ मेला उनको अपने धर्म व दर्शन के प्रचार के साथ-साथ अपना वैभव प्रदर्शित करने का भी एक मंच प्रदान करता है। देश के कोने-कोने से एकत्र हुआ जनसमूह अखाड़े के विद्वान् संतों व महामंडलेश्वरों के ज्ञान तथा मेधा से उनके प्रवचनों के माध्यम से लाभान्वित होता है। इसमें कोई संदेह नहीं ि क आश्रम, मठ और अखाड़े कुंभ मेलों के अवसर पर भारत में धार्मिक विश्वास के प्रचार-प्रसार की यांत्रिकी के महत्त्वपूर्ण अंग हैं।

अखाड़ों के लिए कुंभ मेला धार्मिक दृष्टि से ही नहीं अपितु राजनीतिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। अखाड़े पंचायती संगठन हैं और प्रजातांत्रिक प्रणाली में विश्वास रखते हैं। इन विशाल संगठनों के सुचारु संचालन और व्यवस्था के लिए अनेक पदाधिकारी चुने जाते हैं। इन पदाधिकारियों का चुनाव सर्वसम्मति से कुंभ मेलों तथा अर्धकुंभ मेलों के अवसर पर ही किया जाता है।

'मैं यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया कि कुंभ मेले के अवसर पर विभिन्न अखाड़ों द्वारा दिए जाने वाले भंडारे भी अनोखे होते हैं। उनका भी एक महत्त्व है। मुझे समझ आया कि ये भंडारे प्रेम एवं भाईचारे का प्रतीक हैं जिन्हें अखाड़े अकेले अथवा साथ मिलकर आयोजित करते हैं। ये भंडारे दो तरह के होते हैं। पहले प्रकार के भंडारे को व्यष्टि भंडारा कहते हैं, जिसमें कम लोगों को निमंत्रित किया जाता है। दूसरे प्रकार के भंडारे को समष्टि भंडारा कहते हैं, जिसमें बड़ी संख्या में लोगों को निमंत्रित किया जाता है। कुछ स्थानों पर कई

हजार साधु निमंत्रित होते हैं। भंडारे का समय निश्चित होता है तथा उससे पहले पवित्र भोज्य पदार्थ तैयार रहता है। सभी महामंडलेश्वर अपने सेवकों के साथ पधारकर नियत स्थान पर विराजते हैं और उनमें से कुछ प्रवचन भी करते हैं, जिसे अन्य साधु ध्यानपूर्वक सुनते हैं। प्रवचन समाप्त होने पर महामंडलेश्वरों की कपूर तथा फूलमाला से अर्चना की जाती है। बिगुल बजाया जाता है और साधु-संतों द्वारा 'ॐ नमः पार्वती पतये, हर हर महादेव' का उच्चारण किया जाता है। इस समय गीता का 15वाँ अध्याय भी पढ़ा जाता है। इसके बाद प्रसाद वितरण होता है, जो सामान्यतः गेहूँ के विभिन्न प्रकार के मिष्टान्नों, दही, रबड़ी तथा वनस्पतियों से बना होता है।

'मुझे एक और बात पता चली कि कुंभ में हर साधु को अपने सामर्थ्य के अनुसार दक्षिणा देनी होती है। उसे 'पुकार' कहते हैं। जितना बड़ा साधु, उतनी बड़ी पुकार। यही नहीं मैंने देखा कि नागा साधुओं से युवाओं को बहुत आस रहती है। कोई उनसे बेरोजगारी से निदान पाने के लिए चर्चा करता है तो कोई सांसारिक परेशानी का समाधान पूछता है। बच्चे का पढ़ाई में मन नहीं लगता, ऐसा सवाल भी माँ-बाप को करते मैंने देखा। और यह मेरे लिए बहुत अचंभित करने वाली बात थी। भले ही नागा साधु वैराग्य मार्ग पर चलते हैं, लेकिन इनके सबसे ज्यादा भक्त सांसारिक होते हैं। और तब मैं कहाँ जानता था कि मैं भी कभी इनका भक्त बनकर इनके ही मार्ग पर चलूँगा।'

रूमी ने डायरी बंद कर दी। कीरत का चेहरा उसकी आँखों में घूम गया। वह नागा साधुओं के बारे में जानने गया था और उनके जीवन से प्रेरित होकर स्वयं नागा साधु बन गया। यह जानने के बाद भी कि नागा साधु बनना कितना कठिन है। सच इनसान की दृढ़ इच्छाशक्ति उससे क्या-क्या करवा देती है!

21

सम्मान योग्य हैं जटाधारी

“रूमी, तुम रिसर्च पेपर को अयोध्या में बने श्रीराम मंदिर का उल्लेख करते हुए समाप्त कर सकती हो। नागा साधुओं की उस मंदिर को बनाने की लड़ाई में बड़ी भूमिका रही है। इसका केस एक नागा साधु ने ही लड़ा था,” प्रो. वाचस्पति ने फोन पर कहा।

“पर सर, इसका उल्लेख करना ठीक रहेगा? कोई आपत्ति न उठाए?” रूमी असमंजस में थी।

“अब आपत्ति किस बात की? श्रीराम मंदिर बन चुका और रामलला उसमें विराज चुके हैं। नागा साधुओं ने अयोध्या को बचाने के लिए बहुत बलिदान दिए हैं।”

“जी।”

रूमी काफी देर तक इस बारे में सोचती रही। फिर इंटरनेट का सहारा लेना पड़ा उसे। वह यह देखकर अचंभित रह गई कि किस तरह से अयोध्या के नागा साधुओं ने रामजन्मभूमि को विदेशी आक्रमणकारियों से बचाने के लिए अपनी जान जोखिम में डाली थी। देवीदीन पांडे और स्वामी महेशानंद जैसे कई नागा सैनिकों और संत बलरामाचार्य और बाबा वैष्णवदास जैसे नागा साधु नेताओं ने राम मंदिर की रक्षा के लिए 76 झड़पों में लड़ाई लड़ी और मारे गए। संत बालानंद और मंदस ने अयोध्या को बचाने के लिए दशकों तक मुगल, तुर्क और अफगान सेनाओं से लड़ाई लड़ी। उसके बाद भगवान् राम के मंदिर के लिए दशकों तक कानूनी लड़ाई चली। सिविल कोर्ट से लेकर हाईकोर्ट और सुप्रीम कोर्ट तक केस चला। उच्चतम न्यायालय में सैकड़ों गवाह पेश हुए, तमाम दस्तावेज साक्ष्य के तौर पर रखे गए और आखिरकार हिंदू पक्ष के हक में फैसला आया।

उसने उस वकील के बारे में जानने के लिए फिर सर्च किया तो पता चला, ‘हिंदू पक्ष की तरफ से श्रीरामजन्मभूमि का केस लड़ने वाले मशहूर वकील करुणेश शुक्ला, जो कि एक नागा साधु हैं, ने बाकायदा कानून की पढ़ाई की। फिर रामलला का मुकदमा लड़ा। अब वह मथुरा की श्रीकृष्णजन्मभूमि विवाद के मुख्य याचिकाकर्ता हैं। मूल रूप से उत्तर प्रदेश के बस्ती के रहने वाले करुणेश शुक्ला की शुरुआती पढ़ाई-लिखाई सरस्वती शिशु मंदिर में हुई। वह बताते हैं कि ‘मेरे परिवार में शुरू से ही बहुत धार्मिक-आध्यात्मिक माहौल था। मेरी दादी जब कल्पवास के लिए जाती थीं, तो मैं उनके साथ जरूर जाता था। दादी अकसर अयोध्या और बनारस भी जाया करती थीं। जब अयोध्या से लौटतीं तो हमेशा दुःखी होकर कहतीं कि भगवान् को टेंट में देख बहुत कष्ट होता है। उनके लिए एक मंदिर तक नहीं है। 1990 के दशक में जब रामजन्मभूमि का आंदोलन निर्णायक लड़ाई की तरफ बढ़ रहा था, तब मेरी दादी और माँ ने मुझे रामकाज के लिए हनुमानगढ़ी भेज दिया। वे चाहती थीं कि मैं

अयोध्या में रहकर भगवान् की सेवा करूँ।

'आठवीं की पढ़ाई के बाद परिवार के आदेश पर मैं अयोध्या के हनुमानगढ़ी चला आया। यहाँ महंत हरिहर दास पहलवान के आश्रम में रहकर पहलवानी सीखी और शिक्षा-दीक्षा ली। यहीं रामचरितमानस और तमाम वेद-पुराणों का अध्ययन किया और फिर नागा साधु बन गया। हालाँकि साधु बनने के बाद भी मेरा अध्ययन जारी रहा।

'हनुमानगढ़ी आने के बाद मैंने श्रीरामजन्मभूमि के मर्म और इस लड़ाई को और गहराई से जाना। मेरे गुरु और परिवार वाले चाहते थे कि कोई अपना रामलला का केस लड़े और कोर्ट में पैरवी करे। इसके लिए उन्होंने मुझे चुना। मैंने साल 2011 में कानपुर से लॉ की पढ़ाई की। इसके बाद श्रीरामजन्मभूमि विवाद में श्री महंत धर्मदास निर्वाणी अखाड़ा की तरफ से रेस्पॉन्डेंट नंबर 14 बनकर कोर्ट में पेश हुआ।

'मैं जब भी भगवान् राम को टेंट में देखता था तो मेरी आँखों से आँसू निकल पड़ते थे। अब सदियों की लड़ाई के बाद भगवान् अपने मंदिर में विराज रहे हैं। ऐसा लगता है जैसे मेरी कानून की पढ़ाई सार्थक हो गई हो। मैं भले ही काले कोट में दिखता हूँ, लेकिन अब भी नागा साधु ही हूँ और इस नियम-परंपरा का पालन करता हूँ।'

यह पढ़कर रूमी हैरान रह गई।

"एक नागा साधु ने केस लड़ा रामजन्मभूमि के लिए!" शाम को जब माँ-पापा के साथ वह चाय पी रही थी तो उसने कहा।

यह सुनकर वह भी अचंभित हुए।

"तुम उन्हें फोन कर सकती हो और जानकारी मिल जाएगी उनके बारे में," पापा ने सुझाया।

"गुड आइडिया पापा! नंबर तो नेट पर मिल जाएगा।" रूमी अपने कमरे की ओर दौड़ी।

नंबर तो मिल गया, लेकिन करुणेश शुक्ला से संपर्क होने में समय लगा। पहले रूमी से ही कई सवाल पूछे गए और आखिर में संतुष्ट होने के बाद करुणेश शुक्ला फोन पर आए।

"सॉरी। आपको कई लोगों को उत्तर देना पड़ा। असल में हम नागा साधुओं को काफी नियमों का पालन करना पड़ता है। पूछिए, क्या जानना चाहती हैं?"

"काले कोट में नागा साधु! कभी किसी ने कुछ कहा नहीं?"

"भगवान् की कृपा है। कई लोग पूछते हैं कि आप नागा साधु से वकील कैसे! मेरा जवाब हमेशा यही रहता है कि भगवान् जैसा चाहते हैं, मैं वैसा ही हूँ।"

"आप नागा साधु क्यों बने?"

"मेरा पूरा परिवार बस्ती का रहने वाला है। ब्राह्मण परिवार होने की वजह से हमारे घर में बहुत ज्यादा पूजा-पाठ होता है। मैं भी बचपन से पूजा-पाठ में शामिल होता था। मेरी माँ चाहती थीं कि घर का कोई सदस्य अयोध्या जाकर भगवान् राम की सेवा में लग जाए। इसके लिए उन्होंने मुझे चुना। माँ के आदेश का पालन करते हुए मैं अयोध्या चला गया। वहाँ हनुमानगढ़ी में ही रहता, पूजा-पाठ करता और फिर दीक्षा ली। महंत हरिशंकर दास पहलवान के आश्रम में रहकर पहलवानी, रामचरितमानस और वेदांत का गहन अध्ययन किया। इसके साथ ही नागा साधु बन गया।"

“नागा साधु होकर वकालत की पढ़ाई की? क्यों? क्या किसी ने रोका नहीं?”

“घरवाले चाहते थे कि मैं राम की सेवा करूँ। तो ऐसे ही सेवा करने का मौका मिल गया। रोका किसी ने नहीं क्योंकि मैं धर्मरक्षा के पथ पर था और नागा साधु का कर्तव्य ही है धर्म रक्षा करना।”

रूमी ने फोन रख दिया था क्योंकि करुणेश शुक्ला ने कहा था कि अभी उन्हें ध्यान में बैठना है।

रूमी ने निष्कर्ष में लिखा, ‘केवल कुछ भाग्यशाली लोग ही नागा साधु बनते हैं। सबसे मजबूत प्रतिबद्धता एक नागा बनाती है। नागा स्थिति हासिल करने की प्रक्रिया बहुत कठिन है और अभ्यास इतना कठिन है कि इसकी तुलना दुनिया भर की किसी भी सेना की सबसे कठिन तैयारियों से नहीं की जा सकती। दुनिया भर में सेना का प्रशिक्षण नागा साधुओं के प्रशिक्षण और योग प्रक्रिया से प्रेरित है, लेकिन फिर भी इसकी तुलना उन असहनीय कष्टदायक परिस्थितियों से नहीं की जा सकती, जिनसे एक नागा साधु को गुजरना पड़ता है।

‘नागा साधु अपने आत्मसंयम को परखने के लिए गहरे दर्द और थका देने वाली प्रक्रिया से गुजरते हैं। वे अपनी सीमाओं को चरम तक परखते हुए अपनी तपस्या को बढ़ाते हैं। नागा साधु दुनिया के जीवित महामानव हैं।

‘भारत के हिंदू प्राचीन नागा साधुओं और श्री आदि शंकराचार्य के बहुत आभारी हैं। हमें नागा साधुओं का सम्मान करना चाहिए।’

“कीरत की डायरी उज्जैन में महामंडलेश्वर गिरिनाथजी को लौटानी है,” रूमी ने अपना रिसर्च पेपर प्रो. वाचस्पति को सबमिट करने के बाद कहा।

“बताओ, कब चलना है उज्जैन?”

“जब की टिकट मिल जाए।”

लौट आए थे वे दोनों वापस कीरत की अमानत लौटाकर। उन्होंने न सिर्फ बहुत कुछ जाना था नागा साधुओं के बारे में, वरन् जीवन को भी और बेहतर ढंग से समझ पाए थे। बिना सोचे-समझे हमारा समाज जो किसी के बारे में भी एक धारणा बना लेता है, उसे दूर करना आसान नहीं होता। लेकिन रूमी को विश्वास था कि उसका पेपर अवश्य ही नागा साधुओं के बारे में राय बदल देगा और समाज उनका सम्मान करने लगेगा।

ooo